ग्रामीण भारत में विषमता के विशेष संदर्भ में सामाजिक स्तरीकरण में हो रहे परिवर्तन के प्रतिमान

(बिहार राज्य के दो ग्रामों के विशेष संदर्भ में)

2002

डी0 फिल0 उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध प्रबन्ध

शोध निर्देशक

प्रो0 राजशेखर
मोतीलाल नेहरू रीजनल इन्स्टीट्यूट
ऑफ बिजनेस एडमिनिस्ट्रेशन
इलाहाबाद विश्वविद्यालय

शोध कर्ता

लक्ष्मण प्रसाद गुप्त
एम0ए0(समाजशास्त्र)
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद

सामाजिक मानवशास्त्र एवं समाजशास्त्र विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
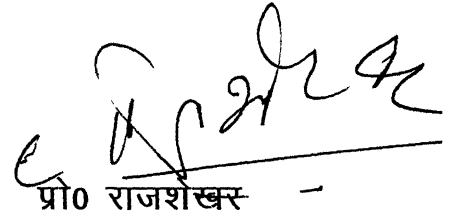
प्रमाण–पत्र

यह प्रमाणित किया जाता है कि **श्री लक्ष्मण प्रसाद गुप्त** ने इस शोध प्रबंध की विषय-वस्तु के लिए तथ्यों का संकलन स्वयं ही मेरे निर्देशन में पूर्ण किया है।

मेरी सर्वोत्तम जानकारी के अनुसार यह शोध-प्रबंध पूर्णतः क्षेत्रीय अध्ययन पर आधारित एक मौलिक कृति है एवं इस शोध प्रबन्ध में दिए गए तथ्य किसी अन्य के द्वारा किए गए शोध कार्य पर आधारित नहीं है।

यह पुनः प्रमाणित किया जाता है कि अनुसंधानकर्ता का चरित्र एवं आचरण इस **डी० फिल० उपाधि** को प्राप्त करने के लिए पूर्ण उपयुक्त एवं संतोषजनक है।

दिनांक: 8-03-2002

प्रो० राजशेखर
मोतीलाल नेहरू रीजनल इन्स्टीट्यूट
ऑफ बिजनेस एडमिनिस्ट्रेशन
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद

समर्पित

गुरुदेव महाप्रभु

एवं

माता-पिता

आभार

सर्वप्रथम मैं अपने निर्देशक प्रो0 राजशेखर के प्रति सहृदय आभारी हूँ जिन्होंने शोध विषय के चयन से लेकर प्रस्तुत शोध प्रबन्ध की तैयारी व क्षेत्रीय प्रतिवेदन लेखन कार्य में अपना सहयोग व कुशल दिशा निर्देश प्रदान किये।

तदोपरान्त मैं अपने विभागाध्यक्ष व डीन कला संकाय प्रो0 ए0 आर0 एन0 श्रीवास्तव एवं डा0 विजय शंकर सहाय (रीडर), मानव विज्ञान विभाग के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने सहयोग व सुझाव देकर इस शोध प्रबन्ध की प्रामाणिकता में वृद्धि की।

मैं मानव विज्ञान विभाग के शोध छात्र आनन्द कुमार उपाध्याय व समस्त स्टॉफ को विशेष धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने अपना समय देकर मेरे कार्यों में सहयोग किया।

मैं अपने अध्ययन क्षेत्र के उन सभी लोगों को धन्यवाद एवं आभार ज्ञापन करता हूँ, जिनके सहयोग से क्षेत्रीय कार्य सम्बन्धी सूचनायें प्राप्त हो सकी।

अंततः मैं शोध प्रबन्ध के टंककगण श्री महेश कुमार मौर्य एवं उमाशंकर पटेल को भी धन्यवाद देना चाहूँगा जिन्होंने कम्प्यूटर टंकण के माध्यम से शोध-प्रबन्ध को अन्तिम रूप प्रदान किया, साथ ही साथ उन सभी लोगों को धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष ढंग से इस शोध प्रबन्ध को पूर्ण करने में सहयोग दिया।

लक्ष्मण प्रसाद गुप्त

(लक्ष्मण प्रसाद गुप्त)

विषय–सूची

तालिका सूची

अध्ययन की पृष्ठभूमि

अध्ययन की पृष्ठभूमि

वर्तमान अध्ययन भारतीय ग्रामीण समाज विशेष रूप से बिहार राज्य के दो ग्रामों **नयाभोजपुर** और **काजीपुर** में विषमता के विशेष सन्दर्भ में सामाजिक स्तरीकरण के कुछ पहलुओं तथा उनमें हो रहे परिवर्तनों से सम्बन्धित है।

प्राचीन काल से ही मानव समाज में विषमता व्याप्त रही है। ऐसा कोई समाज नहीं रहा है जहां किसी न किसी रूप में विषमता विद्यमान न हो। आज की भांति सामाजिक विषमता का चाहे गहन रूप न रहा हो, फिर भी लिंग, आयु, नातेदारी, शक्ति और सम्पत्ति के आधार पर समाज में उच्चता और निम्नता का भेद अवश्य रहा है।यद्यपि विषमता सभी समाजों की विशेषता रही है, तथापि एक समूह से दूसरे समूह में, एक संस्कृति से दूसरी संस्कृति में विषमता के स्वरूप व प्रकार में अन्तर पाया जाता है। मानव सभ्यता तथा सामाजिक विकास के साथ-साथ सामाजिक विषमता और भी बढ़ती गयी तथा मानव समाज अनेक उच्च और निम्न स्तरों में विभाजित होता गया।

सामाजिक विषमता समाज द्वारा निर्मित विषमता को इंगित करती है। विषमता के अध्ययन का मुख्य सम्बन्ध प्रत्येक समाज में पाई जाने वाली वर्ग, पद तथा शक्ति जैसी कुछ मौलिक संरचनात्मक चीजों से है। विषमता एक सामाजिक तथ्य है। इन्हें सामाजिक तथ्य इसलिए कहा गया है कि व्यक्ति विशेष इस संदर्भ में क्या सोचता है तथा क्या करता है, इससे इसका अस्तित्व स्वतंत्र है और साथ ही व्यक्तियों की इच्छानुसार तथा खुशी से इनमें परिवर्तन किया जाना संभव नहीं है।

विषमता एक सामाजिक तथ्य है, इस कथन का एक प्रमुख आशय यह है कि विषमता अथवा स्तरीकरण का स्वरूप एक समाज से दूसरे समाज में भिन्न होता है। अमेरिकी समाज की वर्ग संरचना, स्कॅंडिनेविया से भिन्न है। सोवियत रूस में शक्ति का वितरण वैसा नहीं है जैसा इंग्लैंड में है। थाइलैंड की तुलना में भारत में पद का वर्गीकरण भिन्न है। इस प्रकार विभिन्न समाजों में विषमता व स्तरीकरण के स्वरूप में पाई जाने वाली समानताओं तथा विभिन्नताओं का क्रमिक और व्यवस्थित अध्ययन करना समाजविज्ञानियों का महत्वपूर्ण कार्य रहा है। विषमता एक सामाजिक तथ्य है, इस विचार क़ा दूसरा आशय यह है कि स्तरीकरण के स्वरूप में समयानुसार परिवर्तन होते रहते हैं। अमेरिका की वर्ग संरचना आज वही नहीं है जो वहां गृहयुद्ध के समय थी। सोवियत रूस में भी क्रांति के उपरांत शक्ति वितरण में आमूल परिवर्तन हुए हैं। भारत में भी पद का वर्गीकरण अपरिवर्तनीय नहीं रहा है **(आन्द्रे बेतई, 1972)**।

यद्यपि विषमता में व्यक्तियों के इच्छानुसार परिवर्तन नहीं हो सकता, क्योंकि यह एक सामाजिक तथ्य है। किन्तु इसी अर्थ में, यह सामूहिक अनुभवो की उत्पत्ति है और ज्यों ज्यों इन अनुभवों में परिवर्तन होगा, सहज ही विषमता के स्वरूप में भी परिवर्तन

होने की संभावना होगी। सभी समाजशास्त्री इस बात पर एकमत है कि विषमता की संरचना में मनमाने व्यक्तिगत नियमों से प्रभावकारी परिवर्तन नहीं लाया जा सकता। पर दूसरी ओर वे इस प्रश्न पर एकमत नहीं हैं कि विषमता के स्वरूपों में सचेतन मानवीय हस्तक्षेप (जैसे प्रशासनिक या राजनैतिक उपायों द्वारा) किस हद तक परिवर्तन को दिशा निर्देश देना संभव या वांछनीय है।

सामाजिक विषमता के विभिन्न पहलुओं पर विद्वानों द्वारा बल दिया गया है। प्राय: आर्थिक कारकों में सम्पत्ति, आय, व्यवसाय आदि पर जोर दिया जाता है। मार्क्स ने सम्पत्ति को सामाजिक विषमता को निर्णायक कारक माना है। दूसरे विद्वानों ने शक्ति एवं सत्ता के वितरण में निहित विषमताओं पर जोर दिया है। चौदहवीं शताब्दी के अरबी इतिहासकार **इब्न खाल्दुन** ने कहा है 'शक्ति का स्वामित्व ही समृद्धि का स्रोत है।' तथाकथित विशिष्ट-वर्ग सिद्धांतवादियों ने भी जिन्होंने मुख्यत: वर्तमान शताब्दी के प्रारंभ में लिखा था, राजनीतिक कारकों को प्राथमिक महत्व दिया है **(डब्ल्यू.जी.रून्सीमैन,1963)**। इन लोगों की दृष्टि में मौलिक विभाजन घनी और गरीब अथवा सम्पत्तिवान और सम्पत्तिहीनों के बीच नहीं वरन विशिष्ट वर्ग तथा जनता अथवा शासित तथा शासक के बीच है।

आर्थिक तथा राजनीतिक कारकों के अतिरिक्त एक और महत्वपूर्ण कारक है, जिसे पद कहा जाता है। पद का सम्बन्ध सम्पत्ति एवं शक्ति से नहीं वरन आदर एवं प्रतिष्ठा से है। पद का निर्णय विभिन्न समाजों में भिन्न भिन्न तरह से होता है। जैसे परम्परागत भारतीय समाज में यह संस्कार शुद्धता से होता था तथा मध्यकालीन यूरोप में प्रतिष्ठा तथा शौर्य से या फिर प्राचीन चीन की तरह विद्वतापूर्ण उपलब्धि से। आधुनिक औद्योगिक समाजों में पद की अपनी अलग अवधारणाएं है, यद्यपि यहां पद का वर्गीकरण पहले की समाजों की अपेक्षा कम स्पष्ट है।

सामाजिक विषमता का एक विशिष्ट स्वरूप **सामाजिक स्तरीकरण** है। यह जरूरी नहीं है कि जहां सामाजिक विषमता पायी जाती हो वहां सामाजिक स्तरीकरण पायी जाये, लेकिन जहां सामाजिक स्तरीकरण पायी जाती हो, वहां अनिवार्य रूप में सामाजिक विषमता विद्यमान रहेगी। जनजातीय समाज में सामाजिक विषमता पायी जाती है, लेकिन इनमें सामाजिक स्तरीकरण नहीं पाया जाता है, क्योंकि जनजातीय समाज दो या दो से अधिक असमान स्तरों में विभाजित नहीं होता। अत: सामाजिक स्तरीकरण अपने मूल रूप में सामाजिक विषमता का ही परिणाम होती है।

यह सार्वभौमिक सत्य है कि मानव समाज का इतिहास अपने मूल रूप में सामाजिक विषमता का ही इतिहास रहा है, जिसका अस्तित्व किसी न कसी रूप में मानव समाज में आदिकाल से रहा है। **कार्ल मार्क्स(1848)** ने तो पूरी मानव समाज के इतिहास को ही वर्ग संघर्ष का इतिहास मानकर व्याख्या की है जिसके मूल में यह विषमता ही व्याप्त है। यह विषमता समाज के सदस्यों को ऊंच-नीच के क्रम में दो वर्गो में बाँट देती है, एक तो साधन-सम्पन्न वर्ग तथा दूसरा साधन-हीन वर्ग।

कुछ विद्वानों ने इसी सामाजिक विषमता को दूसरे परिप्रेक्ष्य में रखकर व्याख्या करने का प्रयत्न किया है। प्रकार्यवादी **किंग्सले डेविस** व **विल्वर्ट मूर (1945)** का मत है कि सामाजिक आवश्यकताओं में अंतर ही सामाजिक विषमता को जन्म देती है। इन लोगों की मान्यता है कि प्रत्येक ज्ञात समाजों में स्तरीकरण का अस्तित्व पाया जाता है। इन लोगों ने प्रकार्यवादी दृष्टिकोण से यह व्याख्या करने का प्रयास किया है कि **सार्वभौमिक आवश्यकता ही किसी सामाजिक व्यवस्था में स्तरीकरण उत्पन्न करती है।** सामाजिक स्तरीकरण एक प्रकार्यात्मक आवश्यकता है। समाज की प्रकार्यात्मक आवश्यकताओं को पूरा करने की योग्यता तथा क्षमता के आधार पर लोगों में कार्यो का बंटवारा किया जाना जरूरी होता है, अर्थात जो कार्य ज्यादा महत्वपूर्ण होता है, उसे योग्य तथा क्षमतावान लोगों को दिया जाता है, सबसे महत्वपूर्ण कार्य के लिए बुद्धि और योग्यता के अतिरिक्त परिश्रम, त्याग एवं साधना की भी जरूरत पड़ती है। इस प्रकार प्रत्येक समाज योग्यता तथा गुण के आधार पर व्यक्तियों को ऊंची और नीची परिस्थितियों में विभाजित कर देता है ताकि महत्वपूर्ण और कठिन कार्यो को पूरा करने के लिए अधिक योग्य और कुशल व्यक्ति उपलब्ध हो सके।

डेविस व मूर का यह भी कहना है कि जो कार्य समाज के लिए अधिक महत्वपूर्ण है तथा जिनको करने के लिए बुद्धि की जरूरत होती है, वैसे कार्यो के पदों के महत्व और उनको प्राप्त करने वाले व्यक्तियों की लालसा को देखकर समाज कोई न कोई ऐसा तरीका अपनाता है जिसके द्वारा कार्यो के उनके महत्व के आधार पर आंका जा सके। इसके लिए समाज पुरस्कार की व्याख्या करता है ताकि समाज के सदस्य उन महत्वपूर्ण कार्यो के सम्पादन के लिए आवश्यक योग्यताओं को अर्जन कर सके। किग्सले डेविस ने इन पुरस्कारों में तीन तरह की पुरस्कारों 1. आजीविका तथा आराम सम्बन्धी पुरस्कार 2. आनंद तथा उल्लास में वृद्धि करने वाले पुरस्कार तथा 3. आत्मसम्मान तथा अहम विस्तार सम्बन्धी पुरस्कार की चर्चा की है। पहले प्रकार के पुरस्कारों का सम्बन्ध भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति व आरामदायक जिंदगी बिताने में सहायक आर्थिक सुविधाओं से, दूसरे प्रकार के पुरस्कारों का सम्बन्ध आनंद तथा उल्लास में वृद्धि करने वाले पुरस्कारों से तथा, तीसरे प्रकार के पुरस्कारों के अन्तर्गत भारतरत्न, पद्मविभूषण

इत्यादि सम्मान सूचक पदवियाँ आती हैं। इन पुरस्कारों की असमानता (विषमता) ही पदों की स्थिति को उच्च या निम्न बनाती है, अर्थात पदों के आधार पर पुरस्कारों का वितरण सामाजिक स्तरीकरण को जन्म देता है। प्रकार्यवादी विचारकों ने सामाजिक स्तरीकरण को सामाजिक व्यवस्था की आवश्यकता का परिणाम मानते हैं। विभिन्न सामाजिक कार्यों का संपादन करने के लिए आवश्यक योग्यता वाले लोगों का उपलब्ध होना एक महत्वपूर्ण सामाजिक आवश्यकता है जिसकी पूर्ति करना सामाजिक स्तरीकरण का विशेष प्रकार्य है। अत: सामाजिक स्तरीकरण एक प्रकार्यात्मक आवश्यकता है, ऐसा प्रकार्यवादियों का विचार है।

जहां प्रकार्यवादी, सामाजिक स्तरीकरण को समाज की प्रकार्यात्मक आवश्यकता मानते हैं, वही मार्क्सवादी सामाजिक स्तरीकरण को समाज में विघटन पैदा करने वाले कारक के रूप में देखते हैं। प्रकार्यवादी मानते हैं कि स्तरीकरण समाज में एकीकरण लाता है, जबकि मार्क्सवादी मानते है कि सामाजिक स्तरीकरण एकीकरण करने वाला न होकर समाज में विघटन पैदा करने वाला होता है।

मार्क्स के अनुसार, सामाजिक स्तरीकरण का मुख्य आधार वर्ग संरचना है। इनका मानना है कि इतिहास के प्रत्येक काल में वर्गो का अस्तित्व रहा है। प्राचीन कृषि व्यवस्था व नगर राज्यों में विशिष्ट व सामान्य वर्ग थे, सामंतवादी संरचना में भूस्वामी अर्द्धदास व कारीगरों का वर्ग था। वर्तमान समय (पूंजीवादी युग) में पूंजीवादी व सर्वहारा दो वर्ग है, जो स्तरीकरण के आधार हैं। इन सभी वर्गो के आर्थिक हित परस्पर विरोधी होते हैं, जिसके कारण इनमें वर्ग संघर्ष पाया जाता है। वर्ग संघर्ष सम्पत्ति सम्बन्ध (प्रॉपर्टी रिलेशन) के पैटर्न के विरोध में होता है। स्तरीकरण के निर्धारण करने वाले इन वर्गो का जन्म कैसे होता है या इनका विकास कैसे होता है, इसका उत्तर मार्क्स ने समाज की उत्पादन व्यवस्था में लगे व्यक्तियों के कार्य के आधार पर स्पष्ट किया है। मार्क्स के अनुसार वर्गो का विकास विभिन्न स्थितियों अथवा भूमिकाओं के आधार पर होता है जिनको व्यक्ति समाज की उत्पादन व्यवस्था में प्राप्त करता है। इनके विचार में वर्गो के निर्माण में उत्पादन की विधियों (मोड ऑफ प्रोडक्शन) का विशेष महत्व है, जैसे, कृषि, दस्तकारी अथवा प्रौद्योगिकी तथा साथ ही साथ उत्पादन के सम्बन्धों का भी विशेष महत्व है जो किसी आर्थिक संगठन में परिस्थिति के मुख्य स्तरों को बताते हैं, जैसे- कृषि जगत में, भूमिपति तथा खेतिहर अथवा कास्तकार और दास, दो परिस्थितियां होती हैं। दस्तकारी अर्थव्यवस्था में हम गिल्ड स्वामी और प्रशिक्षणार्थी अथवा साहस तथा घरेलू श्रमिक तथा औद्योगिक व्यवस्था में पूंजीपति और श्रमिक, दो स्तर देखने को मिलते हैं।

उत्पादन में लगे व्यक्ति मार्क्स के अनुसार परस्पर विरोधी स्वार्थो से बंधे रहते हैं क्योंकि इनके हित परस्पर अलग अलग होते हैं। पूंजीवादी औद्योगिक व्यवस्था में पूंजीपति (जिसे मार्क्स बुर्जुआ वर्ग कहते हैं), जिसका उत्पादन के साधनों पर स्वामित्व होता है तथा अधिक से अधिक लाभ कमाना चाहता है और मजदूर (सर्वहारा) जिसके पास अपनी जीविका के साधन के लिए श्रम के अलावा कुछ नहीं होता जिसकी अपनी मेहनत होती है। पूंजीपति, मजदूरों को कम से कम श्रम का कीमत देना चाहता है। इस कारण मजदूर पूंजीपति का विरोध करते है लेकिन पूंजीपति वर्ग जिसके पास आर्थिक शक्ति तथा साथ ही साथ सरकारी तंत्र में भी हाथ होता है, इस विरोध का आसानी से दमन कर देते हैं।

स्तरीकरण की इस व्यवस्था में एक महत्वपूर्ण विचार यह है कि मजदूर एक वर्ग का निर्माण करता है। मजदूर यह भी जानता है कि एक श्रमिक के रूप में ही नहीं बल्कि समूह (वर्ग) के रूप में उसका अस्तित्व है, जिसका एक सामूहिक (वर्गीय) हित है जो पूंजीपति के हित से भिन्न ही नहीं बल्कि विपरीत है। फिर भी मार्क्स इसे दो वस्तुनिष्ठ आधारों पर वर्ग मानता है। **प्रथम**, उत्पादन के साधनों में उनका सामान्य आर्थिक हित होना तथा **दूसरा**, राज्य शक्ति की अपेक्षा उनमें अपेक्षाकृत शक्तिविहीनता का समान रूप में पाया जाना। वर्ग अस्तित्व का वस्तुनिष्ठता का यह विचार स्तरीकरण के अध्ययन में मार्क्सवादी उपागम का एक महत्वपूर्ण विशेषता है। मार्क्सवादी उपागम आर्थिक कारक को महत्व देने के कारण भी महत्वपूर्ण है।

मार्क्स का कहना है कि आर्थिक कारक ही वर्ग का आधार है और अन्य सभी कारक इसी से प्रभावित होते हैं, यथा धर्म, कला, साहित्य, संस्कृति सब इस बात पर निर्भर करते हैं कि किसी समाज में आर्थिक व्यवस्था क्या है। इसी आर्थिक व्यवस्था को मार्क्सवादी उपागम में अधोसंरचना (इन्फ्रास्ट्रक्चर) कहा गया है, जो वास्तविक नींव है, जिस पर धर्म, कला, संस्कृति अर्थात अधिसंरचना (सुपर स्ट्रक्चर) आधारित होता है।

मार्क्सवादी उपागम में स्तरीकरण के अध्ययन हेतु तीन अन्य धारणाएं-**वर्ग चेतना**, **वर्ग एकता** तथा **वर्ग संघर्ष** महत्वपूर्ण है। वर्ग चेतना का अर्थ एक वर्ग के सदस्यों में इस भावना का होना कि वे खास वर्ग के सदस्य हैं, उसके हित अपने वर्ग के लोगों जैसे हैं,और दूसरे वर्ग वाले उसके वर्ग को कमजोर करना चाहते हैं। मार्क्स के अनुसार जब तक वर्ग के सदस्यों में वर्गीय चेतना पैदा नहीं होती तब तक वह वर्ग वस्तुनिष्ठ वर्ग ही होता है परंतु जब चेतना विकसित हो जाती है तब वर्ग अपने लिए वर्ग (क्लास फार इटसेल्फ) हो जाता है। वर्ग चेतना सभी युगों, सभी वर्गो में समान नहीं होती है।

उदाहरण के लिए पूँजीवादी युग में मजदूरों में चूंकि समानता और एकता होती है। इसलिए इसमें वास्तविक वर्ग चेतना पायी जाती है।

वर्ग एकता से तात्पर्य उस सीमा से है जिस सीमा तक मजदूर अपने सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक उदेश्यों को प्राप्त करने के लिए एक है।

वर्ग-संघर्ष वास्तव में आधुनिक युग की देन है। पुराने जमाने में जब कि समाज में व्यावसायिक और भूमि से सम्बन्धित वर्गों की प्रधानता थी तो बहुधा विभिन्न समाज-समूहों के स्वार्थ आपस में टकराते थे और एक की तुलना में दूसरा आर्थिक और राजनैतिक प्रभुत्व प्राप्त करने की कोशिश करता था। लेकिन वे ऐसा वर्ग-संघर्ष की प्रवृत्ति के कारण करते थे, ऐसा नहीं कहा जा सकता। ये द्वन्द्व बहुधा स्वार्थो के प्रश्न को लेकर होते थे और वे इसी रूप में सीमित थे **(इन्साइक्लोपीडिया ऑफ सोशल साइन्सेज, खण्ड 3–4, पृष्ठ 538)।**

वर्ग संघर्ष की प्रवृत्तियों की शुरूआत को हम फ्रांस की क्रांति से जोड़ सकते है। वहीं यह सबसे पहले अपने असली और आधुनिक रूप में प्रकट हुआ, इसके बाद इसका पोषण और प्रतिपादन मार्क्सवादी विचारधारा के अन्तर्गत किया गया। ऐसा इसलिये हुआ कि पूँजीवादी समाज-व्यवस्था में विभिन्न वर्गों के स्वार्थ आपस में टकराने लगे। पूँजीवादी समाज व्यवस्था की यह विशेषता है कि इसमें उद्योगपति और पूँजीपति अधिकाधिक पूँजी और मुनाफा कमाना चाहते हैं और इस क्रम में निम्नवर्ग का निरंतर शोषण करते रहने की नीति अपनाते हैं, जिसका मजदूरों की ओर से विरोध होना अवश्यम्भावी है। इस प्रकार पूँजीवादी समाज-व्यवस्था में वर्ग संघर्ष के कारण पूरी तरह वर्तमान हैं। इसका श्रेय भी इसी व्यवस्था को है कि यह मजदूरों को एक जगह इकट्ठा कर संगठित होने और अपने अधिकारों के प्रति सचेत होने का अवसर देती है। इस प्रकार वर्ग-संघर्ष अनिवार्य हो जाता है।

वर्ग-संघर्ष केवल सैद्धांतिक विचारधारा न होकर व्यवहार की चीज है। कोई वर्ग यदि वर्ग-संघर्ष को सिद्धान्त: स्वीकार करता है पर व्यवहार में उसका उपयोग नहीं करता तो, इसके सिद्धान्तत: माने जाने का कोई लाभ नहीं है। इसका व्यावहारिक रूप वर्ग-संगठनों के माध्यम से दिया जाता है। इसलिये वर्ग-संघर्ष अनिवार्य रूप से वर्ग-संगठन पर निर्भर करता है।

वर्ग-संघर्ष के सिद्धान्तों और प्रक्रियाओं का प्रभाव हमारे जीवन-प्रणाली पर भी पड़ता है। वर्ग स्वार्थ क्रमश: ऐसी व्यवस्था में परिणति होते हैं जो पूरे जीवन को प्रभावित करने लगते हैं। तब वे राजनीतिक, धार्मिक और यहाँ तक कि वैज्ञानिक

अभिरूचियों से भी अन्तर्गथित हो जाते हैं। जब वर्ग-स्वार्थ हमारे जीवन के विविध क्षेत्रों को इस प्रकार प्रभावित कर सकते हैं तो वर्ग-संघर्ष की स्थिति तो और आगे बढ़ी हुई होती है। वर्ग-स्वार्थो की रक्षा के लिये जब हम कटिबद्ध हो जाते हैं, तो वही वर्ग-संघर्ष की स्थिति होती है। इस स्थिति का जीवन-मानों, प्रणालियों आदि पर प्रभाव होना स्वाभाविक है।

वर्ग-संघर्ष का अन्ततः राजनीतिक संघर्ष में परिणत हो जाना महज स्वाभाविक है। चूँकि शासक-वर्ग की शक्ति बराबर राज्य-संस्था में केन्द्रित होती है इसलिये शोषित समुदाय का उद्देश्य प्रत्यक्ष रूप से राज्य-तंत्र के विरूद्ध होता है। इस प्रकार प्रत्येक वर्ग-संघर्ष राजनीतिक संघर्ष है, जिसका उद्देश्य स्थापित समाज-व्यवस्था को खत्म कर एक नई समाज-व्यवस्था की स्थापना करना है। वर्ग-संघर्ष की अंतिम परिणति राजनीतिक क्रांति ही है।

आज की दुनिया में जबकि अन्तर्राष्ट्रीय वित्त, व्यापार और उद्योग के क्षेत्र विकसित होते जा रहे हैं तो वर्ग-संघर्ष का अन्तर्राष्ट्रीय हो जाना स्वाभाविक है। ऐसी दशा में वर्गो की सीमा-रेखाएँ किसी एक देश तक सीमित नहीं रहतीं। इसीलिये आज निम्नवर्ग शब्द से संसार के सभी निम्नवर्गो का बोध कराता है और उनका संघर्ष केवल अपने देश के धनीवर्ग से न होकर संसार के सभी देशों के पूँजीपतियों और उद्योगपतियों से है।

वर्ग-संघर्ष समाजवादी दर्शन का अंतिम लक्ष्य नहीं है, साध्य नहीं है, साधन है। इसलिये जो इसे समाजवाद का असली उद्देश्य या लक्ष्य मानते हैं वे भूल करते हैं। इसमें व्यक्तिगत द्वेष और शारीरिक दुश्मनी के लिये स्थान नहीं है। यह तो दो भिन्न-भिन्न हितों की लड़ाई है, व्यवस्था का संघर्ष है। शोषक वर्ग के विरूद्ध शोषित वर्ग का मोर्चा किसी की जान लेने का उपदेश नहीं देता। इसे अमुक सेठ या साहूकार से व्यक्तिगत घृणा नहीं वरन् उस प्रणाली या परिपाटी से दुश्मनी है जिसका कि वह एक प्रतिनिधि है। यह सामाजिक आर्थिक विषमता जिस दिन खत्म हो जायगी वर्ग-संघर्ष उस दिन न रहेगा और इसके साथ घृणा या शत्रुता का भी कोई स्थान न रहेगा। मार्क्स भी वर्ग-संघर्ष को वर्ग के साथ उत्पन्न और वर्ग के साथ नष्ट होने वाला मानता है।

वर्ग-संघर्ष का अर्थ है अचेतन व चेतन रूप में दोनों अवस्थाओं में शोषण के प्रति जागरूकता व उसके लिए तब तक संघर्ष करना जब तक कि उत्पादन के साधनों पर मजदूरों का अधिकार न हो जाये। मार्क्स का मानना है कि इस वर्ग संघर्ष में मजदूरों की अवश्य विजय होगी, वशर्ते कि वे धर्म जैसी व्यर्थ की चीजों को भूल जाये,

क्योंकि मार्क्स धर्म को जनता के लिए अफीम के समान मानता है। दूसरी बात, मजदूर पूँजीपतियों से किसी प्रकार का समझौता न करे और ऐसी किसी मिथ्या चेतना के शिकार न हो जो उन्हें यह मानने को विवश कर दे कि पूँजीपतियों को हटाये बिना भी वे अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं।

मार्क्स के विचारों के दुर्बलताओं से परिचित होकर **मैक्स वेबर(1968)** ने अपने स्तरीकरण सिद्धान्त को मार्क्स के सिद्धान्त को विकल्प के रूप में प्रस्तुत किया है। मैक्स वेबर का सिद्धान्त इस मान्यता पर आधारित है कि सामाजिक स्तरीकरण का मुख्य आधार समाज में शक्ति का असमान वितरण है। शक्ति से यहां वेबर का तात्पर्य 'संस्थागत शक्ति' से है, जो प्रभावशाली ढंग से मानवीय क्रिया का नियंत्रण करता है, जिनका वैध और नियमित आधार होता है। समाज में शक्ति का असमान वितरण व्यक्तियों में उच्च और निम्न प्रस्थिति को जन्म देता है, जो स्तरीकरण का आधार है। दूसरे प्रकार से यह कहा जा सकता है कि किसी समाज में सामाजिक स्तरीकरण का निर्धारण विभिन्न वर्गों में शक्ति के असमान वितरण के अनुसार होता है। अधिक या कम शक्ति एक वर्ग के समाज व्यवस्था में उच्च या निम्न प्रस्थिति प्रदान करती है और उसी के अनुसार सामाजिक स्तरीकरण का स्वरूप निर्धारित होता है। अतः सामाजिक स्तरीकरण की अवधारणा में शक्ति की अवधारणा आधारभूत है क्योंकि इसी के अनुरूप व्यक्ति को सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त होती है।

वेबर के अनुसार शक्ति के तीन आयाम- आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक- होते हैं। ये तीनों एक दूसरे को प्रभावित करते हैं तथा इनमें शक्तियों का असमान वितरण होता है, जिसके कारण भिन्न-भिन्न के प्रकार स्तरीकरण का जन्म होता है। आर्थिक क्षेत्र में **वर्ग** सामाजिक क्षेत्र में **प्रस्थिति समूह** तथा राजनैतिक क्षेत्र में **राजनैतिक दल** का उदय होता है। मार्क्स की तरह वेबर का भी कहना है कि सम्पत्ति के ऊपर नियंत्रण व्यक्ति अथवा वर्ग के जीवन अवसर के निर्धारण के लिए एक महत्वपूर्ण तथ्य है। लेकिन दोनों के विचारों में मूल विरोध यह है कि जहां मार्क्स केवल आर्थिक कारक को सामाजिक स्तरीकरण के निर्धारण में महत्व देता है, वही वेबर आर्थिक कारक के अलावा 'शक्ति' और 'सम्मान' को भी महत्व देता है।

वेबर ने सम्पत्ति, शक्ति व सम्मान को तीन पृथक यद्यपि अन्तः क्रियात्मक आधार के रूप में देखा, जिससे किसी भी समाज में स्तरीकरण उत्पन्न होता है। सम्पत्ति विभेद वर्ग को उत्पन्न करता है। शक्ति विभेद राजनीतिक दलों को जन्म देता है। इस प्रकार शक्ति की अभिव्यक्ति वर्ग, प्रस्थिति और दल के रूप में होता है जो सामाजिक स्तरीकरण के आधार है **(एम.एम.ट्यूमिन,1967)**।

मैक्स वेबर के अनुसार वर्ग एक समुदाय नहीं है। एक वर्ग के अन्तर्गत वे लोग आते हैं जिनके जीवन के समान अवसर हों। ऐसे सभी लोग जिनकी जीवन शैली एक होती है प्रस्थिति समूह कहा जाता है। प्रस्थिति समूह का आधार प्रतिष्ठिा व सम्मान है। सामाजिक प्रतिष्ठा जीविका की पद्धति, जन्म, शिक्षा तथा व्यवसाय पर आधारित होती है। चूंकि समाज में सामाजिक प्रतिष्ठा का वितरण असमान होता है अतः यह असमानता ही मनुष्यों की प्रस्थिति में अंतर कर देती है। प्रस्थिति की अभिव्यक्ति स्तरीकरण के संदर्भ में विवाह, खानपान तथा आर्थिक अवसरों पर एकाधिकार के रूप में होती है। इसके साथ रूढ़ियाँ और परम्पराएं भी जुड़ी होती हैं। प्रस्थिति समूह वर्ग से इस अर्थो में भिन्न है कि वर्ग का निर्धारण आय, सम्पत्ति आर्थिक हित और श्रम बाजार की स्थिति के कारण होता है, जबकि प्रस्थिति का निर्धारण प्रतिष्ठा, विशेषाधिकार, परम्परा और आर्थिक सुविधाओं से होता है। **वर्गों का सम्बन्ध जीवन अवसर से होता है जबकि प्रस्थिति समूह का सम्बन्ध जीवन शैली से होता है।** एक प्रस्थिति समूह के लोग अपने प्रति वर्ग से कहीं ज्यादा जागरूक व सचेत होते हैं।

वर्ग व प्रस्थिति समूह के अलावा जिसकी वेबर ने, प्रमुखता दी है, यह राजनैतिक दल है। यद्यपि आर्थिक वर्ग, प्रस्थिति समूह और राजनैतिक दल तीनों ही समुदाय के अन्तर्गत शक्ति के वितरण की प्रघटनाएं हैं, फिर भी वर्गो और प्रस्थिति समूहों से राजनैतिक दल अनेक महत्वपूर्ण बातों में भिन्न होते हैं। वर्गो का आधार शक्ति है। दल सभी समुदाय में नहीं मिलता है वरन् वे वहीं उपलब्ध होते हैं, जहां युक्तिसंगत व्यवसाय मिलती है। दल का अपना कार्यक्रम होता है, दल के सदस्य होते हैं । वे अपने सदस्यों की भर्ती अपने ही दल के लोगों में से करते हैं। वेबर के अनुसार वर्ग, प्रस्थिति समूहों और दलों में घनिष्ट सम्बन्ध होता है। दल में सदस्यों को वर्ग और प्रस्थिति समूह से भी भर्ती किया जा सकता है तथा उनके हितों का भी दल प्रतिनिधित्व कर सकता है किन्तु राजनैतिक दल वर्ग या प्रस्थिति समूह दोनों से भिन्न होता है।

इस प्रकार शक्ति, सत्ता, प्रतिष्ठा व सम्पत्ति के आधार पर सामाजिक विषमता सदैव से ही सभी समाजों में पायी जाती रही है, एवं स्तरीकृत समाज का अस्तित्व बना रहा है। यद्यपि **रोजा लक्समबर्ग** से लेकर **मार्क्स** तथा **नव मार्क्सवादी** विद्वानों तक ने गैर स्तरीकृत समाज की कल्पना की थी, परन्तु यह आज तक यथार्थ का रूप नहीं ले सका है।

जब भी स्तरीकृत समाज की बात की जाती है तो मुख्य रूप से चार स्वरूप सामने आते हैं, यथा दासता, जागीरदारी या सामंती व्यवस्था, जाति व्यवस्था तथा वर्ग व्यवस्था। जब भारतीय परिप्रेक्ष्य में स्तरीकृत समाज का अध्ययन किया जाता है तो जो

विशिष्ट तत्व उभरकर सामने आता है, वह है जाति के आधार पर स्तरीकृत समाज का निर्माण।

जाति व्यवस्था

जाति व्यवस्था मूलत: एक प्रस्थिति प्रदान करती है, जो जन्म से निर्धारित होती है। यह एक ऐसी विलक्षण व्यवस्था रही है जो कि भारतीय समाज का प्रतिनिधि रही। जाति को धर्म एवं नैतिकता के साथ जोड़कर तथा जन्म की अवधारणा से आबद्ध करके 2000 वर्ष से भी अधिक समय तक जवित रखा गया है। भारत में पायी जाने वाली तीन हजार से भी अधिक जाति ऊंच नीच के क्रम में स्तरीकृत है तथा एक दूसरे के मध्य परस्पर सम्बन्ध एक जटिल समाज का निर्माण करते हैं। भारतीय जाति व्यवस्था शताब्दियों से देश में स्तरीकरण का एक ठोस आधारशिला रही है।

यह व्यवस्था न केवल हिन्दू समाज में पायी जाती है, अपितु भारतीय मुस्लिम तथा इसाई समाजों में भी पायी जाती है। सामाजशास्त्रियों की, जाति प्रथा के विविध पक्षों के अध्ययनों में बहुत अधिक रूचि रही है, और इसके फलस्वरूप आज हमारे सम्मुख लगभग चार सौ से भी अधिक लिखित पुस्तकें व शोध अध्ययन इस सम्बन्ध में विद्यमान है, जिन्हें महत्वपूर्ण माना जाता है । आजकल हिन्दू समाज में पायी जाने वाली भिन्न भिन्न जाति जैसे ब्राह्मण, क्षत्रिय, बनियां, आदि की जो चर्चा होती है, वास्तव में ये जाति समूह आर्यकाल में प्रचलित वर्ण व्यवस्था के चार वर्णो- ब्राह्मण वर्ण, क्षत्रिय वर्ण, वैश्य वर्ण तथा शूद्र वर्ण के ही परिवर्तित रूप हैं। कई इतिहासकारों का मत है कि जब आर्य लोग भारत में आये थे तब ही उनका समाज ब्राह्मण, क्षत्रिय व वैश्य समाजों में विभक्त था तथा भारत के मूल निवासियों या अनार्यो को हराकर उन्होंने अपने समाज की सेवा करने के लए उनमें से जिन लोगों को अपना बलपूर्वक दास बना लिया था, उनके समूह को शूद्र कहा गया। समाजशास्त्री **इरावती कर्वे** का यह विचार था कि भारत के मूल निवासियों में पहले से ही वर्ण व्यवस्था जैसी व्यवस्था विद्यमान थी जिसमें पूजा पाठ करने वालों, युद्ध करने वालों व व्यापार तथा सेवा करने वालों के रूप में चार भाग थे। आर्यो ने इसी प्रचलित व्यवस्था को और मजबूत बनाया था। जो भी हो यह निर्विवाद सत्य है कि आर्यो के काल में अर्थात वैदिक युग में भारत में वर्ण व्यवस्था विद्यमान थी। यह व्यवस्था ही आधुनिक जाति व्यवस्था की जननी कही जा सकती है।

यह एक महत्वपूर्ण तथ्य है कि वैदिक काल में सामाजिक कार्यो के आधार पर बने हुए चार वर्णो की व्यवस्था बहुत अधिक कठोर या जटिल नहीं थी। एक व्यक्ति का जन्म चाहे जिस वर्ण में हो, लेकिन यदि वह अपनी प्रकृति में और अपने द्वारा अपनायी गयी वृत्ति या रोजगार में अपनी-अपनी योग्यताओं के आधार पर परिवर्तन करना

चाहता है या तो वह अपने वर्ण को बदल कर दूसरे वर्ण को ग्रहण कर सकता था। ब्राह्मण वर्ण में उत्पन्न द्रोणाचार्य ने सेनाध्यक्ष का कार्य अपनाकर क्षत्रिय वर्ण को स्वीकार कर लिया था। इसी प्रकार कई शूद्र वर्ण के सदस्यों ने ब्राह्मण, क्षत्रिय व वैश्य वर्णो में स्वयं को परिवर्तित कर लिया था जैसा कि वैदिक कालीन साहित्य से प्राप्त होता है।

उत्तर वैदिक काल से ही वर्णव्यवस्था में दो महत्वपूर्ण परिवर्तन होने लगे थे। **प्रथम**, प्रत्येक वर्ण में विभिन्न कार्यो को करने वालों के छोटे छोटे समूह व उपसमूह बनने लगे थे। ये छोटे छोटे समूह और उपसमूह ही विभिन्न जातियां बने। **द्वितीय**, वर्णव्यवस्था में विद्यमान यह लचीलापन शनैः शनैः जटिल होता गया और अब यह कठिन हो गया कि एक व्यक्ति अपने वर्ण को बदल सके। इसका परिणाम यह हुआ कि जाति व्यवस्था में जन्म लेने वालों के लिए यह संभव नहीं रहा कि वह अपने जीवन में कभी अपने वर्ण या उसके भीतर स्थित उसकी जाति विशेष के समूह भी जकड़ से स्वयं को मुक्त कर सके तथा उस जाति से जुड़ी हुई सामाजिक बंधनों से छुटकारा पा सके।

यद्यपि जाति प्रथा के उत्पत्ति के सम्बन्ध में निम्नलिखित सिद्धांत यथा-परम्परागत सिद्धांत, धार्मिक सिद्धांत, राजनैतिक सिद्धांत, आर्थिक सिद्धांत, व्यावसायिक सिद्धांत, प्रजातीय सिद्धांत आदि बताये जाते है, लेकिन हमारे विचार से इस सम्बन्ध में दो बातें महत्वपूर्ण हैं प्रथम, इनमें से किसी भी एक ही सिद्धांत को न तो पूर्ण ही माना जा सकता है और न सार्थक। द्वितीय, जाति प्रथा के जन्म से सम्बन्धित इन सिद्धान्तों की प्रामाणिकता के झगड़े में पड़ने के स्थान पर हमारे लिए आज यह अधिक महत्वपूर्ण है कि लगभग ढाई या तीन हजार वर्षो के भारत के सांस्कृतिक इतिहास में जाति प्रथा का खूब विकास और फैलाव होने के बाद वर्तमान शताब्दी के आरंभ तक इसकी सामाजिक संरचना की क्या क्या प्रमुख विशेषताएं स्थिरता पा चुकी थी, और इस शताब्दी में उन विशेषताओं में क्या-क्या महत्वपूर्ण परिवर्तन आये हैं। **प्रो0 एम0 एन0 श्रीनिवास(1969)** के विचारानुसार आज सबसे ऊंची जातियां और सबसे नीची जातियां तो प्रायः निश्चित ही है लेकिन दोनों बिन्दुओं के बीच परिवर्तन होने लगा है। श्रीनिवास ने जाति व्यवस्था के संदर्भ में प्रचलित इस धारणा को तोड़ा कि जाति व्यवस्था अपरिवर्तनशील व्यवस्था है।

जाति-व्यवस्था की यह प्रमुख विशेषता रही है कि जातियों में परस्पर ऊँच-नीच की भावना अनिवार्यतः विद्यमान रही है। प्रत्येक जाति, चाहे वह कोई ऊँची जाति हो या बीच की जाति, या निम्न जाति, यह जानती है कि हिंदू, मुस्लिम, सिक्ख, जैन या ईसाई समाज की बहुत सी जातियों की सामाजिक पदस्थिति के लम्बवत् पैमाने में उसकी पदस्थिति कहाँ हैं। वह यह जानती है कि कौन-कौन सी जातियाँ परम्परागत रुप में उससे ऊँची मानी जाती हैं, तथा कौन-कौन सी जातियाँ उससे नीची मानी जाती हैं। साथ ही

यह भी ज्ञान होता हैं कि उसके क्षेत्र में कौन-कौन-सी जातियों की सामाजिक पदस्थिति प्राय: उस जाति के बराबर ही मानी जाती हैं। अपनी जाति की सामाजिक संरचना में परम्परागत पदस्थिति को ध्यान में रखते हुए ही प्राय: पहले भी और आज भी, लोग अपने खान-पान, रहन-सहन, सामाजिक सम्बंध स्थापन, विवाह आदि संबंधी बातों को निश्चित करते हैं। ऊँच-नीच की भावना इतनी जटिल बन चुकी है कि ब्राह्मणों के समाज में सभी ब्राह्मण समान सामाजिक व सांस्कृतिक पदस्थिति के नहीं माने जाते, कुछ ब्राह्मण जातियाँ बहुत उच्च्च, कुछ उच्च्च, कुछ निम्न तथा कुछ बहुत ही निम्न स्तर की मानी जाती है। बिहार में कर्मकाण्डी ब्राह्मण अपने को उच्च्च मानता है तथा वे ब्राह्मण जो श्राद्ध कर्म करवाते है, उन्हें ब्राह्मण जाति में निम्न माना जाता है। उत्तर प्रदेश के मुसलमानों में भी जातियों की ऊँच-नीच का अनुक्रम देखने में आता है। ईरान या अरब से आनेवाले पूर्वजों की संतानें, जो स्वयं को शुरफ या अशरफ, सैयद आदि जातियों को बतलाती हैं, सबसे ऊँची जाति की मानी जाती हैं। उनके बाद हिंदू ब्राह्मणों व राजपूत आते हैं, जिन्होंने मुस्लिम धर्म को स्वीकार कर लिया था। उनसे नीचे छोटे-छोटे धंधे करनेवाली जातियाँ जेसे जुलाहा (अंसारी), नाई, धुनिया, कुम्हार आदि आते हैं। सबसे नीचे भंगियों की जाति का स्थान आता है।

इसी प्रकार केरल के मोपला मुसलमानों में तीन प्रकार की जातियाँ देखने में आती हैं-सबसे ऊंची जातियाँ हजरत मोहम्मद साहब की पुत्री फातमा की संतानों की मानी जाती हैं और उन्हें 'थंगाल' कहा जाता है। उनसे नीचे अरब से आनेवाले पूर्वजों की संतानों की जातियाँ आती हैं। उनसे नीचे 'पुसालार' जातियाँ आती हैं जो मछुवा लोगों की जातियाँ हैं। सबसे नीचे नाई का काम करनेवाली 'औसान' जाति का स्थान आता है।

आर0 एन0 सक्सेना(1961:320) के अनुसार जाति संस्था के दो मुख्य आधार अंतर्विवाही और पेशा हैं और इन्हीं दो आधारों पर भारतीय मुसलमानों में जाति प्रथा पायी जाती है।

नर्मदेश्वर प्रसाद(1965:56–58) ने भारतीय मुसलमानों की जाति व्यवस्था का उल्लेख करते हुए लिखा है कि केवल धर्म बदलने से ही सामाजिक जीवन आमूल परिवर्तित नहीं हो जाता है। मुसलमानों में साधारणत: दो श्रेणियाँ है, ठीक वैसे ही जैसे हिन्दुओं में, ऊँची जातियाँ और निम्न जातियाँ। उदाहरण के लिए कहा जाता है कि मुसलमानों में दो प्रकार के लोग है (1) अशराफ और (2) अजलाब। अशरफ का अर्थ है अभिजात, जिसमें बाहर से आये हुए मुसलमान तथा ऊँची हिन्दू जातियों में से मुसलमान शामिल हैं। अजलाब का अर्थ है नीच। इस श्रेणी में वे सभी मुसलमान शामिल हैं, जो पहले हिन्दू समाज में छोटी जाति के लोग थे, और एक खास तरह से जातीय पेशे में लगे हुए थे, ऐसी मुसलमान जातियों में मोमिन, मंसूरी, रईन, कुरेशी तथा

इब्राहीमी हैं। भारत के मुसलमानों में ज्यादातर लोग इन्हीं जातियों के हैं। ऊँची जाति के हिन्दूओं की तरह अशराफ मुसलमान सेवा कार्य करना या हल चलाना हीन कार्य समझते हैं। सैयदों का पुश्तैनी पेशा पुरोहिताई है। हिन्दू समाज में जो स्थान क्षत्रियों का राजपूतों का है, वही मुसलमानों में मल्लिक, मुगल और पठानों का है। कहीं कहीं मुसलमानों में तीसरी जाति भी है, जो नीच समझी जाती है। 'उसे अरजाल' कहते हैं, जैसे हलालखोर, लालबेगी, अब्दाल, बेदीऊ। इन लोगों के साथ अन्य मुसलमान कोई संपर्क नही रखते। इन्हें मस्जिद में भी जाने की इजाजत नहीं है। इनके मुर्दे सार्वजनिक कब्रगाह में नहीं गाड़े जाते हैं।'

इनका विचार है कि नीच समझे जाने वाले मुसलमान जब अपनी आर्थिक और शैक्षिक और शैक्षिक स्थिति में सुधार कर लेते हैं तो उन्हें भी सामाजिक प्रतिष्ठा मिल जाती है।

सिक्खों में भी जातियों का सोपानात्मक अनुक्रम देखने में आता है। सिक्ख समाज सरदार जी (ऊँची जातियों) तथा मजहबी (नीची जातियों) में बँटा हुआ है। ऊँची जातियों में जाट, कम्बोह (भूमि के स्वामी), तरखा (खाती), कुम्हार, मेहरा (पानी ले जानेवाले), और किम्बा (धोबी) आते हैं। प्रथम दोनों जातियों को सर्वोच्च स्थान प्राप्त रहा है। नीची जातियों में, (जिन्हें मजहबी कहा जाता है, नीची हिंदू जातियों से आने तथा बहुत बाद में सिक्ख धर्म स्वीकार करने के कारण निम्न स्थान मिला है) कई जातियाँ शामिल हैं।

श्रीनिवास(1969:5–8) के अनुसार भारतीय यहूदियों के समाज में भी जाति प्रथा घुस गयी है। उनके समाज में तीन प्रकार कही जातियाँ हैं, (1) बेनी–इजरायली यहूदी जो मुख्यतया बम्बई में पाये जाते हैं तथा जिनमें 'गोरा' और 'काला' के रूप में सामाजिक विभेदीकरण पाया जाता है। इस प्रकार केरल के मुसलमानों में थंगाल, पुसालार व औसान के रूप में सोपानात्मक देखने को मिलता है। 'गोरे', कालों से ऊँची जाति के माने जाते हैं, (2) कोचीन यहूदी तथा (3) बगदादी यहूदी । कोचीन यहूदी 'गोरा'; 'काला' तथा 'मेसूरेरियन' जातियों के होते हैं।

भारतीय कैथोलिक ईसाइयों में सीरियन ईसाई स्वयं को केरल के नम्बूदरी ब्राह्मणों व नायरों की संतानें बताते हैं तथा इसलिए उस क्षेत्र के अन्य ईसाइयों से स्वयं को ऊँची जाति का मानते हैं। हिन्दू समाज में यह प्रथा प्रायः दृढ़ता प्राप्त कर चुकी है कि एक जाति के सदस्य अपनी ही जाति में विवाह करना उचित समझते हैं। लेकिन एक रोचक व्यवस्था यह रही है कि एक ऊँची जाति का व्यक्ति अपने से नीची जाति की स्त्री से भी विवाह कर सकता है जो अनुलोम प्रथा कहलाती है। प्रतिलोम प्रथा, अर्थात ऊँची

जाति के कुल की कन्या का अपने से निम्न जाति के कुल के किसी पुरूष से विवाह करना अनुचित माजा जाता रहा है। ईसाइयों, मुसलमानों, यहूदियों व सिक्खों में प्राय: अपनी जाति में ही विवाह करने का प्रचलन रहा है, यद्यपि गोत्रों व अनुलोम सम्बन्धी कुछ अपवाद उनमें पाये जाते हैं।

परम्परागत रूप से एक जाति को किसी विशेष धंधे से सम्बन्धित माना जाता रहा है। लेकिन श्रीनिवास का यह कथन सही है कि ''एक ही धन्धे से एक जाति को आबद्ध करना आवश्यकता से अधिक सरल करके बात कहना ही है। ऐसा इसलिए है कि एक ही जाति कई बार दो या दो से अधिक धन्धे भी करती हुई देखने में आती है। उत्तर प्रदेश के हरिजन दिल्ली में मकान बनाने वाले मजदूरों व मिस्त्रियों का धन्धा करते हैं, कभी-कभी दिल्ली की गलियों में जूते गांठने वाले मोची का काम भी करते हुए फिरते हैं, और प्राय: वर्षा ऋतु में अपने गाँवों में पहुँचकर दूसरे के खेतों में कृषक मजदूर के रूप में कार्य करते हैं। कई ब्राह्मण पूजा-पाठ के धन्धे के अतिरिक्त खेती भी करते हैं और दूध भी बेचने का काम करते हैं। इन सहायक धन्धों के बावजूद यह तो स्पष्टतया बतलाया जा सकता है कि कौन-सी जाति का कौन-सा मुख्य परम्परागत व्यवसाय रहा है। अपनी जाति में ही विवाह करने की प्रवृत्ति के पीछे सदियों से यह प्रमुख विचार रहा है कि अपनी जाति के धन्धे के रहस्यों को अपनी जाति के सदस्यों तक ही सीमित रखा जाये ताकि उनकी रोजी न छिन सके और उनको उस धन्धे में न केवल सर्वाधिकार प्राप्त हो जाये अपितु उस धन्धे में सर्वोच्च्च निपुणता का स्तर भी प्राप्त हो जाये।

प्रत्येक जाति अपने खान-पान व धूम्रपान सम्बन्धी कई निषेधों का पालन करती रही है। प्राय: प्रत्येक जाति का अपना हुक्का होता है जिसे उस जाति के सदस्य (तथा उस जाति के समान मानी जाने वाली अन्य जातियों के सदस्य भी) पी सकते हैं। अपने से नीची जाति के किसी व्यक्ति से उसका भेजन लेकर, या उसके द्वारा छुये भोजन को लेकर खाना, उसके हुक्का या चिलम को पीना परम्परागत रूप से अनुचित माना जाता रहा है।

जाति व्यवस्था(हट्टन,1955) में प्राय: सात प्रकार के महत्वपूर्ण निषेध देखने को मिलते हैं(1) **पंक्ति–निषेध,** जिसके द्वारा यह निर्धारत होता है कि किस किस जाति के लागों की पांत में बैठकर भोजन करना चाहिए, और किसकी पांत में नहीं। (2) **पाक–निषेध,** जिसके द्वारा यह निर्धारत है कि कस व्यक्ति का पकारा हुआ भोजन ग्रहण किया जा सकता है और किसका पकाया हुआ नहीं।(3) **भोजन–निषेध,** जिसके द्वारा निर्धारित है कि भोजन करने के समय किन संस्कारों का पालन करना चाहिये। (4)

जल–निषेध, किसके हाथ का पानी पीना चाहिये, और किसके हाथ का नहीं। (5) **खाद्य–निषेध**, जिसके आधार पर यह विचार किया जाता है कि मनुष्य क्या खाए और क्या नहीं खाए। (6) **हुक्का–पानी निषेध**, अर्थात किसका हुक्का पानी चाहिए और किसके साथ बैठकर पीना चाहिए। (7) **पात्र निषेध**, अर्थात खाने-पीने या भोजन पकाने के किस प्रकार का बर्तन व्यवहार में लाना चाहिए।

लेकिन इस सम्बन्ध में एक रोचक अपवाद यह रहा है कि ऊँची जातियों के लोग नीची जातियों के लोगों के घर का भोजन भी ग्रहण कर सकते हैं यदि वह कच्चे वस्तु के रूप में जैसे आटे, घी, मसाले आदि के रूप में दिया गया है, या यदि वह "पक्की" अर्थात घी या तेल में पकाकर अर्थात "पक्का" भोजन के रूप में बनाकर दिया गया है। ऊँची जाति द्वारा दिया हुआ भोजन ग्रहण किया जा सकता है। खान-पान सम्बन्धी शुद्धता के पीछे स्वच्छता, स्वास्थ्य व सांस्कृतिक अभिनति के विचार रहे हैं।

छुआ-छूत का विचार हिंदू समाज में एक अजीब विचार के रूप में रहा है। कुछ जातियों को समाज में इतना नीचा स्थान दिया गया है कि न केवल उनके सदस्यों में छू जाने को अपितु उनकी परछाई तक अपने शरीर पर पड़ जाने को ऊँची जातियों के लोगों द्वारा सहन नहीं किया जाता रहा है। श्रीनिवास के अनुसार केरल में कुछ वर्षो पूर्व तक एक नम्बूदरी ब्राह्मण से 10 मीटर दूर हट कर तिमान जाति के व्यक्तियों को चलना पड़ता था, तथा एक तिमान से भी 22 मीटर दूर हट कर नायड़ी नामक जाति के व्यक्तियों को चलना पड़ता था, ऊँची जातियों को 'द्विज' (दुबारा जन्म लेने वाले) कहा जाता रहा है क्योंकि वैदिक संस्कारों से वे पवित्र माने जाते हैं जबकि वैदिक संस्कार से विहीन जातियाँ अछूत मानी जाती रही हैं। हिन्दू अछूत जातियों जैसे भंगी, चमार, हबूड़ा आदि को ऊँची जातियों वाले जहाँ तक कि अधिकांश शूद्र भी (जैसे लुहार, कुम्हार आदि) अछूत मानते रहे हैं। यह रोचक बात है कि अछूत जातियों में भी ऊँच-नीच की भावना और छुआ-छूत की भावना देखने में आती है। उदाहरणार्थ, राजस्थान में भंगी हबूड़ा व डोम जातियों को अपने से भी नीचा मानते हैं और उनका छुआ हुआ नहीं खाते, उनका हुक्का-पानी नहीं स्वीकार करते। मरे हुए जानवरों की खाल उधेड़नेवाले राजस्थानी खटिकों को राजस्थान से आये हुए और दिल्ली में रहनेवाले 'नाड़ी बट' जो कि चमड़े की कतरनों के हंटर व बेंत व गुप्ती बनाते हैं, अपने से नीचा मानते हैं, जबकि जूता गाँठनेवाले चमार इन दोनों प्रकार के चमारों को अपने से नीचा बतलाते हैं और उनका भोजन, पानी व हुक्का स्वीकार नहीं करते। सिक्खों की मजहबी जातियों का छुआ हुआ भोजन या पेय पादर्थ ऊँची जातियों के सिक्ख ग्रहण नहीं करते। मजहबी जातियों के लोगों को गाँवों व कस्बों के गुरूद्वारों में भी प्रवेश करने व बारात ठहराने

नहीं दिया जाता है, पश्चिमी तट के अर्थात, केरल के ईसाइयों में ब्राह्मणों में से बने ईसाइयों और हरिजनों में से बने हुए ईसाइयों के बीच इसी प्रकार का छुआ-छूत कुछ चर्चो में बरता जाता रहा है। कई ग्रामों में अब तक हिन्दुओं में नाई और धोबी, हरिजनों विशेषकर भंगियों व चमारों की हजामत नहीं करते तथा कपड़े नहीं धोते।

प्रत्येक जाति के अपने रस्म-रिवाज, बोल-चाल व पहनावे के तौर-तरीके होते है।प्रत्येक जाति की अपनी जाति पंचायत रही है जिसमें प्राय: ग्राम के ही उस जाति के कुछ (प्राय: पाँच) पंच या मुखिया मिलकर जाति के किसी भी सदस्य द्वारा खान-पान, पहनावे, बोलचाल, विवाह या यौनसम्बन्ध, अथवा अन्य महत्वपूर्ण व्यवहार सम्बन्धी उल्लंघन या तिरस्कार के मामलों और आपसी झगड़ों का फैसला करते रहे हैं। कई मामलों में यह भी देखने में आया है कि एक जाति पंचायत का क्षेत्र बीस, पच्चीस, पचास गाँवों तक भी फैला हुआ माना जाता रहा है, और किसी महत्वपूर्ण मामले का फैसला करने के लिए न केवल 5-10 मीलों अपितु 100-150 मीलों दूर स्थित जाति के नामी पंचों को बुलवाया जाता रहा है। जाति-पंचायत की आज्ञाओं का उल्लंघन करने वाले को न केवल गाँव से बाहर निकालने की कार्यवाही की जा सकती थी अपितु जाति से बहिष्कार करने (जाति बाहर) का अत्यन्त गंभीर दण्ड भी दिया जाना संभव रहा है। कई मुसलमान जातियों में भी जाति-पंचायत की प्रथा रही है।

प्राय: प्रारम्भ से ही जाति सम्बन्धी गतिशीलता की मनाही रही है। निम्नजाति को ऊँची जाति का बनने में, या किसी अन्य जाति के व्यक्ति को अपने से ऊँची जाति के व्यक्ति के साथ खान-पान करने या साथी या मित्र बनाने का निषेध रहा है। लेकिन यदि एक व्यक्ति अपनी जाति का परम्परागत व्यवसाय व आचरण रखते हुए ही अपनी आर्थिक-स्थिति सुधारने के लिए बाहर चला जाता है या सम्पन्न जीवन व्यतीत करता है तो उसके मार्ग में कोई बाधा नहीं रखी जाती है। जाति की परम्परागत सामाजिक संरचना का यह विवरण उस समय तक अपूर्ण माना जायेगा जब तक कि हम दो महत्वपूर्ण पक्षों पर विचार न करें। प्रथम, जाति प्रथा की जटिलता से क्या किसी भी प्रकार एक व्यक्ति को मुक्ति मिल सकती थी? यदि हाँ, तो किस प्रकार? द्वितीय, भारतीय ग्रामीण समाज में जातियों की क्या परम्परागत भूमिका रही है?

<u>निर्मल कुमार बोस(1967)</u> के अनुसार यद्यपि जाति प्रथा में अत्यधिक जटिलता होने के फलस्वरूप एक व्यक्ति अपनी जाति, जिसमें वह जन्मा है, नहीं बदल सकता था तथापि, लेकिन वह इसकी कठोरता से संन्यासी बन कर मुक्ति पा सकता था। उच्च जातियों के लोग अपनी इच्छा से बिना किसी कठिनाई के संन्यासी बन सकते थे, और वैश्य और शूद्र राजा की आज्ञा लेकर ऐसा कर सकते थे जैसा कि महाभारत में लिखा

है। संन्यासी बन जाने पर जाति-पाँति का कोई बंधन नहीं रहता था। बाद में जब वैष्णव धर्म व सुधारक मत बहुत लोकप्रिय हो गये तब शूद्र और स्त्रियाँ भी सुगमता पूर्वक संन्यासी बन सकते थे।

ग्रामीण समाज में जाति का बहुत महत्वपूर्ण स्थान रहा है। यद्यपि एक ग्राम में कई जातियों के लोग रहते है, तथापि जाति व्यवस्था के सोपानात्मक (ऊँच-नीच के स्तरण के) आधार पर वे भिन्न-भिन्न पदस्थितियाँ व कार्य रखते हैं, और आपस में कई प्रकार के सम्बंध बनाये रखते हैं यथा आर्थिक, रीति-रिवाज या रस्म सम्बंधी, राजनैतिक और नागरिक सम्बंध।

ग्राम के विभिन्न उद्योग-धन्धों को भिन्न-भिन्न जातियों के लोग परम्परागत रूप से करते आ रहे हैं, मृत्यु संस्कार, ब्राह्मणों व गैर-ब्रह्मणों की प्रायः सभी जातियों में करवाते हैं। इसी प्रकार से चमार,कुम्हार, आदि जातियों के लोग ग्राम की कृषक जातियों के खेतों व खलिहानों में फसल की बुवाई और कटाई के समय पर कार्य करते हैं।

इस प्रकार के धंधे करनेवालों को हर बार नकद पारिश्रमिक या मेहनताना नहीं दिया जाता बल्कि वे सालभर कृषकों के यहाँ सेवा कार्य उधार में करते रहते हैं और फसल आ जाने पर इन्हें एक साथ अनाज के रूप में उनका वार्षिक पारिश्रमिक दे दिया जाता रहा है। यह व्यवस्था उत्तर भारत मैं **'जजमानी प्रथा'** कहलाती है। जाति व्यवस्था में प्राचीन काल से ही जातियाँ परस्पर प्रकार्यात्मक रूप से सम्बन्धित रही हैं। यद्यपि एक जाति की दूसरी जाति से सामाजिक दूरी पायी जाती है उनमें ऊँच-नीच की भावना होती है फिर भी ये आर्थिक एवं व्यावसायिक आधार पर परस्पर एक-दूसरे से सम्बन्धित रही हैं। विभिन्न जातियों की इस पारस्परिक निर्भरता को जजमानी प्रथा के नाम से जाना जाता है। **विलियम वाइजर(1936)** ने उत्तर प्रदेश के करीमपुर गाँव का अध्ययन कर ग्रामीण भारत में जजमानी प्रथा का उल्लेख करते हुए लिखा है कि 'इस प्रथा के अन्तर्गत प्रत्येक जाति का कोई निश्चित कार्य पीढ़ी दर पीढ़ी चलता रहता है। इस कार्य पर उसका एकाधिकार होता है। इसमें एक जाति दूसरी जाति की आवश्यकताओं की पूर्ति करती है'।

जजमानी प्रथा में जिस परिवार की सेवा की जाती है वह परिवार अथवा परिवार का मुखिया सेवा करने वाले का 'जजमान' कहलाता है, और सेवा प्रदान करने वाला व्यक्ति 'कमीन' अथवा काम करने वाला कहलाता है। जजमानी प्रथा में मुद्रा का विनियम कम होता है क्योंकि यह खुली बाजार अर्थव्यवस्था नहीं है और न ही जजमान के कमीन से सम्बन्ध पूँजीवादी व्यवस्था की तरह सेवायोजक एवं सेवाकारी की तरह है।

जजमान अपने कमीन को समय-समय पर नकद या अनाज में भुगतान करता है। कमीन को सेवा के भोजन, वस्त्र, निवास स्थान तथा कुछ औजारों का उपयोग करने एवं कच्चे माल की सुविधाएँ प्राप्त होती हैं। ये सुविधाएँ इस व्यवस्था को सुदृढ़ बनाती हैं। आज जबकि मुद्रा का उपयोग बहुत बढ़ गया है फिर भी किसान अनाज में भुगतान करना अच्छा समझते हैं। जजमानी व्यवस्था में पारितोषण तीन रूपों में दिया जाता है।(1) सेवा के बदले सेवा के रूप में अर्थात एक जाति का परिवार दूसरी जाति के परिवार की सेवा करता है और बदले में उससे सेवाएँ प्राप्त करता है। उदाहरण के लिए नाई, धोबी व कुम्हार के बाल काटता है बदले में उनसे वस्त्र धुलाने और बर्तन प्राप्त करने के रूप में सेवा लेता है। (2) काम करने वाली जातियाँ अपने जजमानों से दैनिक, मासिक, वार्षिक और कुछ अवसरों तथा त्यौहारो पर एवं मृत्यु, विवाह, जन्म, दिवाली, होली, दशहरा, रक्षा-बन्धन आदि अवसरों पर खाना, कपड़ा अथवा नकद पारितोषिक प्राप्त करती है। यह पारितोषिक जजमान की क्षमता पर भी निर्भर करता है।(3) पारितोषिक कभी-कभी विशेष प्रकार की छूट के रूप में भी होता है। लेविस ने रामपुर में खटीक, लुहार, कुम्हार, नाई, भंगी और चमार आदि की सेवाओं और बदले में उन्हें दिये जाने वाले पारितोषण का उल्लेख किया है।

महाराष्ट्र में इसे 'बारा बलूते', मद्रास में 'मिरासी' तथा मैसूर में 'अद्दे' प्रथा कहा जाता है। यद्यपि यह प्रथा विभिन्न जातियों में एक प्रकार का आर्थिक व रस्मी गठबंधन है तथापि यह संरक्षक और ग्राहक सम्बन्ध का रूप लये हुए है। इस प्रकार से अपने संरक्षक को सेवा देने का वंशानुक्रम के आधार पर अर्थात दादा से पिता को, पिता से पुत्र को और आगे चलता रहा है।

आस्कर लेविस(1958:73) ने अपने अध्ययन में बतलाया है कि रामपुर ग्राम में खेती को कृषि के औजार ठीक करने के काम के बदले और लोहार को लोहे का सामान बनाने व ठीक करने के बदले, एक मन अनाज व प्रति फसल पर दो सेर अनाज और दिया जाता था, कुम्हार को कुछ बर्तन भर कर अनाज, नाई को उतना अनाज जितना वह उठा कर ले जा सके, भंगी को दिन में दो बार रोटी व राबड़ी, व फसल पर. जितना अनाज वह उठाकर ले जा सके, तथा चमार को फसल का बीसवाँ भाग जजमानी प्रथा के अन्तर्गत दिया जाता था।

इसके अतिरिक्त ग्रामों में विभिन्न जातियों के लोगों की सेवाएँ प्राप्त करने का एक सामान्यतया प्रचलित तरीका यह भी रहा है कि एक धनी व्यक्ति एक ऋण देकर एक परिवार के सभी या कुछ सदस्यों की एक दो मास या अधिक समय के लिए

सेवाएँ ले सकता है। ऋणदाता और ऋणी के बीच का यह सम्बन्ध प्रायः सभी प्रान्तों में देखने में आता रहा है।

जीवन संस्कारों,जैसे जन्म, विवाह, मृत्यु आदि पर बहुत-सी जातियों का सहयोग रस्मी तौर पर लिया जाता है । उदाहरणार्थ, जब एक ठाकुर या वैश्य के घर पर लड़का जन्म लेता है तो एक हरिजन दाई जन्म में मदद करती है, नाईन तेल मलती है, नाई संदेशा भेजता है, ब्राह्मण जन्मपत्री बनाता है व नामकरण संस्कार करवाता है, कुम्हार नये मिट्टी के बर्तन देता है, हिजड़े नाचने आते हैं, भंगी जूठन उठा कर ले जाता है, कहार पानी लाते हैं व पूजापाठ में सहायता करवाते हैं, सुनार कान की बाली डालता है आदि। प्रत्येक जाति के व्यक्ति की इन सेवाओं के लए धन, अनाज, मिठाई, वस्त्र आदि के रूप में पारिश्रमिक या इनाम देने का रस्मी दस्तूर पहले से चला आ रहा है, जिसे देना आवश्यक होता है अन्यथा स्थानीय क्षेत्र में बहुत कानाफूँसी और कभी-कभी तो उत्पात या मारपीट खड़ा हो जाता है।

कई जातियाँ ग्राम के मेलों व त्यौहारों पर विशेष भूमिका निभाती हैं। उदाहरणार्थ, कुछ देवी-देवताओं को पूजा ब्राह्मणों द्वारा नहीं करायी जाती है, उन्हें चमार करते हैं। हरिजन ढोल बजाते हैं, मालिश करते हैं, जूठी पत्तलें उठाते हैं, नीची जातियों के लोग नाचते हैं, माली फूलों के हार बनाते हैं आदि।

भारतीय ग्रामों में विभिन्न धर्मों की जातियों का पारस्परिक सहयोग रहता है। उदाहरणार्थ, एक सिक्ख कृषक एक ब्राह्मण पंडित के पास जाकर वह मुहूर्त या पवित्र घड़ी (समय) निकलवा सकता है, जबकि उसे अपने खेत में हल चलाना आरम्भ करना चाहिए। सिक्ख और हिन्दू, मुस्लिम संतों (पीरों) की कब्रों पर जाकर मन्नतें माँग सकते हैं ।

प्रभुत्व जाति

ग्रामीण क्षेत्र में कुछ जातियां विशेष प्रभुत्व रखती हैं क्योंकि उसके पास विशेष क्षेत्रों में बहुत अधिक कृषि योग्य भूमि होती है, उनकी संख्या अधिक होती है तथा राजनीति के क्षेत्र में उनकी पहुँच होती है। **प्रो0 एम0 एन0 श्रीनिवास(1959:16)** का कहना है कि कोई जाति तब प्रभुत्व सम्पन्न होती है जब वह आर्थिक एवं राजनीतिक शक्ति सम्पन्न होती है तथा जाति व्यवस्था में श्रेणीक्रम में उसका स्थान ऊँचा होता है। (परम्परागत प्रणाली में भी, जो जाति आर्थिक एवं राजनीतिक शक्ति प्राप्त कर लेती थी वह कर्मकांडी स्तर पर स्वयं को उठाने में सफल हो जाती थी)।

भारत के अनेक भागों में प्रभुत्व सम्पन्न जाति के उदाहरण देखने को मिलते हैं। मैसूर के लिंगायत और ओक्कालिंगा, आंध्र के रेड्डी और कामा, तमिल के गाउन्दर, पदयाची और मुदालियर, केरल के नायर, महाराष्ट्र के मराठा, गुजरात के पट्टीदार, तथा उत्तर भारत के राजपूत, जाट, गूजर एवं अहीर सभी प्रभुत्व सम्पन्न जाति के उदाहरण हैं। परंपरा से, ग्राम क्षेत्रों में कम संख्या वाली जातियाँ जो भूमि की मालिक होती थीं, या जिनका राजनीतिक प्रभाव होता था, अथवा जो परंपरा से शिक्षित रहती आयी हैं ग्रामीण परिवेश में प्रभुत्व सम्पन्न होती थीं।

जब यह प्रभुता केवल एक गाँव तक सीमित होती है तब प्रभुत्वसम्पन्न जाति केवल ग्राम-पंचायत के कार्यकलापों को ही प्रभावित कर पाती है। स्थानीय संस्थाओं को ज्यादा से ज्यादा अधिकार देने की नीति से उन जातियों को जिनका प्रभाव पड़ोस के कुल गाँवों से आगे नही है नये अवसर प्राप्त होते हैं। स्थानीय स्वशासन इकाइयों के चुनावों में जाति भावना महत्व रखती है और प्रायः स्थानीय रूप से प्रभावशाली जाति के नेता पंचायतों में चुन कर आते हैं । जब यह प्रभुत्व ग्रामों के एक समूह की सीमा से आगे पूरे क्षेत्र में होता है, यह राज्य की राजनीति पर असर करने लगता है।

प्रभुत्वसम्पन्न जाति के नेता चतुर और समझदार होते हैं। वे राजनीतिक शक्ति और आर्थिक अवसर प्राप्त करने की भावना रखते हैं। उनके पास कुछ रूपया होता है और उनके स्थानीय अनुयायी होते हैं। आजादी के बाद से कई क्षेत्रों में उन्होंने उद्योग किये हैं : यात्री बसें चलायी हैं, चावल और आटे के कारखाने स्थापित किये हैं, कपड़े और अन्य चीजों की दूकानें खोली हैं, सरकार से ठेके के काम लिए हैं तथा शहरों में किराये से उठाने के लिए मकान बनवाये हैं। उनमें जो अधिक साहसी रहे वे सक्रिय राजनीति में भाग लेने लगे।

श्रीनिवास का मानना है कि प्रभुत्व जातियों के नेता आर्थिक एवं राजनीतिक अवसरों के प्रति सजग रहते हैं, पर सामाजिक दृष्टि से वे अनुदार होते हैं। वे यह नहीं चाहते कि हरिजनों की दशा में सुधार हो क्योंकि हरिजनों को गरीब और अनपढ़ बने रहने में उनके स्वार्थ निहित हैं। वर्तमान समय में कृषि कार्य के लिए मजदूर वे हरिजनों में से ही प्राप्त करते है तथा यदि ये हरिजन पढ़ लिख जायेंगे, अपने अधिकारों के प्रति सचेत हो जायेंगे तो प्रभुत्व जातियों की स्थिति के लिए खतरा पैदा हो जाने का डर है। यह सही है कि आजादी के बाद हरिजनों के लिए काफी कुछ किया गया है, पर वास्तविकता यह है कि गांवों में वे आर्थिक रूप से उच्च जातियों पर निर्भर रहते हैं।

वर्तमान में नवीन परिवर्तनों के कारण परम्परागत प्रभुत्वजाति को चुनौती दी गयी है और अन्य जातियां प्रभुत्व जाति का स्थान ग्रहण कर रही हैं जिसमें मध्यम स्तर की जातियां भी हैं। जमींदारी प्रथा के उन्मूलन और भूमि सुधार के कारण प्रभुत्व जाति के भूस्वामित्व में कमी आयी है। पंचायती राज्य व्यवस्था, निम्नजातियों का चुनावों में आरक्षण तथा वयस्क मताधिकार आदि ने प्रभुत्व जाति की शक्ति को क्षीण किया है। बिहार के यादव, कुर्मी, कोइरी आदि जातियां प्रभुत्व जाति के रूप में उभर रही हैं। उत्तर प्रदेश के चानुखेड़ा एवं सेनापुर तथा माधोपुर गांवों में वहां की राजपूत प्रभुत्व जाति की शक्ति को चमार, लोनियां, कहार आदि निम्न जातियों ने चुनौती दी है। इसके अतिरिक्त भारत के अन्य गांवों में भी परिवर्तन की यह प्रक्रिया देखी जा रही है।

ग्रामों की सामाजिक व्यवस्था में शक्ति का एक सोपानात्मक अनुक्रम देखने में आता है। ऊँची जातियों का अन्य नीची जातियों से अधिक अधिकार व सुविधाएं प्राप्त होती रही हैं। भूमि, धन, न्याय व अन्य सुविधाएं उनके अधीन रहे हैं जबकि निम्न जातियाँ नौकर भूमिहीन श्रमिक, कर्जदार आदि के रूप में ही रही है। जातिप्रथा व भूमि अधिकार सम्बन्धी असमानताओं के फलस्वरूप ग्रामों में कई प्रकार के तनाव व संघर्ष चलते रहे हैं। हाल के वर्षो में निम्न जातियों में इस प्रकार की परम्परागत शोषणयुक्त ग्रामीण व्यवस्था से छुटकारा पाने के लिए बहुत बेचैनी रही है और उन्होंने कई प्रयास भी किये हैं।

<u>वर्ग व्यवस्था</u>

सामाजिक स्तरीकरण का एक मुख्य आधार **वर्ग व्यवस्था** है। विश्व के सभी समाजों में वर्ग पाये जाते हैं। कोई भी ऐसा समाज नहीं दिखाई पड़ता जो पूर्णतया वर्गविहीन हो। ये वर्ग आयु, लिंग, शिक्षा, व्यवसाय तथा आय के आधार पर आदिकाल से बनते रहे हैं। वर्ग एक प्रकार की सामाजिक इकाई है जिसमें एक ही तरह के लोगों की कई कटेगरी शामिल होती हैं, यथा व्यापारी, औद्योगिक, बुद्धिजीवी और अन्य नौकरीपेशा लोग। ये सभी पेशेवर कटेगरी है। लेकिन इन सभी में एक मूलभूत समानता होती है और वही इन्हें वर्ग के सूत्र में बांधती है। किसी भी वर्ग में उस वर्ग के लोगों की प्रस्थिति बहुत महत्वपूर्ण समझा जाता है। प्रायः इसी से लोगों का वर्ग निर्धारित होता है। वर्ग व्यवस्था में लोगों की प्रस्थिति या ओहदा उनकी आर्थिक और सामाजिक स्थिति के अनुसार निश्चित होता है। जब उनकी सामाजिक और आर्थिक स्थिति में परिवर्तन होता है, तब उनका वर्ग भी बदल जाता है। साथ ही साथ उनकी प्रस्थिति में भी परिवर्तन आ जाता है। जाति व्यवस्था के संदर्भ में ऐसा परिवर्तन संभव नहीं। प्रजाति व्यवस्था में तो ऐसे परिवर्तनों की संभावनाएं और भी हैं। इस तरह जाति या प्रजाति के मुकाबले में वर्ग में काफी गतिशीलता पायी जाती है। कम से कम सैद्धांतिक तौर पर

परिवर्तन संभव है और कभी कभी वर्ग परिवर्तन होते ही रहते हैं, जबकि जाति या प्रजाति में न तो ऐसे परिवर्तन ही संभव है और न सैद्धांतिक तौर पर संभव ही हो सकता है। जब किसी भी समाज में सामाजिक सम्बन्धों का आधार प्रस्थित होता है और जहां ऊँच और नीच का भेद है, वहां किसी न किसी रूप में वर्ग व्यवस्था देखी जा सकती है। अत: सामाजिक वर्ग व्यवस्था हायरार्की का पोषण करती है। इनमें ऊँच-नीच या छोटे-बड़े के भेद होते है और अंतत: समाज में यह व्यवस्था एक प्रकार का स्थायित्व प्रदान करती है ।

भाषा, स्थानीयता, प्रकार्य, विशेषीकरण आदि के आधार पर सामाजिक वर्ग बनते हैं, विशेषकर उस समय जबकि ऐसे वर्ग के सदस्यों का एक विशेष सामाजिक प्रस्थिति बन जाता है। यह प्रस्थिति सदस्य की आमदनी, व्यवसाय, वंश परम्परा शिक्षा पर आधारित रहती है। इस प्रकार वर्ग की धारणा में प्रस्थिति की भूमिका महत्वपूर्ण होती है और जब वर्ग का सम्बन्ध आर्थिक और राजनीतिक व्यवस्थाओं से जुट जाता है तो वर्ग आर्थिक और राजनतिक स्वरूप ग्रहण कर लेता है। इस प्रकार वर्ग के तीन प्रकार हो सकते हैं-सामाजिक वर्ग, आर्थिक वर्ग और राजनीतिक वर्ग।

आर्थिक संदर्भ में, वर्ग के संदर्भ में मार्क्सवादी विचारकों ने काफी विस्तार से वर्णन किया है। वर्ग के संदर्भ में मार्क्सवादी विचार शुद्ध रूप में आर्थिकी से सम्बन्धित है और मार्क्स तथा उसके बाद के मार्क्सवादी लेखकों ने सामाजिक वर्ग की व्याख्या कहीं नहीं की है। उनके अनुसार वर्ग आर्थिक विषमता पर आधारित है और प्रस्थिति में जो भेद देखा जाता है वह मुख्यत: इसी आर्थिक विषमता के कारण है। उनका यह भी कथन है कि आधुनिक पूँजीवादी समाज व्यवस्था के पहले वर्ग व्यवस्था नहीं थी। सामंतवादी व्यवस्था में गतिशील वर्ग के स्थान पर अगतिशील जाति व्यवस्था या श्रेणी परम्परा के आधार पर हुआ करता था। यह पूँजीवादी समाज व्यवस्था की विशेषता हे कि आय और आर्थिक स्थिति के आधार पर विभिन्न वर्ग समाज में देखे जाते हैं।

मार्क्सवादी धारणा के विपरीत समाज में कई वर्ग ऐसे मिलते हैं, जो आर्थिक विषमता पर आधारित नहीं है, यथा साधु संयासियों की प्रस्थिति बड़े बड़े पूँजीपतियों की अपेक्षा अधिक होती थी और बहुत हद तक आज भी है। आर्थिक विषमता न तो लोगों में एकता की भावना पैदा करता है और न इन्हें एक दूसरे से अलग कर सकता है, जब तक कि उन्हें एकता और दुराव का अनुभव या ज्ञान, सामाजिक मूल्यों द्वारा न हो वह अपने आप में इतना महत्वपूर्ण नहीं है, जितना कि **वर्ग चेतना**। इस चेतना के अभाव में वर्ग कोई कार्यक्रम नहीं अपना सकता और न वह एक सम्पूर्ण सम्बोध ही बन सकता है। मजदूरों में जब तक यह चेतना नहीं आती कि वे मजदूर वर्ग के हैं और

उन्हें अपना जीवन स्तर ऊँचा करने के लिए कुछ कार्य करना है तब तक मजदूरों का अपना कोई वर्ग होता ही नहीं। वर्ग चेतना के अभाव में वर्ग एक खोखले मनोवैज्ञानिक तथ्य के अलावा कुछ भी नही है। किसी वर्ग विशेष के सदस्यों में समानता का भाव होता है और यही समानता का भाव उसमें वर्ग चेतना पैदा करता है जिसके कारण वर्ग क्रियाशील होता है **(नर्मदेश्वर प्रसाद,1973)**।

आधुनिक युग में आर्थिक विषमता की वजह से वर्ग चेतना पहले की अपेक्षा कहीं ज्यादा पैनी और प्रखर हो गयी है। यही कारण है कि वर्ग का विश्लेषण समाजशास्त्री और अर्थशास्त्री दोनों के लिए काफी महत्व रखता है। जर्मन समाजशास्त्री **मैक्स वेबर(1968)** ने आर्थिक और सामाजिक वर्ग के संदर्भ में कहा है कि सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था एक ही वस्तु हैं। वस्तुओं और सेवाओं का वितरण और व्यवहार एक विशेष आर्थिक व्यवस्था के अनुरूप होता हैं। सामाजिक व्यवस्था आर्थिक व्यवस्था पर आधारित होते हुए भी उससे भिन्न हैं और बहुत हद तक वह निर्णय करती हैं कि उसके समाज मे किस प्रकार की आर्थिक व्यवस्था चलाई जाय। इन्होंने वर्ग की व्याख्या सामाजिक अवसर (सोशल अपोरचुनिटीज) के आधार पर की हैं! समान अवसर प्राप्त लोगों का एक विशिष्ट वर्ग होता हैं। यह दूसरी बात हैं कि सामाजिक अवसर ज्यादातर आर्थिक व्यवस्था पर आधारित रहते हैं।

समस्या का कथन

विषमता मानवीय समाजों की विशेषता है। सामाजिक स्तरीकरण सामाजिक विषमता का ही एक विशिष्ट स्वरूप है। भारत में सामाजिक स्तरीकरण एक विशेष रूप में पाया जाता है, जिसे जाति व्यवस्था कहा जाता है। जाति व्यवस्था सामाजिक स्तरीकरण की एक ऐसी व्यवस्था है जिसका विकास भारत के बाहर कहीं देखने को नहीं मिलता है। भारत में यद्यपि वर्ण व्यवस्था आदर्श संरचना है तथापि जाति व्यवस्था ही व्यवहारिक रूप में व्यक्ति के प्रस्थिति एवं भूमिका का निर्धारण करती है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में उठायी गयी समस्या का विषय है **''स्तरीकरण में हो रहे परिवर्तन के प्रतिमान''** हम यह जानना चाहते है कि ग्रामीण भारत में बिहार राज्य में विषमता के विशेष संदर्भ में जाति व्यवस्था किस तरह से एक प्रमुख तत्व के रूप में उभर कर आयी है जिसके फलस्वरूप समस्त सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक व व्यवहारिक पहलू प्रभावित हुये है। इस राज्य में चूँकि पिछड़ी जातियों का राजनैतिक शक्ति के रूप में उभरना एक विशेष घटना है, अतः इस बात का अध्ययन करना कि इस राज्य मे प्रभावी जाति के उभरते हुए प्रतिमान क्या होगें तथा यह प्रतिमान ग्रामीण भारत के सम्पूर्ण सामाजिक संरचना को किस तरह प्रभावित करेगा।

अध्ययन का उद्देश्य

अध्ययन हेतु चुने गये दोनों ग्राम-नयाभोजपुर व काजीपुर-कुछ अर्थो में विलक्षण हैं, परन्तु साथ ही साथ वृहत स्तर पर बिहार राज्य में व्याप्त स्तरीकृत सामाजिक व्यवस्था का प्रतिनिधित्व करते है जिसके परिणामस्वरूप प्रस्तुत अध्ययन हेतु अनुसंधानकर्ता आकृष्ट हुआ। नयाभोजपुर ग्राम एक ऐतिहासिक गांव हैं जिसकी अपनी एक परम्परा व संस्कृति हैं। इस गांव की जनांकिकी दृष्टिकोण से यह विशेषता हैं कि इसमें बिहार राज्य की सबसे प्रभावी जाति राजपूत का अभाव हैं, परिणामस्वरूप राजनैतिक एवं आर्थिक दृष्टिकोण से शक्ति एवं सत्ता के केन्द्र पर ब्राह्मणों और पिछड़ी जातियों का आधिपत्य रहा हैं। आर्थिक रूप से यह ग्राम वाणिज्य एवं व्यापार के क्षेत्र मे महत्वपूर्ण स्थान रखता हैं। दूसरी ओर काजीपुर ग्राम मे पिछड़ी जातियों का बाहुल्य है तथा जनसंख्यात्मक दृष्टिकोण से अधिक होने के कारण राजनैतिक सत्ता के केन्द्र में है। इस प्रकार सभी राजनैतिक दल अपने प्रभाव में लेने के लिए प्रेरित रहते हैं। इस प्रकार जनसंख्यात्मक दृष्टिकोण से यह दोनों ग्राम एक दूसरे से पर्याप्त रूप से भिन्न है। यह भिन्नता ही तुलनात्मक रूप से अध्ययन के लिए दृष्टिकोण प्रदान करती है। प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य है:-

(1) इस बात का अध्ययन करना कि ग्रामीण भारत में स्तरीकृत समाज का स्वरूप किस प्रकार का है और उसके कौन-कौन से आयाम है।

(2) वर्तमान समाज के स्तरीकृत व्यवस्था में आ रहे प्रमुख परिवर्तनों की व्याख्या करना तथा उन तत्वों का वर्णन करना जो कि परिवर्तन में बाधा उत्पन्न कर रहे हैं।

(3) जातीय गतिशीलता बढ़ने से सामाजिक स्तरीकरण के स्वरूप में कौन-कौन से परिवर्तन आ रहे हैं।

(4) पिछड़ी जातियों की स्तरीकृत समाज में क्या स्थिति है।

(5) विभिन्न जातियों में जातिगत चेतना का उदय का अध्ययन करना।

(6) उच्च एवं पिछड़ी जातियों के मध्य अन्त:सम्बन्धों की व्याख्या करना तथा यह स्पष्ट करना कि क्या वे वास्तव में एक ही प्रकार के सामाजिक स्तरीकरण के स्वरूप का प्रतिनिधित्व करते हैं या फिर उनमें भी विभिन्न प्रकार के स्तरीकृत समाज पाये जाते हैं।

(7) भूमि तथा अन्य भौतिक साधनों के स्वामित्व नियंत्रण और अपयोग से सम्बन्धित विषमताओं का अध्ययन करना।

(8) कृषि वर्ग की संरचना के संदर्भ में जाति व्यवस्था का अध्ययन करना।

(9) वाणिज्य और व्यापार सम्बन्धी क्रियाएँ एवं उसका प्रभाव किस तरह का है।

(10) शक्ति एवं सत्ता के सम्बन्ध व विभिन्न समुदायों में किस प्रकार का है।

उपकल्पनाएं

शोधकर्ता इस शोध कार्य हेतु क्षेत्रीय अध्ययन करने से पूर्व अध्ययन के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए कुछ उपकल्पनाओं का निर्माण किया जिसकी जांच शोधकर्ता अपने क्षेत्रीय कार्य के दौरान किया। इन सभी उपकल्पनाओं की सत्यता एवं इसकी उपयुक्तता की चर्चा आगे के अध्यायों में किया गया है। इस अध्ययन से पूर्व इसके उद्देश्य को ध्यान में रखकर जिन उपकल्पनाओं का निर्माण किया गया, वे निम्न हैं:-

(1) - स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जातीय गतिशीलता में अत्यधिक तेजी आयी है।

(2) - विभिन्न जातियों में जातिगत चेतना का उदय हुआ है।

(3) - ग्रामीण सामाजिक स्तरीकरण के आधार पर जाति व्यवस्था वर्तमान समय में परिवर्तन की ओर अग्रसर है।

(4) - जाति में पाये जाने संरचनात्मक परिवर्तन ने सामाजिक गतिशीलता को बढ़ावा दिया है।

(5) - जाति संगठनों ने विभिन्न जातियों के मध्य जातिगत चेतना के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

(6) - भारत में आज भी जाति व्यवस्था सामाजिक स्तरीकरण का एक प्रमुख प्रकार है, जो अन्य प्रकारों के ऊपर हावी है।

(7) - पिछड़ी जातियों/अनुसूचित जातियों के मध्य आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है तथा संस्कृतीकरण की प्रक्रिया तेज हुई है।

अध्ययन पद्धति (मेथोडॉलाजी)

अध्ययन पद्धति किसी भी विज्ञान का मुख्य आधार होता है। अध्ययन पद्धति के अन्तर्गत हम उन आधारभूत प्रश्नों को अपने समक्ष रखते हैं जिनमें अनुसंधान पद्धतियों के तार्किक आधार हमारे चिंतन के विषय होते हैं। इसके अन्तर्गत हम अनुसंधान पद्धतियों के वैज्ञानिक या तार्किक आधार ढूढ़ते हैं। पद्धति वह प्रणाली होती है, जिसके द्वारा अनुसंधानकर्ता अपने अध्ययन विषय की विवेचना करता है, अर्थात पद्धति अध्ययन की वैज्ञानिक प्रणाली है। पद्धति का सीधा सम्बन्ध अनुसंधान कार्य की सम्पूर्ण प्रकिया से होता है। वैज्ञानिक अनुसंधान, जिसको हम रचनात्मक कल्पनाशक्ति से आरंभ करते हैं और जिसका समापन वैज्ञानिक नियमों के प्रतिपादन से होता है, एक सम्पूर्ण प्रकिया है, और इसी से अध्ययन पद्धति का सीधा सम्बन्ध है। अध्ययन पद्धति के तीन मुख्य लक्षण होते हैं (1) तथ्यों का तर्कपूर्ण एवं शुद्ध वर्गीकरण तथा उनके सह सम्बन्ध एवं अनुक्रम का

निरीक्षण (2) उपकल्पना के सहारे वैज्ञानिक नियमों की खोज तथा (3) आत्म आलोचना तथा विज्ञान के लिए तथा वैज्ञानिक साधनों में विश्वास रखने वाले सभी व्यक्तियों के लिए समान रूप से सिद्ध अन्तिम कसौटी प्रस्तुत करना।

प्रस्तुत अध्ययन में **प्रतिदर्श** (सैम्पुल) हेतु चुने गये दोनों ग्रामों में सामाजिक विषमता के विशेष संदर्भ में सामाजिक स्तरीकरण में हो रहे परिवर्तन के प्रतिमानों का अध्ययन करना है, अत: इस संदर्भ में प्रकार्यात्मक व ऐतिहासिक पद्धति का प्रयोग समस्या के स्वरूप के निर्धारण में तथा मूल कारक की पहचान करने में पर्याप्त सहायता करेगा। साथ ही दोनों ग्रामों का तुलनात्मक अध्ययन, तुलनात्मक पद्धति का प्रयोग करते हुए, समस्या के विश्लेषण में विशेष रूप से सहायता करेगा।

मुख्य रूप से यह अध्ययन **प्रकार्यात्मक पद्धति** पर आधारित है। इस पद्धति के अन्तर्गत समाज के विभिन्न भागों के परस्पर सम्बन्धों को समझना आवश्यक होता है। अत: प्रकार्यात्मक पद्धति यह बताता है कि किसी एक भाग में परिवर्तन का अन्य भागों पर तदनुरूप प्रभाव पड़ता है। दूसरा, प्रकार्यात्मक पद्धति के अन्तर्गत इस बात को समझने का प्रयत्न किया जाता है कि किसी भी संरचना की विभिन्न इकाइयाँ किस प्रकार सम्बन्धित हैं और किस प्रकार वे एक ऐसी समन्वयकारी व्यवस्था का निर्माण करती है, जिससे कि समाज जटिल रूप में बना रहता है। तीसरे, प्रकार्यात्मक पद्धति के अन्तर्गत किसी भी प्रघटना के समाज पर पड़ने वाले प्रभावों का विश्लेषण किया जाता है। प्रकार्यात्मक पद्धति के अन्तर्गत हम वर्तमान का अध्ययन करते है, क्योंकि किसी भी प्रघटना के प्रभावों का आनुभाविक प्रभाव तभी संभव है, जबकि घटना या वस्तु विद्यमान हों। मानवशास्त्रियों में **मैलिनोस्की** व **रेडक्लिफब्राउन** के नाम व समाजशास्त्रियों में **मर्टन पारसंस** के नाम इस पद्धति के सम्बन्ध में उल्लेखनीय है। **किंग्सले डेविस** ने तो प्रकार्यात्मक पद्धति को ही समाजशास्त्रीय पद्धति मानते हुए स्तरीकरण को प्रकार्यात्मक उपागम के आधार पर समझाया है। चूँकि यह पद्धति इस मान्यता पर आधारित है कि समाज के विभिन्न पहलू एक दूसरे से अन्तर्सम्बन्धित है और एक दूसरों को प्रभावित करते हैं। अत: इस अध्ययन में इस पद्धति का प्रयोग करते हुए सामाजिक स्तरीकरण के विभिन्न पहलुओं के बीच अन्तर्सम्बन्धों और तद्नुरूप उनके प्रभावों का अध्ययन किया गया है।

समाज में निरन्तर परिवर्तन होते रहते हैं। अत: ऐसी स्थिति में समाज की संरचना और प्रकार्यों को समझने में कठिनाई प्रतीत होती है। इसको ठीक से समझने के लिए इसमें हो रहे परिवर्तन को समझना आवश्यक है। साथ ही समाज भी आज की

संरचना को समझने के लिए इससे पहले की स्थिति को जानना आवश्यक होता है। ऐतिहासिक तथ्यों और घटनाओं को आधार बनाकर आधुनिक व नई चीजों को समझना आसान हो जाता है। **ऐतिहासिक पद्धति** में समाज के अध्ययन के लिए इतिहास को आधार बनाया जाता है। इतिहास अतीत के सामाजिक जीवन को क्रमबद्ध ढ़ंग से समझने का प्रयास है। इस क्रमबद्ध वर्णन से हमें अतीत के सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और अन्य स्थितियों का पता चलता है। साथ ही साथ तब के सम्बन्धों के बारे में भी पता चलता है। अतीत के सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक व सांस्कृतिक सम्बन्धों के आधार पर वर्तमान के सम्बन्धों का पता चलता है। ऐतिहासिक पद्धति आगमन के सिद्धांतों के आधार पर उन सामाजिक कारकों की खोज करती है जिसके कारण वर्तमान समाज की ऐसी स्थिति है। भूतकाल की सामाजिक घटनाओं और आज की सामाजिक घटनाओं के सम्बन्ध का भी इससे जानकारी प्राप्त होती है। इन सम्बन्धों के अध्ययन से उन नियमों का भी पता चलता है जिनके आधार पर परिवर्तन के सामान्य नियमों का पता लगाया जा सके। ऐतिहासिक पद्धति के आधार पर अध्ययन के लिए ऐतिहासिक तथ्यों को एकत्रित किया जाता है। यह तथ्य व्यक्ति अध्ययन तथा लिखित प्रलेखों के आधार पर प्राप्त किया जाता है। प्रस्तुत शोध में दोनों ग्रामों के कुछ चुने हुए व्यक्तियों से ग्रामीण विषमता से सम्बन्धित जानकारी प्राय: की गयी है। साथ ही लिखित प्रलेखों के आधार पर जानकारी प्राप्त की जाती है। चूँकि अध्ययनकर्ता का उद्देश्य सामाजिक स्तरीकरण में हो रहे परिवर्तनों को जानना है, अत: ऐतिहासिक पद्धति सामाजिक स्तरीकरण के बदलते हुए रूपों के अध्ययन में बहुत सहायक सिद्ध होगा।

दोनों ग्रामों का तुलनात्मक अध्ययन हेतु **तुलनात्मक पद्धति** का प्रयोग किया गया है इस पद्धति में घटनाओं के बीच आपसी सम्बन्ध और उनके कारणों को दर्शाया जाता है। यदि विभिन्न स्थितियों में किसी विशेष घटना का अध्ययन करे और उनके कारणों का पता करें तो वह कारण जो भिन्न में उपस्थित हो, उस विशेष घटना के कारण हो सकते है। इस तरह किसी घटना की विभिन्न परिस्थितियों में तुलना करके उनके कारणों का पता लगाते हैं। तुलनात्मक पद्धति से किसी विशेष घटना के विभिन्न परिस्थितियों में उपस्थित कारणों का अध्ययन करते हैं। इस तरह से सुनियोजित ढंग से किये गये अंध्ययन से हम ज्ञात करते है कि किसी घटना के क्या कारण थे, या उन घटनाओं में क्या समबन्ध है। तुलनात्मक पद्धति से अध्ययन करने के लिए अनुमान का सहारा लेना आवश्यक होता है। बिना अनुमान के यह पता नहीं चल पायेगा कि किन कारणों की तुलना करें और बिना अनुमानों के कोई तुलना सफल भी नहीं हो सकती।

तुलनात्मक पद्धति में एक कठिनाई तब आती है जब हम समाज की तुलना करना चाहते हैं। एक पूरे समाज की दूसरे पूरे समाज से तुलना करना बहुत कठिन है। इसलिए पूरे समाज की तुलना न करके सामाजिक संस्थाओं की तुलना करना अधिक सरल होता है। अत: इस पद्धति द्वारा एक समाज की सामाजिक संस्था की किसी दूसरे समाज की उसी प्रकार की सामाजिक संस्था से तुलना की जा सकती है। सामाजिक संस्थाओं के आपसी सम्बन्ध भी तुलनीय होते हैं। परंतु एक समान दिखने वाली संस्थाएं भी वास्तव में एक सी न हों, ऐसा भी संभव है। अत: यह आवश्यक है कि सामाजिक संस्थाओं के उनके सामाजिक संदर्भ में ही समझा जाय अन्यथा उनकी तुलना पक्षपाती हो जायेगी। इसलिए ऐसी संस्थाओं की तुलना करनी चाहिये जो मिलते-जुलते समाजों में हों। अर्थात उन समाजों का पर्यावरण करीब-करीब समान हो, आर्थिक व्यवस्था एक सी हो, और राजव्यवस्था तथा धर्म भी एक सा ही हो। व्हीलर और जिन्सबर्ग ने आदिम समाजों में सामाजिक संस्थाओं का सुनियोजित तुलनात्मक पद्धति द्वारा अध्ययन किया। उन्होंने पहले इन समाजों में राजनीतिक व्यवस्था और सामाजिक स्तरण का विभिन्न आर्थिक व्यवस्थाओं पर आधारित आपसी सम्बन्धों को खोजा। कुछ तुलनात्मक अध्ययन औद्योगिक समाजों में सामाजिक स्तरण और सामाजिक गतिशीलता का सुनियोजित ढंग से किया गया है। इन अध्ययनों में **लिपसेट** और **बेनेडिक्स(1966)** के अध्ययन मुख्य हैं। अपने अध्ययन में इन लोगों ने बताया है कि औद्योगिक समाजों में किसान समाजों से अधिक गतिशीलता की अधिकता के कारण ही औद्योगिक समाजों को खुला समाज तथा किसान समाज को बंद समाज कहा जाता है।

तथ्यों का संकलन

उपरोक्त पद्धतियों का प्रयोग करते हुए अनुसंधानकर्ता ने अध्ययन सम्बन्धित तथ्यों को संग्रह करने के लिए विभिन्न प्रविधि का सहारा लिया है। प्रविधि (Technique) वह तरीका होता है जिसके द्वारा अध्ययन विषय से सम्बन्धित सूचनाओं तथा आँकड़ों को संग्रह किया जाता है। प्रविधि मनमाने ढंग से अपनाया गया तरीका नहीं अपितु एक सुव्यवस्थित व वैज्ञानिक तरीका होता है। इसका सम्बन्ध सम्पूर्ण अनुसंधान से नहीं अपितु वहीं तक सीमित होता है, जहां तक निर्भर योग्य तथ्यों सूचनाओं आदि को एकत्रित किया जाता है। प्रविधि सभी विधानों के लिए समान नहीं होती है। कौन सी प्रविधि या प्रविधियों को एक अनुसंधानकार्य में उपयोग एवं कभी-कभी अनुसंधानकर्ता के पास उपलब्ध साधनों पर भी निर्भर करता है।

अत: प्रस्तुत अध्ययन में सामाजिक स्तरीकरण में हो रहे परिवर्तन के प्रतिमान का अध्ययन करने के लिए अनुसंधानकर्ता ने सर्वप्रथम उपकल्पना पद्धति का प्रयोग करके कुछ

अपकल्पनाओं का निर्माण किया, जिसकी व्यवस्था ऊपर की जा चुकी है। उपरोक्त उपकल्पनाओं की जाँच करने के लिए अनुसंधानकर्ता ने छः महीने का गहन और सूक्ष्म ढंग से अध्ययन किया।

उपारोक्त दोनों गाँवों की विशिष्टताओं को ध्यान में रखते हुए दोनों गाँवों की समस्त परिवारों (1598) को **समग्र (युनिवर्स)** के रूप में लिया गया है तथा उनमें से 15 प्रतिशत अर्थात 240 परिवारों को **प्रतिदर्श (सैम्पुल)** के रूप में चयन किया गया है तथा उनसे प्राप्त उत्तरों के आधार पर अध्ययन का विश्लेषण किया गया है।

कोटा निदर्शन प्रविधि

सर्वप्रथम अनुसाधानकर्ता ने इस अध्ययन के लिए दोनों गाँवों के परिवारों के चुनाव के लिए कोटा निदर्शन प्रविधि का सहारा लिया। इस प्रविधि के द्वारा दोनों गाँवों एवं उसमें निवास करने वाली जातियों के परिवारों को समान प्रतिनिधित्व दिया गया है। अनुसंधानकर्ता ने कोटा निदर्शन प्रविधि के तहत सर्वप्रथम दोनों गाँवों में रहने वाले परिवारों को सामान्य वर्ग, पिछड़ा वर्ग, अनुसूचित जाति व अल्पसंख्यक वर्ग के आधार पर विभक्त कर किया। इसके पश्चात प्रत्येक वर्ग से 15 प्रतिशत परिवारों का चयन अनुसंधानकर्ता ने अपनी इच्छा से किया। तदोपरान्त इन्हीं चुनी हुई इकाइयों को निदर्शन के रूप में लेकर उनका गहन एवं सूक्ष्म अध्ययन किया। इस चयन में इस बात का पूर्ण ध्यान रखा गया है कि सभी जाति को पूर्ण प्रतिनिधित्व मिले एवं किसी भी जाति के प्रति भेद-भाव न हो। इसे तालिका के माध्यम से इस प्रकार दर्शाया गया है।

तालिका
दोनों गांवों के कुल परिवारों में सामान्य वर्ग, पिछड़ा वर्ग, अनुसूचित जाति व अल्पसंख्यक वर्ग के उत्तरदाताओं की संख्या

नयाभोजपुर	श्रेणी	परिवारों की संख्या	परिवारों की संख्या का 15 प्रतिशत
	सा0 वर्ग	216	32.40
	पि0 वर्ग	478	71.70
	अनु0जाति	180	27.00
	अल्प0वर्ग	383	57.45
काजीपुर	सा0 वर्ग	7	1.05
	पि0 वर्ग	151	22.65
	अनु0जाति	51	7.65
	अल्प0वर्ग	132	19.80
कुल	—	1,598	239.60

इस तालिका में नयाभोजपुर गांव में कुल परिवारों की संख्या 1,257 तथा काजीपुर गांव में कुल परिवारों की संख्या 341 है, अतः दोनों गांवों की कुल परिवारों की संख्या का योग **1,598** है। तालिका से स्पष्ट है कि दोनों गांवों की परिवारों की कुल संख्या का 15 प्रतिशत अर्थात 239.60 **(240)** परिवारों को प्रतिदर्श के रूप में लेकर अध्ययन किया गया है। उत्तरदाताओं का चयन परिवार की संख्या के आधार पर किया गया है।

साक्षत्कार अनुसूची

एक शोध प्रविधि के रूप में साक्षात्कार अनुसूची प्रश्नों की एक सूची होती है जिसके उत्तर उत्तरदाता स्वयं देता है। हमारे द्वारा तैयार की गयी साक्षात्कार अनुसूची में खुले सिरे वाले तथा बहुवैकल्पिक प्रश्न दोनों हैं। प्रस्तुत अध्ययन के लिए विशेष रूप से तैयार की गयी साक्षात्कार अनुसूची मिश्रित है। इन प्रविधियों का प्रयोग कर इन दोनों गॉवों के सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक जीवन से सम्बन्धित सभी तथ्यों का संकलन किया।

यद्यपि साक्षात्कार अनुसूची प्रविधि हमारी प्रमुख प्रविधि है, फिर भी हमने क्षेत्रीय कार्य के दौरान सूचनादाताओं से सम्पर्क स्थापित कर उनसे उनके परिवार, विवाह, परम्परागत पेशा और उसमें हुए परिवर्तन, राजनीतिक परिवर्तन, छुआ-छूत की भावना आदि से सम्बन्धित प्रश्नों पर अनौपचारिक ढंग से बातचीत करने के लिए इसका प्रयोग मौखिक ढंग से किया। कुछ ऐसे भी प्रश्न अवश्य पूछे गये जो साक्षात्कार अनुसूची में सम्मिलित नहीं है। साक्षात्कार अनुसूची से उन सूचनादाताओं से तथ्य सम्बन्धी जानकारी ली गयी जो पढ़े लिखे और सूचना देने में सक्षम थे। साथ ही कुछ ऐसे भी सूचनादाताओं से तथ्य सम्बन्धी जानकारी ली गयी जो पढ़े लिखे नहीं थे। यह उल्लेखनीय है कि हमारा शोध कार्य अनुसूची पर ही निर्भर नहीं है, जैसा कि समाजशास्त्रीय अनुसंधानों में होता रहा है। मैने मानववैज्ञानिक दृष्टिकोण अर्थात अवलोकन प्रविधि को भी अपनाया है।

अवलोकन प्रविधिः— प्रस्तावित शोध समस्या को ध्यान में रखते हुए हमने अवलोकन प्रविधि का प्रयोग किया है। प्रस्तुत शोध की प्रकृति एवं स्वरूप की वजह से हमने **सहभागी** एवं **असहभागी** दोनों प्रकार के अवलोकन प्रविधि का प्रयोग किया है। सहभागी अवलोकन के आधार पर हमने क्षेत्र विशेष के जातीय राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक आदि पहलुओं के विषय में जानकारी प्राप्त किया। साथ ही साथ असहभागी अवलोकन की सहायता से हमने तटस्थ रहकर व अवलोकन कर उन तथ्यों को आसानी से जान पाया जिसका जबाब सूचनादाता साक्षात्कार विधि द्वारा देने में असमर्थ या घबराते थे।

टेपरिकार्ड

जीवनवृत तैयार करने के लिए टेप का सहारा लिया। सूचनादाताओं द्वारा अध्ययन विषय सम्बन्धित जानकारी को टेप के माध्यम से संकलित किया। अध्ययन में वैषयिकता लाने की दृष्टि से जीवनवृत्त में उनके द्वारा कही गयी हूबहू बातों का उन्हीं के शब्दों में रखा।

कतिपय सूचनादाताओं से एकत्र किया हुआ जीवनवृत्त का वर्णन परिशिष्ट 'क' में किया गया है। आवश्यकतानुसार जीवनवत्त के महत्वपूर्ण अंशों को शोध प्रबन्ध के कुछ अध्यायों में जिक्र किया गया है।

अध्ययन की सीमाएं

सामाजिक शोध के दौरान विभिन्न स्तरों पर अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। समस्या से सम्बन्धित अनुसंधान प्रविधि के निर्माण, उत्तरदाताओं के उपलब्ध होने, अभिलेखों को प्राप्त करने, विश्लेषण एवं विवेचन तथा प्रतिवेदन के विभिन्न चरणों पर कुछ समस्याएं आ जाती हैं। अतएव शोध अध्ययन की प्रस्तुतीकरण में सीमाबद्ध होना जरूरी है। प्रस्तुत अध्ययन की सीमाएं निम्न हैं।

प्रथम, मैने प्रस्तुत अध्ययन को दोनों क्षेत्रों तक में सामाजिक स्तरीकरण के कुछ पहलुओं तथा उनमें हो रहे परिवर्तनों तक ही सीमित रखा। पूरे बिहार राज्य में इसका पता लगाना उद्देश्य नहीं था।

दूसरा, प्रस्तुत अध्ययन के निष्कर्ष ऐसे ही अन्य क्षेत्रों पर लागू हो सकते हैं। विशेषकर उन समाजों पर जहां की संस्कृति भिन्न है, हम अपने निष्कर्ष को आरोपित नहीं कर सकते हैं।

तथ्यों का संगठनः– यह शोध प्रबन्ध **तीन खण्डों** में विभक्त है। खण्ड-क में अध्ययन की पृष्ठभूमि तथा खण्ड-ख में दो व खण्ड-ग में चार अध्याय हैं। इस प्रकार इस शोध प्रबन्ध में कुल छः अध्याय है।

अध्याय–एक में अध्ययन हेतु चुने गये दोनों गाँवों का संक्षिप्त परिचय, जनांकिकी विशेषताएं, विभिन्न जातियों का संक्षिप्त विवरण, उनका व्यवसाय, सामाजिक संरचना आदि का विवरण है।

अध्याय–दो में, अध्ययन क्षेत्र की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक पृष्ठभूमि का विवरण है। यह विवरण आजादी के पूर्व तथा आजादी के बाद, दोनों को समाहित करता है।

अध्याय–तीन में, दोनों क्षेत्रों के बदलते हुए आर्थिक प्रतिमान का अध्ययन किया गया है। इन दोनों क्षेत्रों में व्यवसायिक गतिशीलता देखी जा रही है। विभिन्न जातियां अपनी परम्परागत व्यवसाय को छोड़कर अन्य व्यवसाय को अपना रही है।

अध्याय–चार में, आर्थिक संरचना में हुए परिवर्तनों के कारण राजनीतिक संरचना में हुए परिवर्तनों का अध्ययन किया गया है। औद्योगीकरण, नगरीकरण, शिक्षा में प्रगति व लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया के फलस्वरूप राजनीतिक संरचना में परिवर्तन आया है।

अध्याय–पांच में, आर्थिक व राजनीतिक संरचना में हुए परिवर्तन के फलस्वरूप लोगों के व्यवहार व विचार में जो परिवर्तन आया है, उनका विवरण है।

अध्याय–छः में, सारांश व निष्कर्ष, उपकल्पनाओं का परीक्षण तथा उभरते प्रतिमान का उल्लेख किया गया है।

इसके बाद **संदर्भ ग्रन्थ सूची** व **परिशिष्ट** को रखा गया है।

अध्याय-1

अध्ययन क्षेत्र का संक्षिप्त परिचय

अध्याय–1

अध्ययन क्षेत्र का संक्षिप्त परिचय

वर्तमान अध्ययन का क्षेत्र बिहार राज्य के बक्सर जिला में स्थित 'नयाभोजपुर' और 'काजीपुर' ग्राम है। प्रतिदर्श हेतु चुने गये यह दोनों ग्राम कुछ अर्थों में विलक्षण है, परंतु साथ ही साथ वृहत स्तर पर बिहार राज्य में व्याप्त स्तरीकृत सामाजिक व्यवस्था का प्रतिनिधित्व करते हैं जिसके परिणामस्वरूप अनुसंधानकर्ता आकृष्ट हुआ। इन दोनों ग्रामों की जनांकिकी दृष्टिकोण से एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इनमें परम्परागत जातिगत व्यवस्था में उच्च समझे जाने वाले जातियों का अभाव है। परिणामस्वरूप राजनैतिक एवं आर्थिक दृष्टिकोण से शक्ति एवं सत्ता के केन्द्र पर पिछड़ी जातियों एवं मुस्लिमों का आधिपत्य रहा है। इन दोनों ग्रामों का ऐतिहासिक, भौगालिक, जनसंख्यात्मक आदि दृष्टिकोण से संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है।

नयाभोजपुर

गांव बिहार राज्य के बक्सर जिलान्तर्गत डुमरॉव प्रखण्ड मुख्यालय के उत्तर दिशा में बक्सर-पटना मुख्य सड़क पर बक्सर से करीब 15 किलोमीटर पूरब मुख्य सड़क से उत्तर, की ओर स्थित है। यह गाँव पूर्व रेलवे के मुख्य लाइन से 2 किलोमीटर उत्तर पटना और मुगलसराय के मध्य स्थित है। इस गाँव का क्षेत्रफल **48.43** हेक्टेयर है और जनसंख्या **14,948** है।

पहले यह गांव शाहाबाद जिलान्तर्गत बक्सर अनुमंडल में था, जिसका जिला मुख्यालय आरा था। 1972 में यह विभाजित होकर भोजपुर जिलान्तर्गत आ गया। तत्पश्चात तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री लालू प्रसाद यादव के कार्यकाल में पुनः भोजपुर जिला विभक्त हुआ, और इस प्रकार नयाभोजपुर नवनिर्मित बक्सर जिला के अन्तर्गत आया। यह गांव उत्तर प्रदेश के बलिया जिला सीमा को उत्तर की ओर छूता है। बलिया मार्ग (सड़क मार्ग) 45 कि0 मी0 पश्चिम उत्तर दिशा में तथा पैदल मार्ग 20 कि0 मी0 उत्तर दिशा में स्थित है। इस प्रकार यह गाँव उत्तर प्रदेश के सीमा पर स्थित है।

नयाभोजपुर एक ऐतिहासिक गांव है, जिसकी अपनी एक परम्परा एवं संस्कृति है। इस गांव को भोजवंशी राजा रूद्र प्रताप नरायण ने बसाया था। आज भी राजाभोज का किला जो **नवरत्नगढ़** के नाम से विख्यात है, एक खंडहर के रूप में गांव के उत्तरी छोर पर गंगा के किनारे विद्यमान है। इस किले के निर्माण के पीछे एक किवदंती है कि जब धार (उज्जैन) के राजा रूद्र प्रताप नरायण गया में पिंडदान करके लौट रहे थे तो उनका श्रृंगाल अचानक यहीं रूक गया। अतः यह माना गया कि यह भूमि प्रतापी भूमि है, इसी कारण श्रृंगाल आकर यहीं रूका। इसका जिक्र अरबी भाषा में लिखित ऐतिहासिक ग्रंथ **तबारिख उज्जैनिया** में मिलता है। ऐसा कहा जाता है कि जब इस

किले का निर्माण कार्य चल रहा था, तो धार नगरी की राजमहल को मुगलों ने गिरवा दिया और इस पर कब्जा कर लिया।

ग्राम्य नियोजन:- इस गांव की एक मुख्य विशेषता है कि इसे नियोजित ढंग से बसाया गया था। इस गांव के बाहरी क्षेत्र में चारों ओर **कमेरा** अर्थात लठैत वर्ग को बसाया गया था। मध्य में **वणिक वर्ग** को बसाया गया था। गांव के चारों ओर सुरक्षा की दृष्टि से चानमारी बने हुये थे, जिसपर खड़ा होकर सुरक्षाकर्मी गांव की निगरानी करते थे। यह गांव पूरब से पश्चिम लम्बा है। पूरब से पश्चिम तीन मुख्य गलियां करीब 40 फीट चौड़ी स्थित है। इन गलियों को उत्तर दिशा से दक्षिण दिशा में काटने वाली उपगलियां बनायी गयी है। इसी आधार पर एक कहावत है- **बावन गली तिरेपन बाजार दीया (दीप) जले छप्पन हजार।** नया भोजपुर गांव एक परगना था, जिसमें कई मौजे थे। इन मौजों में सलारपुर, हवेलीपुर, उस्मानपुर, हाकिमपुर आदि थे, जो आज बेचिरागी हो गये हैं, अर्थात इनका अस्तित्व समाप्त हो चुका है।

जनांकिकीय विशेषताएं

इस गांव की जनसंख्या **14,948** है। इस कुल जनसंख्या में **8,672** हिन्दू तथा **6,276** मुस्लिम है। इस गांव की जनसंख्यात्मक दृष्टिकोण से यह विशेषता है कि इसमें हिन्दू और मुस्लिम, दोनों समुदायों के लोग निवास करते हैं। साथ ही हिन्दू सामाजिक संगठन के द्वितीय सोपान के अन्तर्गत आने वाली क्षत्रिय जाति का अभाव रहा है। वर्तमान में इनकी कुछ संख्या हो गई है। परिणामस्वरूप राजनैतिक व आर्थिक दृष्टिकोण से शक्ति एवं सत्ता के केन्द्र पर ब्राह्मणों और पिछड़ी जातियों को आधिपत्य रहा है।

यद्यपि लम्बे अर्से से हिन्दू और मुस्लिम समुदायों के साथ साथ रहने और निकट साहचर्य के कारण वे एक दूसरे के घनिष्ट सम्पर्क में आये हैं और उनकी संस्कृतियां कुछेक क्षेत्रों में अंतर्सम्बन्धित है, फिर भी दोनों समुदायों का अपना भिन्न सामाजिक धार्मिक अस्तित्व है। इस गांव की जनसंख्या में मुसलमान अल्पसंख्यक हैं, किन्तु सामाजिक धार्मिक मामलों में उनका समूह परम सुगठित है। सभी मुसलमान कट्टर सुन्नी शाखा के हैं। इनमें सम्पत्ति और पूँजी की दृष्टि से कोई भारी असमानता नहीं है, परिणामत: मुसलमान समुदाय में वर्ग भेद का उतना स्पष्ट स्वरूप देखने को नहीं मिलता है, जितना हिन्दू समुदाय में मिलता है। यद्यपि यह सच है कि मुसलमान समुदाय भी हिन्दू समुदाय के जाति स्तरीकरण से प्रभावित हुए हैं। गांव में किसी प्रकार के गंभीर अन्तर समूह तनाव या संघर्ष अब तक देखने व सुनने को नहीं मिला है। हिन्दू मुस्लिम समुदायों के बीच में जहां तक गांव के बड़े बुजुर्गों को याद है, केवल दो ही बड़े झगड़े हुए। इसके बारे में विस्तार से लोगों को याद नहीं, पर यह कहा जाता है कि वह तनाव थोड़े समय के लिए था और शीघ्र ही संघर्षरत समूहों में सम्बन्ध सामान्य हो गये।

नया भोजपुर गाँव में कुल परिवारों की संख्या 1,257 है। जिसमें मुस्लिम परिवारों की संख्या सबसे अधिक है। हिन्दुओं में निम्नलिखित जातियाँ इस प्रकार हैं:- ब्राह्ममण, कायस्थ, राजपूत, यादव, कोइरी, बनिया, सुनार (स्वर्णकार), हालवाई, बढ़ई, कोहार, कुम्हार, तुरहा, नाई, मल्लाह, गोड़, हरिजन, पासवान, धोबी, मेहतर, डोम, नट-का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है (देखिए तालिका संख्या-1)

ब्राह्मणः— इस गांव में ब्राह्मण परिवारों की प्रतिशत 15.91 है। यह जाति संख्यात्मक दृष्टिकोण से सबसे अधिक है। इनका मुख्य व्यवसाय कृषि है।

कायस्थः— कायस्थ परिवारों का प्रतिशत 0.79 है। यह जाति कृषि कार्य के अलावा नौकरी पेशा से भी सम्बन्धित है। कुछ लोग शिक्षक पेशा से भी सम्बन्धित हैं।

राजपूतः— नयाभोजपुर गांव में जातिगत सोपानकम में द्वितीय स्थान पर आनेवाली इस जाति की परिवारों का प्रतिशत 0.47 है।

यादवः— इस गांव में यादव परिवारों का प्रतिशत 8.35 है। यह जाति कृषि कार्य में संलग्न है। साथ ही व्यवसाय की ओर भी अग्रसर है।

कोइरी (कुशवाहा):— कोइरी जाति की परिवारों का प्रतिशत 7.95 है। इस जाति का मुख्य व्यवसाय कृषि है।

सुनारः— सुनार जाति की परिवारों का प्रतिशत 4.61 है। यह जाति अधिकांशतया अपनी परम्परागत व्यवसाय में लगा है। सुनारी कार्य के अलावा ये जातियां बर्तन बेचनें का भी कार्य करती है। इस गांव में मेडिकल की दुकानें ज्यादातर इसी जाति के लोगों का है।

बनियाः— बनिया जाति की परिवारों का प्रतिशत 3.97 है। यह जाति इस गांव में व्यवसाय व व्यापार में अग्रणी है। इस जाति के अधिकांश लोग पैसेवाले (पूँजीपति) है। इनका द्वितीयक व्यवसाय कृषि है।

हलवाईः— इस गांव में हलवाई परिवारों का प्रतिशत 2.78 है। इस जाति के लगभग सभी परिवारों का मुख्य व्यवसाय मिठाई बनाना व बेचना है। ये लोग कुछ अपनी स्थायी दुकान भी बना रखे हैं व सालों भर चाय मिठाई की दुकान चलाते हैं एवं शादी व अन्य अवसरों पर आस-पास के गांवों में जाकर यही कार्य करते हैं।

बढ़ईः— बढ़ई परिवारों का प्रतिशत 1.03 है। इनका मुख्य कार्य फर्नीचर बनाना व बेचना है। मकान के छत बनाने हेतु पत्थर (पटियाँ) बेचने व्यवसाय भी करते हैं।

लोहारः— लोहार जाति के परिवारों का प्रतिशत 1.43 है। यह जाति भी अपने परम्परागत पेशे से जुड़ी है। वेल्डिंग करने का कार्य भी करते है।

तुरहाः— तुरहा जाति का प्रतिशत 1.75 है। इनका मुख्य कार्य सब्जी बेचना है। आलू टमाटर और हरी सब्जियों, फलों का व्यवसाय करते हैं। इनका गौण कार्य कृषि है।

मल्लाहः— मल्लाह जाति के परिवारों का प्रतिशत 3.34 है। इस जाति के लोगों का परम्परागत व्यवसाय मछली मारना व बेचना है। परंतु वर्तमान समय में इस व्यवसाय के साधनों में कमी आने की वजह से कृषि व मजदूरी सम्बधी भी कार्य करने लगे हैं।

नाईः— नाई (ठाकुर) जाति के परिवारों का प्रतिशत 1.51 है। इस जाति के लोग अपने परम्परागत व्यवसाय 'हज्जाम' का ही कार्य करते है। वर्तमान में ये सैलून भी खोल रखे हैं। इसके अतिरिक्त ये जन्म, मुंडन, उपनयन, शादी, मृत्यु आदि अवसरों पर अपने जजमानों को अपनी सेवा देते है। जिसके बदले इन्हें पारितोषिक (वस्तु व अनाज के रूप में) प्राप्त होता है।

कुम्हारः— कुम्हार जाति के परिवारों का प्रतिशत 1.27 है। इस जाति के लोग अपने परम्परागत व्यवसाय से जुड़े हैं। इस पेशे में ह्रास के कारण ये लोग कृषि कार्य करने लगे हैं।

गोड़ः— गोड़ जाति के परिवारों का प्रतिशत 1.35 है। यह जाति जलावन के लकड़ी बेचने का कार्य करते हैं तथा आरा मशीनों पर मिस्त्री के रूप में लकड़ी चीरने का कार्य करते हैं।

धोबीः— इस गांव में रहने वाले धोबी परिवारों का प्रतिशत 1.11 हैं। इनका मुख्य व्यवसाय कपड़ा धुलना व इस्त्री करना है। वर्तमान में ये लोन्ड्री भी खोल रखे हैं।

हरिजनः— हरिजन जाति के परिवारों का प्रतिशत 7.95 है। ये अपने परम्परागत पेशा से जुड़े हुये हैं। रेलवे स्टेशनों पर घूम-घूम कर पॉलिश लगाने का कार्य करते हैं। साथ ही गुमटी लगाकर जूते बनाने का भी कार्य करते हैं । कृषि के मौसम में खेतों में मजदूरी व खेत काटने का भी कार्य करते हैं।

दुसाध(पासवान)ः— पासवान परिवारों का प्रतिशत 1.67 है। ये कृषक मजदूर के रूप में कार्य करते हैं। गांव में चौकीदारी का भी काम करते हैं।

नटः— नट जाति का प्रतिशत 1.11 है। ये मदारी दिखाने का कार्य करते हैं। ये कृषक मजदूर के रूप में भी कार्य करते हैं।

कमकरः— कमकर का प्रतिशत 0.71 है। इनका परम्परागत पेशा घरों में जाकर साफ करना तथा मजदूरी करना है। वर्तमान में इस कार्य में कमी आयी है।

डोमः— इस जाति के परिवारों का प्रींतिशत 0.79 है। इनका मुख्य व्यवसाय सुअर पालना तथा बॉस से बने सामान को बेचना है। इन्हें सामाजिक स्तरीकरण में सबसे निम्न श्रेणी में रखा गया है तथा समाज में इसे अछूत माना जाता है।

तालिका–1.1
नयाभोजपुर गांव की विभिन्न जातियों के परिवारों की संख्या

क्रम संख्या	जातियों का नाम	परिवारों की संख्या	प्रतिशत
1.	ब्राह्मण	200	15.91
2.	कायस्थ	10	0.79
3.	राजपूत	6	0.47
4.	यादव	105	8.35
5.	कोइरी	100	7.95
6.	सुनार	58	4.61
7.	बनिया	50	3.97
8.	हलवाई	35	2.78
9.	बढ़ई	13	1.03
10.	लोहार	18	1.43
11.	तुरहा	22	1.75
12.	मल्लाह	42	3.34
13.	नाई	19	1.51
14.	कुम्हार	16	1.27
15.	गोड़	17	1.35
16.	धोबी	14	1.11
17.	हरिजन	100	7.95
18.	दुसाध	21	1.67
19.	नट	14	1.11
20.	कमकर	9	0.71
21.	डोम	5	0.39
22.	मुस्लिम	383	30.46
कुल	–	1257	99.99

तालिका–1.1 से स्पष्ट होता है कि इस गांव में कुल परिवारों की संख्या (1,257) में मुस्लिम परिवारों की संख्या 383 (30.46%) है। इसके बाद यादव, कोइरी, हरिजन व बनिया के परिवारों की संख्या अधिक है। हिन्दुओं में ब्राह्मण जाति की परिवारों की संख्या अधिक है।

तालिका–1.2
नयाभोजपुर गांव की विभिन्न जातियों की जनसंख्या

क्रम संख्या	जातियों के नाम	जनसंख्या	प्रतिशत
1.	ब्राह्मण	2,280	15.25
2.	कायस्थ	79	0.50
3.	राजपूत	64	0.42
4.	यादव	1,178	7.88
5.	कोइरी	1,020	6.82
6.	सुनार	464	3.10
7.	बनिया	452	3.02
8.	हलवाई	318	2.12
9.	बढ़ई	107	0.71
10.	लोहर	206	1.37
11.	तुरहा	220	1.47
12.	मल्लाह	441	2.95
13.	नाई	174	1.16
14.	कुम्हार	154	1.03
15.	गोड़	154	1.03
16.	धोबी	155	1.03
17.	हरिजन	752	5.03
18.	दुसाध	223	1.49
19.	नट	136	0.98
20.	कमकर	61	0.40
21.	डोम	34	0.22
22.	मुस्लिम	6,276	41.98
कुल		14,948	100

तालिका-1.2 से स्पष्ट है कि नयाभोजपुर गाँव में हिन्दुओं में कुल 21 जातियाँ हैं। इन हिन्दू जातियों में जनसंख्यात्मक दृष्टिकोण से ब्राह्मण जाति की सबसे अधिक संख्या है। इसके बाद यादव, कोइरी जाति का स्थान आता है। तालिका से यह भी स्पष्ट होता है कि निम्न जाति समझी जाने वाली हरिजन जाति भी इस गाँव में पर्याप्त जनसंख्या में है। मुस्लिम जनसंख्या 6,276 है जो कुल जनसंख्या का 42 प्रतिशत है।

तालिका–1.3
हिन्दू मुस्लिम समुदायों की जनसंख्या

समुदाय	जनसंख्या	प्रतिशत
हिन्दू	8,672	58.01
मुस्लिम	6,276	41.98
कुल	14,948	99.99

तालिका-1.3 से स्पष्ट प्रतीत होता है कि नयाभोजपुर गाँव में कुल जनसंख्या में हिन्दू जाति की जनसंख्या 58प्रतिशत तथा मुस्लिम जाति की जनसंख्या 42 प्रतिशत है।

तालिका–1.4
सामान्य वर्ग, पिछड़ा वर्ग, अनुसूचित जाति व अल्पसंख्यक वर्ग की जनसंख्या

वर्ग	जनसंख्या	प्रतिशत
सामान्य वर्ग	2,423	16.20
पिछड़ा वर्ग	4,734	31.66
अनुसूचित जाति	1,515	10.13
अल्पसंख्यक वर्ग	6,276	41.98
कुल	14,948	99.97

तालिका-1.4 से स्पष्ट है कि संवैधानिक प्रावधानों के अनुरूप (आरक्षण के हिसाब से) जातियों को जो सामान्य, पिछड़ा व अनुसूचित जाति/जन जाति में वर्गीकृत किया जाता है, उस दृष्टिकोण से सामान्य वर्ग की जनसंख्या 16.20 प्रतिशत व पिछड़ा वर्ग की जनसंख्या 31.66 प्रतिशत है। अनुसूचित जातियों की जनसंख्या 10.13 प्रतिशत है। तालिका-2 से स्पष्ट है कि अनुसूचित जातियों में सबसे अधिक संख्या हरिजन का है। सामान्य जातियों में सबसे अधिक संख्या ब्राह्मण का है। पिछड़ी जातियों में यह संख्या यादव व कुशवाहा का है। इस गाँव में अनुसूचित जनजाति का अभाव है। सम्पूर्ण में देखा जाय तो इस तालिका से स्पष्ट होता है कि इस गाँव में पिछड़ी जातियों व मुसलमानों का प्रतिशत सबसे अधिक है।

तालिका–1.5
नयाभोजपुर गाँव में पुरूष व महिला जनसंख्या

लिंग	जनसंख्या	प्रतिशत
पुरूष	11,260	75.32
महिला	3,688	24.67
कुल	14,948	99.99

तालिका-1.5 से स्पष्ट है कि नयाभोजपुर ग्राम के कुल जनसंख्या में पुरूष और महिला की जनसंख्या क्रमशः 11,260 व 3,688 है । पुरूष जनसंख्या का प्रतिशत 75.32 तथा महिला जनसंख्या का प्रतिशत 24.67 है।

तालिका—1.6
हिन्दुओं में पुरूष व महिला जनसंख्या

लिंग	जनसंख्या	प्रतिशत
पुरूष	5,330	61.46
महिला	3,342	38.53
कुल	8,672	99.99

तालिका-1.6 से स्पष्ट है कि हिन्दू जाति जिसकी कुल जनसंख्या 8,672 है, जिसमें पुरूष व महिला जनसंख्या क्रमशः 5,330 तथा 3,342 है। पुरूष का प्रतिशत 61. 46 तथा महिला का प्रतिशत 38.53 है।

तालिका—1.7
मुस्लिमों में पुरूष व महिला जनसंख्या

लिंग	जनसंख्या	प्रतिशत
पुरूष	4,256	67.81
महिला	2,020	32.18
कुल	6,270	99.99

इसी प्रकार तालिका-1.7 से मालूम होता है कि कुल मुस्लिम जनसंख्या में पुरूष व महिला की जनसंख्या क्रमशः 4,250 व 2,020 है। पुरूष जनसंख्या का प्रतिशत 67.81 तथा महिला जनसंख्या का प्रतिशत 32.18 है।

लिंगानुपात:— किसी गांव की जनांकिकीय विशेषता को समझने में लिंगानुपात का एक विशिष्ट महत्त्व होता है। यह किसी समाज की सामाजिक और सांस्कृतिक स्थिति को समझने में सहायता प्रदान करता है । जनसंख्या की संरचना को लिंगानुपात के माध्यम से आसानी से व्याख्या की जा सकती है। लिंगानुपात से तात्पर्य प्रति एक हजार पुरूषों के अनुपात में स्त्रियों की जनसंख्या से है।

तालिका-1.5 से स्पष्ट है कि नयाभोजपुर गांव में पुरूष जनसंख्या 11,260 तथा महिला जनसंख्या 3,688 है। अतः

$$\text{लिंगानुपात} = \frac{\text{नयाभोजपुर गाँव में स्त्रियों की कुल संख्या}}{\text{नयाभोजपुर गाँव में पुरूषों की कुल संख्या}} \times 1000$$

$$= \frac{3688}{11260} \times 1000$$

$$= 327.53$$

$$= 327$$

इस प्रकार नयाभोजपुर गांव का लिंगानुपात 327 है, अर्थात एक हजार पुरूषों में स्त्रियों की संख्या 327 है। यद्यपि यह लिंगानुपात नयाभोजपुर गांव की है, लेकिन इस गांव में हिन्दुओं में लिंगानुपात 627 है तथा मुसलमानों में यह लिंगानुपात 474 है अर्थात हिन्दुओं में एक हजार पुरूषों में 627 स्त्रियाँ हैं तथा एक हजार मुस्लिम पुरूषों में 474 महिलाएं हैं।

तालिका–1.8
नयाभोजपुर गाँव में विभिन्न जातियों का श्रेणीकम

कम संख्या	उच्च हिन्दू	निम्न हिन्दू	अछूत
1.	ब्राह्मण	तुरहा	धोबी
2.	राजपूत	मल्लाह	हरिजन
3.	कायस्थ	नाई	दुसाध
4.	बनिया	कुम्हार	नट
5.	यादव	गोड़	डोम
6.	कोइरी	कमकर	
7.	सुनार		
8.	बढ़ई		
9.	लुहार		
संख्या	9	6	5

तालिका–1.8 से स्पष्ट है कि नयाभोजपुर गाँव में कुल हिन्दू जातियों को तीन श्रेणियों–उच्च, निम्न व अछूत में विभाजित किया गया है। तालिका से स्पष्ट है कि उच्च हिन्दू की कुल संख्या 9 है जबकि निम्न हिन्दू और अछूत की संख्या कमशः 6 और 5 है। यह तालिका शुद्धता व अशुद्धता की धारणा के आधार पर तैयार किया गया है।

तालिका–1.9
नयाभोजपुर गांव में मुस्लिम जातियों में श्रेणीक्रम

क्रम संख्या	उच्च मुस्लिम	निम्न मुस्लिम
1	पठान	कुरैशी
2	शाह	अंसारी
3	खां	हजाम
4	–	चूड़ीहार

तालिका–1.9 से स्पष्ट है कि नयाभोजपुर गांव में उच्च मुस्लिमों के अन्तर्गत 3 जातियां तथा निम्न मुंस्लिम के अन्तर्गत 4 जातियां आती है। यह श्रेणीक्रम आर्थिक, धार्मिक एवं सामाजिक सम्मान के आधार पर किया गया है।

काजीपुर

अध्ययन हेतु चुने गये दूसरा गाँव **'काजीपुर'** है। यह गाँव भी बक्सर जिलान्तर्गत डुमरांव प्रखण्ड मुख्यालय के उत्तर दिशा में बक्सर पटना मुख्य सड़क से 6 किलोमीटर दूर स्थित है। डुमरांव रेलवे स्टेशन से करीब 7 किलोमीटर उत्तर की ओर स्थित है। इस गांव का क्षेत्रफल 12.23 हेक्टेयर है और जनसंख्या 3754 है।

यह गाँव भी एक ऐतिहासिक गाँव रहा है। प्रारम्भ में यानी प्राचीन ऐतिहासिक काल में इस गाँव का नाम 'मंगोलपुर' था। लेकिन मुगल साम्राज्य काल में इस गाँव का नाम बदलकर काजीपुर कर दिया गया। यह गाँव पहले डुमरांव महाराज की जमींदारी के अन्तर्गत आता था। लेकिन जमींदारी उन्मूलन के पश्चात यहाँ मुसलमानों का वर्चस्व रहा। ये मुसलमान काजी के नाम से जाने जाते हैं। इन लोगों के पास अधिक मात्रा में भूमि थी। आजादी के पहले (60–70 वर्ष पहले) जमीन अधिग्रहण को लेकर काजी घराना और कायस्थों के बीच जबर्दस्त मुकदमेबाजी हुआ, जिसमें कायस्थों की जीत हुई। इस मुकदमेबाजी के फलस्वरूप काजी लोगों का जमीन जायदाद घर वगैरह नीलाम हो गया और इसको कायस्थों ने ले लिया। फलस्वरूप अधिकांश काजी लोगों का पलायन इस गाँव से हो गया, और जो किसी कारणवश यहाँ रह गये वे आज भी बिना जगह जमीन के हैं।

इस गाँव के ग्राम्य नियोजन के संदर्भ में मुख्य बात यह है कि गाँव के बाहरी क्षेत्र में चारों ओर निम्न जाति जैसे बिन्द, मल्लाह आदि बसे हुए हैं। मध्य में कायस्थ, बनिया, ब्राह्मण आदि जाति बसे हुए है। गाँव के बाहरी क्षेत्र के एक भाग (उत्तर) में मुसलमान व हरिजन बसे हुए हैं।

जनांकिकी विशेषता

इस गांव की जनसंख्या 3,754 है। इस कुल जनसंख्या में 2,452 हिन्दू हैं तथा 1,320 मुस्लिम हैं। इस गांव की जनसंख्यात्मक दृष्टिकोण से यह विशेषता है कि परम्परागत दृष्टि से जातीय सोपान में अपने को श्रेष्ठ मानने वाले ब्राह्मण जाति की संख्या

कम है। जबकि क्षत्रिय (राजपूत) जाति का अभाव है। ब्राह्मण परिवारों की कुल संख्या चार है। अतः राजनैतिक व आर्थिक दृष्टिकोण से पिछड़ी जातियों का प्रभुत्व है।

काजीपुर गांव में कुल परिवारों की संख्या **341** है जिसमें मुस्लिम परिवारो की संख्या अधिक है। इस गांव में निवास करने वाली हिन्दू जातियों में ब्राह्मण, कायस्थ, बनिया, यादव, कुशवाहा, बढ़ई, बिन्द, मल्लाह, गोंड, गड़ेरी, चौरसिया, पासवान, धोबी, निषाद, हरिजन है। इन क्षेत्र में निवास करने वाली इन जातियों के विषय में संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है:-

ब्राह्मणः— इस गांव के कुल परिवारों में ब्राह्मणों का प्रतिशत **1.17** है। यह जाति इस गांव की उच्च जाति मानी जाती है। इनका मुख्य व्यवसाय कृषि है। साथ ही इनमें कुछ लोग नौकरी भी करते हैं। एक घर गांव में पूजा-पाठ करके अपना भरण पोषण करता है।

कायस्थः— इस गांव में कायस्थ परिवारों की प्रतिशत **0.87** है। ये लोग इस गांव में शिक्षा के मामले में सबसे आगे हैं। शिक्षा में आगे होने के कारण नौकरियों में इस जाति के लोगों की संख्या अधिक है। इन लोगों के पास जमीन भी पर्याप्त मात्रा में है।

बनियाः— बनिया जाति की परिवारों की प्रतिशत **3.51** है। इस जाति के अधिकांश लोग व्यापार में लगे हुए हैं। इस गांव हेतु आवश्यक वस्तुओं को उपलब्ध कराते हैं। कृषि इनका गौण व्यवसाय है।

यादवः— यादव जाति की परिवारों का प्रतिशत **7.91** है। यह जाति कृषि कार्य व पशुपालन करती है। इनका मुख्य व्यवसाय दुग्ध सम्बन्धी व्यवसाय है। वृहत मात्रा में दुग्ध की बिक्री अन्य क्षेत्रों में होती है।

कोइरीः— इस गांव में कोइरी परिवारों का प्रतिशत **10.55** है। संभवतः इस जाति की परिवारों की संख्या सबसे अधिक है। इनका मुख्य व्यवसाय कृषि है। कृषि उत्पादन को बाजार में बेंच कर मुनाफा अर्जित करते हैं।

मल्लाहः— मल्लाह परिवारों का प्रतिशत **10.26** है। कुशवाहा के बाद संभवतः इनकी परिवारों की संख्या अधिक है। इनका मुख्य कार्य कृषि करना है। कृषि करके आजीविका चलाते हैं।

बिन्दः— बिन्द परिवारों का प्रतिशत **9.38** है। ये भी कृषि कार्य में संलग्न हैं। सब्जियां उगाकर ये बाजार में बेंचने के लिए शहरों में आते हैं।

हरिजनः— इस गांव में हरिजन परिवारों का प्रतिशत **6.45** है। ये लोग चमड़े के व्यवसाय में संलग्न हैं। चमड़े से जूता बनाकर नजदीक के कस्बों में बिक्री करते हैं। कृषक मजदूर के रूप में भी कार्य करते हैं।

दुसाधः— दुसाध जाति की परिवारों की संख्यात्मक प्रतिशत **3.22** है। इस जाति के लोग मजदूर के रूप में कार्य करते है।

गोंड:– गोंड परिवारों का प्रतिशत **2.05** है। ये लोग भी कृषि कार्य करते हैं। जलावन हेतु लकड़ी भी बेंचकर अपना जीवन यापन करते हैं।

धोबी:– धोबी परिवारों का प्रतिशत **0.87** है। ये लोग अपनी परम्परागत पेशा कपड़ा धोने का कार्य करते है।

चौरसिया:– चौरसिया परिवार का प्रतिशत **0.58** है। ये लोग गाँव में पान की दुकान चलाते है।

गड़ेरी:– गड़ेरी परिवारों का प्रतिशत **0.58** है। ये भेड़ पालकर व कृषक मजदूर के रूप में अपनी जीविका चलाते हैं।

तालिका–1.10
काजीपुर गाँव के परिवारों की संख्या

क्रम संख्या	जातियों का नाम	परिवारों की संख्या	प्रतिशत
1.	ब्राह्मण	4	1.17
2.	कायस्थ	3	0.87
3.	बनिया	12	3.51
4.	यादव	27	7.91
5.	कोइरी	36	10.55
6.	मल्लाह	35	10.26
7.	बिन्द	32	9.38
8.	हरिजन	22	6.45
9.	दुसाध	11	3.22
10.	गोंड	7	2.05
11.	निषाद	8	2.34
12.	बढ़ई	5	1.46
13.	चौरसिया	2	0.58
14	गड़ेरी	2	0.58
15.	धोबी	3	0.87
16.	मुस्लिम	132	38.70
कुल	–	341	99.99

तालिका–1.10 से स्पष्ट है कि काजीपुर गाँव में परिवारों की कुल संख्या 341 है। इसमें मुस्लिम परिवारों की संख्या 132 है। हिन्दू परिवारों की कुल संख्या (209) में कोइरी, मल्लाह, बिन्द, यादव की संख्या अधिक है। कायस्थ, चौरसिया, गड़ेरी, धोबी परिवारों की संख्या 1 प्रतिशत से भी कम है।

तालिका–1.11
काजीपुर गॉंव की विभिन्न जातियों की संख्या

क्रम संख्या	जातियों का नाम	जनसंख्या	प्रतिशत
1.	ब्राह्मण	52	1.38
2.	कायस्थ	35	0.90
3.	बनिया	121	3.22
4.	यादव	288	7.67
5.	कोइरी	470	12.51
6.	बढ़ई	37	0.98
7.	मल्लाह	450	11.98
8.	बिन्द	350	9.32
9.	चौरसिया	12	0.31
10.	गड़ेरी	11	0.29
11.	हरिजन	314	8.36
12.	दुसाध	119	3.16
13.	धोबी	31	0.82
14.	गोंड़	95	2.53
15.	निषाद	59	1.57
16.	मुस्लिम	1,302	34.68
कुल	–	3,754	99.99

तालिका-1.11 से स्पष्ट है कि काजीपुर गांव में हिन्दुओं में कुल 15 जातियॉं हैं तथा कुल 209 परिवार हैं। इन हिन्दू जातियों में जनसंख्यात्मक दृष्टिकोण से कोइरी जाति की सबसे अधिक संख्या है। कुल जनसंख्या का करीब 12.51 कोइरी है। इसके बाद मल्लाह, बिन्द, हरिजन, यादव का स्थान जनसंख्यात्मक दृष्टिकोण से आता है जिनकी जनसंख्या कुल जनसंख्या का क्रमशः 11.98, 9.32, 8.36 व 7.67 प्रतिशत है। तालिका से स्पष्ट है कि निम्न समझी जाने वाली हरिजन जाति की जनसंख्या का प्रतिशत लगभग 8.36 है। निम्न जातियों में धोबी तथा उच्च जातियों में ब्राह्मण की जनसंख्या अधिक है। मध्यम वर्ग में कोइरी, यादव तथा बनिया जाति की जनसंख्या अधिक है। मुस्लिम की जनसंख्या कुल जनसंख्या का 34.68 प्रतिशत है।

तालिका–1.12
काजीपुर गॉव में हिन्दू मुस्लिम समुदायों की जनसंख्या

समुदाय	संख्या	प्रतिशत
हिन्दू	2,452	65.31
मुस्लिम	1,302	34.68
कुल	3,754	99.99

तालिका-1.12 से स्पष्ट प्रतीत होता है कि कुल जनसंख्या में हिन्दू जाति की जनसंख्या 65.31 प्रतिशत है तथा मुस्लिम समुदाय की जनसंख्यात्मक प्रतिशत 34.68 है। तालिका से यह भी स्पष्ट होता है कि मुस्लिम समुदाय की जनसंख्या हिन्दू समुदाय की जनसंख्या से लगभग आधी है। अर्थात इस गांव में पर्याप्त मात्रा में मुस्लिम समुदाय के लोग हैं।

तालिका–1.13
सामान्य, पिछड़ा, अनुसूचित जाति व अल्पसंख्यक वर्ग की जनसंख्या

श्रेणी	कुल संख्या	प्रतिशत
सामान्य वर्ग	87	2.31
पिछड़ा वर्ग	1,747	46.53
अनुसूचित जाति	618	16.46
अल्पसंख्यक वर्ग	1,302	34.68
कुल	3,754	99.98

तालिका-1.13 से स्पष्ट है कि संवैधानिक प्रावधानों के अनुरूप सामाजिक एवं शैक्षणिक रूप से जातियों का जो विभाजन किया गया है इनमें सामान्य वर्ग की जनसंख्यात्मक प्रतिशत 2.31, पिछड़ा वर्ग की 46.53, अनुसूचित जाति की 16.46 व मुस्लिम वर्ग का 34.68 प्रतिशत है। सामान्य वर्ग की तुलना में पिछड़े वर्ग की जनसंख्यात्मक प्रतिशत सबसे अधिक है। इसके बाद मुस्लिम जातियों का स्थान है।

तालिका–1.14
काजीपुर गॉव में पुरूष व महिला जनसंख्या

लिंग	जनसंख्या	प्रतिशत
पुरूष	2,218	59.08
महिला	1,536	40.91
कुल	3,754	99.99

तालिका-1.14 से स्पष्ट है कि काजीपुर गॉव के कुल जनसंख्या (3,754) में पुरूष और महिला का जनसंख्यात्मक प्रतिशत क्रमशः 59.08 और 40.91 है।

तालिका–1.15

काजीपुर गॉव में हिन्दू समुदाय में पुरूष व महिला जनसंख्या

लिंग	जनसंख्या	प्रतिशत
पुरूष	1,502	61.25
महिला	950	38.74
कुल	2,452	99.99

तालिका-1.15 से स्पष्ट है कि हिन्दू समुदाय में पुरूष व महिला की जनसंख्यात्मक प्रतिशत क्रमशः 61.25 व 38.74 है।

तालिका–1.16

काजीपुर गॉव में मुस्लिम समुदाय में पुरूष व महिला जनसंख्या

लिंग	जनसंख्या	प्रतिशत
पुरूष	732	56.22
महिला	570	43.77
कुल	1,302	99.99

तालिका-1.16 से स्पष्ट है कि मुस्लिम समुदाय में पुरूष व महिला की जनसंख्यात्मक प्रतिशत क्रमशः 56.22 व 43.77 प्रतिशत है।

लिंगानुपात

तालिका-1.14 से स्पष्ट है कि काजीपुर गाँव में पुरूष जनसंख्या 2,218 तथा महिला जनसंख्या 1,536 है। पुरूष जनसंख्या और महिला जनसंख्या के आधार पर काजीपुर गाँव का लिंगानुपात निकाला गया है-

$$\text{लिंगानुपात} = \frac{\text{काजीपुर गाँव में स्त्रियों की कुल जनसंख्या}}{\text{काजीपुर गाँव में पुरूषों की कुल जनसंख्या}} \times 1000$$

$$= \frac{1536}{2218} \times 1000$$

$$= 692.51$$

$$= 692$$

काजीपुर गाँव का लिंगानुपात 692 है, अर्थात 1000 पुरूषों में स्त्रियों की संख्या 692 है। दोनों गाँवों व बिहार प्रदेश के लिंगानुपात को तुलनात्मक रूप से इस प्रकार तालिका के माध्यम से दर्शाया जा सकता है:-

तालिका–1.17

दोनों गाँवों का लिंगानुपात

बिहार	921
नयाभोजपुर	327
काजीपुर	692

तालिका-1.17 से स्पष्ट है कि काजीपुर गाँव का लिंगानुपात नयाभोजपुर गाँव से दो गुना से ज्यादा है।

तालिका–1.18

काजीपुर गांव में विभिन्न जातियों का श्रेणीक्रम

क्रम संख्या	उच्च हिन्दू	निम्न हिन्दू	अछूत
1	ब्राह्मण	मल्लाह	हरिजन
2	कायस्थ	बिन्द	दुसाध
3	बनिया	निषाद	धोबी
4	यादव	गोंड	
5	कोइरी	गड़ेरी	

तालिका-1.18 से स्पष्ट है कि काजीपुर गाँव में हिन्दू जातियों को उच्च हिन्दू, निम्न हिन्दू व अछूत में विभाजित किया गया है। उच्च हिन्दू में जातियों की संख्या 5 है, जबकि निम्न हिन्दू में भी 5 जातियाँ हैं। अछूत जातियों की संख्या 3 है। यह तालिका शुद्धता व अशुद्धता के आधार पर तैयार किया गया है।

तालिका–1.19

मुस्लिम जातियों में श्रेणीक्रम

उच्च मुस्लिम	निम्न मुस्लिम
खाँ	अंसारी
अहमद	नाई (हज्जाम)
अली	

तालिका-1.19 से स्पष्ट है कि काजीपुर गाँव में उच्च मुस्लिम जाति के अन्तर्गत 3 तथा निम्न मुस्लिम जाति के अन्तर्गत 2 जातियाँ आती हैं। यह श्रेणीक्रम मुख्यतया पेशा धार्मिक व सामाजिक सम्मान की दृष्टि से किया गया है।

नयाभोजपुर और काजीपुर गांव की सामाजिक संरचना

अध्ययन हेतु चुने गये दोनों ग्रामों की सामाजिक संरचना को समझने के लिए गांव के आंतरिक सम्बन्धों, दोनों गांवों की सामाजिक संरचना का अध्ययन करना जरूरी है। साथ ही प्रत्येक गांव को सम्पूर्ण भारतीय समुदाय के संदर्भ में भी देखना होगा,

क्योंकि एक गांव अपनी अनेक स्थानीय आवश्यकताओं जैसे धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक आदि की पूर्ति के लिए सम्पूर्ण भारत पर भी निर्भर है। **डा० एस० सी० दूबे (1975)** का कहना है कि प्रत्येक भारतीय गांव का एक इतिहास होता है, मूल्यों व विचारों की एक व्यवस्था होती है, अतः प्रत्येक गांव को अतः ग्रामीण संगठन के संदर्भ में ही देखा जाना चाहिए। इनका कहना है कि भारतीय ग्रामीण संरचना को समझने के लिए लघु स्तर पर अनेक हिस्सों में गांवों का अध्ययन करके हम गांवों के विभिन्न पक्षों एवं विशेषताओं की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं तथा उनके आधार पर भारतीय गांवों के बारे में सामान्यीकरण प्रस्तुत कर सकते हैं। अतः यह अध्ययन इसी दिशा में किया गया एक सार्थक प्रयास है।

हमारे ग्रामीण जीवन में ग्राम्य समुदाय प्राचीन काल से ही चले आ रहे हैं। इस प्राचीन परम्परागत ग्रामीण समाज की एक एक निश्चित स्थायी, सहयोगी सामाजिक संरचना है। यह भारतीय ग्रामीण सामाजिक संरचना नातेदारी, जाति व्यवस्था, व्यवसाय आदि पर आधारित मानी जाती है। भारतीय ग्रामीण समुदाय में सबसे पहले नातेदारी प्रथा की प्रमुखता है।एक ग्रामीण समुदाय में एक रक्तवंशीय समूह के प्रायः सभी सदस्य निवास करते हैं। विशेष रूप से उत्तरी भारतीय ग्रामीण समूहों में वहिर्विवाही समूह है। एक ग्रामवासी प्रायः अपने पुत्र अथवा पुत्री का विवाह दूर किसी अन्य ग्राम में करता है। इसलिए भारतीय ग्रामीण समाज का एक प्रमुख तत्व रक्तवंशीय समूह प्रथा है। एक ग्राम में एक जाति के केवल वही लोग निवास करते है जो एक ही वंश के वंशज है तथा गोत्र के अनुसार प्रायः सभी एक गोत्र के सदस्य है।

जाति व्यवस्था

भारतीय ग्रामीण संरचना की एक मुख्य तत्व जाति व्यवस्था है, जो जजमानी प्रथा पर आधारित है। गांव में कुछ लोग जिनके पास जीवन यापन के लिए पर्याप्त मात्रा में भूमि होती है, उनको अन्य जातियों की सेवाओं की आवश्यकता पड़ती है। उदाहरण के तौर पर एक किसान तथा एक ग्रामीण बढ़ई अथवा लोहार के सम्बन्ध को देखें तो गांव का बढ़ई अथवा लोहार अपने किसान अर्थात जजमान को वर्ष भर हल आदि बनाता है तथा दूसरे हल अथवा कृषि औजारों की मरम्मत भी करता है। बढ़ई को भी वर्ष भर की सेवा के बदले में वह कृषक प्रतिवर्ष अपनी उपज में से एक निश्चित मात्रा उसे देता है। पारस्परिक आदान-प्रदान की इसी जाति व्यवस्था को जजमानी प्रथा के नाम से पुकारा जाता है।

नयाभोजपुर व काजीपुर ग्राम की सामाजिक संरचना आमतौर पर जाति व्यवस्था पर आधारित है, जहां भिन्न भिन्न जातियाँ निवास करती है, तथा जिनमें आपस में जजमानी के सम्बन्ध हैं। यहां भी परम्परागत सामाजिक ढांचा धर्मगत एवं जातिगत

विशेषताओं से सम्बन्धित है। विभिन्न संस्थाओं, कार्य, स्थिति, आदर्श प्रतिमान आदि का निर्धारण धर्म या जाति के द्वारा ही होता है। नयी राजनीति व्यवस्था ने कुछ हद तक धर्म एवं जाति प्रधान सामाजिक ढांचे की विशेषताओं को कम अथवा समाप्त किया है। इसी वजह से अन्य अनेक संस्थाएं अब कुछ हद तक धर्मगत एवं जातिगत मान्यताओं की ओर न देखंकर राज्य के सिद्धान्तों एवं आदर्शो का अनुकरण करने का प्रयत्न किया है। अतः इन दोनों ग्रामों की सामाजिक संरचना समझने के लिए इस क्षेत्र में व्याप्त सामाजिक व्यवस्था, सामाजिक संस्थाओं एवं सामाजिक संरचना को समझना अति आवश्यक है। इसी के आधार पर ग्रामीण सामाजिक संरचना को आसानी से समझा जा सकता है।

दोनों ग्रामों में जो जातियाँ निवास करती है उनमें कुछ जातियां तो दोनों गाँवों में है तथा कुछ जातियां एक गांव में है, तो दूसरी गांव में नहीं। इन दोनों गांवों में परम्परागत जातीय सोपान व्यवस्था में ब्राह्मण सर्वोच्च स्थिति में है तथा अश्पृश्य एवं हरिजन जातियों की स्थिति सबसे निम्न है। इन गांवों में सामाजिक स्तर एवं प्रतिष्ठा का निर्धारण जातीय आधार पर ही होता है और सभी जातियाँ कमोवेश अपनी परम्परागत व्यवसाय के साथ साथ कृषि व्यवसाय को अपनाये हुए हैं। यहां तक मुस्लिम समुदाय भी कृषि के साथ साथ अन्य व्यवसाय भी करते हैं। इन दोनो क्षेत्रों में पिछड़ी जातियाँ मुख्यतया कृषि पेशा को अपनाये हुए हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि अधिकांश जातियों का अपना एक प्रमुख व्यवसाय है जो परम्परागत है, इसके अतिरिक्त वे अपनी जीविका चलाने के लिए अन्य व्यवसायों को अपनाने के लिए भी स्वतंत्र हैं। इन दोनों गांवों में जाति की भिन्न विशेषताएं देखने को मिलती है-

(1) सामजिक स्तरीकरण का निर्धारण जन्म के आधार पर होता है न कि कर्म के आधार पर ।

(2) प्रत्येक जाति की निश्चित जातिगत परम्परागत व्यवसाय है।

(3) अन्तर्विवाही समूह अर्थात यहां विभिन्न जातयों के लोग अपनी जातीय समूह में ही विवाह करते हैं।

(4) विभिन्न जातियों के बीच खान-पान पर प्रतिबन्ध देखने को मिलता है।

(5) यद्यपि खान-पान सम्बन्धी प्रतिबन्ध व छुआ-छूत सम्बन्धी प्रतिबन्ध कुछ कम हुआ है, फिर भी इस क्षेत्र के निवासी इन विषयों को लेकन काफी सतर्क रहते हैं। आज भी ब्राह्मण, हरिजन व धोबी आदि अछूत जातियों का छुआ पानी व भोजन नहीं करते हैं। विवाह के क्षेत्र अभी भी निश्चित एवं सीमित हैं।

परन्तु वर्तमान समय में जाति व्यवस्था की पकड़ कुछ ढीली पड़ी है।इसका मुख्य कारण नगरीकरण का प्रभाव, यातायात एवं संचार सुविधा के बढ़ने, कानूनी प्रभाव राजनीतिक आंदोलन आदि है। वर्तमान में आये जाति व्यवस्था में परिवर्तन के फलस्वरूप पेशे के चुनाव में स्वतंत्रता ब्राह्मणों की स्थिति में गिरावट, विवाह सम्बन्धी एवं खान-पान

सम्बन्धी प्रतिबन्धों में कुछ कमी आयी है। अतः इससे स्पष्ट है कि वर्तमान समय में इन गांवों में जाति व्यवस्था में अनेक परिवर्तन हो रहे हैं, परन्तु यह परिवर्तन की गति धीमी है और आज भी जाति का प्रभाव यहां के लोगों एवं उनके जीवन पर स्पष्ट दिखाई पड़ता है।दोनों ग्रामों के ग्रामीण समुदाय को वर्ग के आधार पर निम्न भागों में विभाजित करके अध्ययन किया गया है।

(1) पूँजीपति एवं बड़े भूस्वामी - इस वर्ग के अन्तर्गत तथाकथित बड़े भूस्वामी एवं पूँजीपति आते हैं।

(2) भूमिहीन खेतिहर मजदूर - इस वर्ग के अन्तर्गत इन दोनों गांवों के वैसे लोगों को शामिल किया गया है, जो वर्ष भर में किए गए कुल श्रम का आधे से ज्यादा कृषि कार्य में मजदूरी करके करता है एवं वर्ष भर में किए गए कुल आय के आधे से ज्यादा कृषि मजदूरी द्वारा प्राप्त करते हैं। इस वर्ग के लोगों का स्थान सामाजिक स्तरीकरण में सबसे निम्न है।

(3) व्यवसायी एवं ग्रामीण कारीगर - इस वर्ग के अन्तर्गत मुख्य रूप से व्यापारी वर्ग एवं गांव के कारीगरों को रखा गया है। गांव के कारीगर में बढ़ई, लोहार, राजमिस्त्री (अधिकतर मुस्लिम समुदाय) आदि आते हैं।

(4) लघुकृषक - इस वर्ग के अन्तर्गत इन दोनों गांवों के वैसे लघु अथवा छोटे कृषकों को शामिल किया गया है, जिन्हें अपने परिवार के भरण पोषण करने के लिए कृषि के अतिरिक्त मजदूरी का कार्य भी करना पड़ता है। ऐसे कृषकों में अधिकांश के पास 10 एकड़ से कम जमीन है एवं जिनके पास इससे ज्यादा जमीन है, उनकी संख्या बहुत कम है और उनके पास भी एक एकड़ से ज्यादा जमीन नहीं है।

(5) सेवक - सेवक के अन्तर्गत अनेक जातियां-नाई, धोबी, पुरोहित आदि आते हैं जिसका मुख्य कार्य समाज की सेवा करना है।

इन दोनो क्षेत्रों के ग्रामीण समाज के वर्ग विभाजन का मुख्य आधार कर्म एवं सम्पत्ति है। इस क्षेत्र में सम्पत्ति का मुख्य सूचक भूमि एवं पशुधन है। इस क्षेत्र में व्यवसायिक दृष्टि से श्रम एवं वर्ग विभाजन का मुख्य आधार शिक्षा, आय आदि है। उपरोक्त वर्णन के आधार पर इन दोनों गांवों की वर्गीय व्यवस्था इस प्रकार है-

(1) वर्ग संगठन का आधार भूमि का होना अथवा नहीं होना है।

(2) इस आधार पर बने विभिन्न वर्ग एक दुसरे पर अन्योन्याश्रित है, जैसे भूस्वामियों की आवश्यकता भूमिहीन श्रमिक है तथा भूमिहीन श्रमिकों की आवश्यकता भूमि एवं भूस्वामी है।

(3) वर्गीय व्यवस्था एक मुक्त व्यवस्था को इंगित करता है, विशेषकर योग्यता, क्षमता, अधिकार व उपलब्धि आदि के आधार पर वर्ग परिवर्तन होसकता है।

(4) व्यक्ति की सदस्यता एवं वर्ग की सीमाएं अनिश्चित है। इस क्षेत्र में एक ही व्यक्ति कृषक भी है और मजदूर भी। ऐसी स्थिति में व्यक्ति को किसी एक वर्ग में गिने जाने के लिए कोई निश्चित नियम नही है।
(5) वर्ग व्यवस्था में आवश्यकताओं की पूर्ति करने के कारण कारीगर व सेवक वर्ग भी महत्वपूर्ण स्थान है।

परिवार

दोनों क्षेत्रों के सामाजिक संरचना को समझने में सामाजिक संरचना की सबसे छोटी इकाई परिवार को भी समझना आवश्यक है। परिवार ग्रामीण समाज की मुख्य आधारशिला है। प्रारम्भ में परिवार का निर्माण प्राणिशास्त्रीय आवश्यकताओं के कारण हुआ था जो आगे चलकर मानव की अनेक सामाजिक, सांस्कृतिक आवश्यकताओं की पूर्ति का साधन बन गया। अध्ययन हेतु चुने गये दोनों गाँवों की विशेषता कृषि की प्रधानता व प्रकृति पर निर्भरता है, जो परिवार के आधार व रूप को प्रभावित करता है। इन दोनों गाँवों का परिवार पितृस्थानीय, पितृवंशीय एवं पितृसत्तात्मक है।ऐसे परिवारों में सम्पति का हस्तांतरण पिता से पुत्र की होता है, बच्चों का वंश परिचय पिता के परिवार द्वारा दिया जाता है तथा विवाह के पश्चात् पत्नी पति के घर पर आकर निवास करती है। इस क्षेत्र के परिवार की अनेक विशेषताएं हैं, जो इस प्रकार हैः-

(1) परिवार में पति पत्नी, माता पिता और बच्चों के बीच पाये जाने वाले सम्बन्ध शहरी परिवार की अपेक्षा अधिक स्थिर एवं प्रगाढ़ होते हैं। सदस्यों के विश्वासों आदर्शो, मूल्यों और कार्य करने के तरीकों में समानता पायी जाती है।
(2) पूर्व में इन दोनों क्षेत्रों में संयुक्त परिवार का वर्चस्व प्रायः सभी जातियों में था। परन्तु बढ़ती जनसंख्या एवं नगरीकरण के कारण संयुक्त परिवार टूट कर एकल या केन्द्रीय परिवार का रूप धारण कर लिये है।
(3) इन क्षेत्रों के परिवार का मुख्य व्यवसाय कृषि अथवा कृषि मजदूरी है। परिवार के अधिकांश सदस्य कृषि कार्य मे लगे रहते हैं। यहां परिवार में श्रम विभाजन का मुख्य आधार आयु लिंग एवं कार्य क्षमता है। परिवार भी भूमि सामूहिक होने की वजह से सभी सदस्य इस कार्य में सहयोग देते हैं।
(4) ग्रामीण परिवार अभी भी शहरी समाज के परिवार से ज्यादा अनुशासित है। यहाँ बड़े बुजुर्गो को पूरा सम्मान दिया जाता है। परिवार का व्योवृद्व व्यक्ति सभी सदस्यों पर नियंत्रण रखता है।
(5) यहां परिवार में व्यक्तिगत भावना के स्थान पर सामूहिक चेतना पायी जाती है। परन्तु आधुनिक समाज के सम्पर्क मे आने की वजह से इन दिनों व्यक्तिगत भावना में वृद्धि आयी है। फिर भी व्यक्ति परिवार के गौरव को अपना गौरव समझता है।

नयाभोजपुर व काजीपुर ग्रामों के परिवार को सदस्यों की संख्या के आधार पर मुख्यत: चार वर्गों में विभक्त किया गया है। इसके साथ ही परिवार के स्वरूप को भी प्रदर्शित करने के लिए तालिका का सहारा लिया गया है जिसे नीचे प्रदर्शित किया जा रहा है।

तालिका–1.20

दोनों गॉवों के परिवार का स्वरूप

क्रम सं0	परिवार का स्वरूप	संख्या	प्रतिशत
1	संयुक्त परिवार	77	32.08
2	एकाकी परिवार	163	67.91
कुल	–	240	99.99

तालिका-1.20 से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में एकाकी परिवारों का बाहुल्य है एवं 68 प्रतिशत परिवार इसी श्रेणी में आते हैं। साथ ही विभिन्न कारणों से संयुक्त परिवार के टूटने के बावजुद अभी भी इनकी संख्या 32 प्रतिशत है, जो यह निर्दिष्ट करता है कि इन दोनों गॉवों में अभी भी संयुक्त परिवार व्यवस्था शेष है। इस प्रकार इस तालिका से स्पष्ट है कि एकाकी परिवारों के प्रतिशत में वृद्धि हुई है।

तालिका–1.21

परिवार का आकार (सदस्य संख्या के आधार पर)

क्रम संख्या	परिवार का आकार	परिवारों की सदस्य संख्या	परिवारों की संख्या	प्रतिशत
1.	छोटे परिवार	3 या अधिक	20	8.33
2.	मध्यम परिवार	4 से 6	41	17.08
3.	बड़े परिवार	7 से 9	109	45.41
4.	बहुत बड़े परिवार	10 या अधिक	70	29.16
कुल	–	–	240	99.98

उपरोक्त तालिका-1.21 के माध्यम से दोनों गॉवों के परिवारों को उनकी संख्या के आधार पर चार भागों में विभक्त करके यह जानने का प्रयास किया गया है कि यहाँ परिवार का आकार किस प्रकार का है। अत: तालिका से स्पष्ट है कि दोनों गॉवों में एकाकी परिवार का बाहुल्य होने के बावजूद 45 प्रतिशत परिवार बड़े परिवार के अन्तर्गत आते हैं जिसकी सदस्य संख्या 7 से 9 तक है। इसके बाद लगभग अधिकांश संयुक्त परिवार बहुत बड़े परिवार वर्ग के अन्तर्गत आते हैं। जिसमें सदस्यों की संख्या 10 या उससे अधिक है। ऐसे परिवारों की संख्या 29 प्रतिशत है। जबकि 4 से 6 सदस्य वाले मध्यम परिवार की संख्या 17 प्रतिशत एवं 3 या उससे कम सदस्यों वाले छोटे परिवार की संख्या मात्र 8 प्रतिशत है।

विवाह

परिवार की आधारशिला विवाह है। विवाह के माध्यम से ही हिन्दू गृहस्थाश्रम में प्रवेश करते हैं, घर बसाते हैं, अपनी यौन इच्छाओं की पूर्ति, सन्तानोत्पत्ति एवं बालकों का पालन पोषण करते हैं और उन्हें समाज का उपयोगी सदस्य बनाने में योग देते हैं।

अध्ययन हेतु चुने गये दोनों गांवों में हिन्दुओं और मुस्लिमों की बहुलता के कारण हिन्दू और मुस्लिम विवाह प्रथाओं की प्रधानता है। विवाह को प्रत्येक स्त्री-पुरूष के लिए अनिवार्य समझा जाता है एवं अविवाहित रहना उचित नहीं समझा जाता है। पुरूष का अविवाहित रहना फिर भी स्वीकार कर लिया जाता है, परंतु स्त्री का अविवाहित रहना निंदनीय समझा जाता है। यहां विवाह को हिन्दू समाज में एक संस्कार समझा जाता है, जबकि मुस्लिम समुदाय में विवाह एक समझौता माना जाता है। इन दोनों क्षेत्रों में हिन्दुओं में एक विवाही प्रथा व अन्तर्विवाह नियम की प्रधानता देखी जाती है, लेकन मुस्लिमों में बहुपत्नी प्रथा भी देखने को मिलती है। हिन्दुओं में कतिपय जातियों में बहुपत्नी ववाह के एक रूप द्विपत्नी विवाह प्रथा भी देखने को मिलती है।

अध्ययन क्षेत्र में विवाह सामान्यत: अपनी ही जाति के अंदर ही होता है। लगभग 95 प्रतिशत विवाह माता पिता की इच्छा के अनुसार एवं उन्हीं के द्वारा तय किया हुआ होता है। मात्र 5 प्रतिशत लोगों ने अपनी मर्जी से प्रेम विवाह अथवा अपने पसंद से विवाह किया है। पहले तो इन दोनों क्षेत्रों में बाल विवाह का वर्चस्व था, परंतु वर्तमान में बाल विवाह की प्रथा कुछ निम्न जातियों तक ही सीमित है।इसके लिए मुख्य रूप से धार्मिक रूढ़िवादिता, अंधविश्वास, अशिक्षा एवं आर्थिक स्थितियां आदि जिम्मेदार हैं।

नातेदारी

परिवार की भांति नातेदारी भी सामाजिक संरचना का मौलिक और प्राचीन आधार है। वर्तमान शोध कार्यो से यह ज्ञात होता है कि आदिम समाजों में लोगों को प्राथमिक सम्बन्धों में बाँधने वाला आधार नातेदारी ही थी। यही कारण है कि आदिकाल से परिवार सामाजिक संगठन का आधार रहा है और नातेदारी उसका मुख्य सिद्धांत रहा है। नातेदारी अधिकार व कर्तव्यों तथा दायित्वों एवं सुविधाओं की वह व्यवस्था है जो न केवल परिवार के सदस्यों के सम्बन्धों को परिभाषित करती है, वरन् कई पारिवारिक इकाइयों के सम्बन्धों को भी प्रकट करती है। यह व्यक्तियों और परिवारों को जोड़ने वाली कड़ी है।

प्राथमिक रूप से नातेदारी प्रजनन पर आधारित होती है। मानव की प्रजनन की इच्छा ने ही रक्त एवं विवाह पर आधारित नातेदारी सम्बन्धों को जन्म दिया। रक्त सम्बन्ध माता और संतानों के बीच होते हैं। अत: ये सम्बन्ध समान रक्त सम्बन्धियों के बीच पाये जाते हैं। वैवाहिक सम्बन्ध विवाह के परिणाम स्वरूप बनते हैं। इन क्षेत्र में एक व्यक्ति के सम्बन्धियों में क्रमश: परिवार, नातेदारी एवं जाति के सदस्यों को

प्राथमिकता दी जाती है तथा कठिनाई के समय एक व्यक्ति उन्हीं से मदद की उम्मीद करता है। यहां रक्त सम्बन्धों की ज्यादा प्राथमिकता दी जाती है। वैवाहिक सम्बन्धों के नातेदार सामान्यतः परिवार के गतिविधियों में हस्तक्षेप नहीं करते है। इस क्षेत्र में दूसरे पितृसत्तात्मक समाज की तरह ही सम्पत्ति का उत्तराधिकारी सभी पुत्र होते है एवं सभी में पैतृक सम्पत्ति का समान बटवारा होता है। इन दोनों क्षेत्रों में नातेदारी व्यवस्था अनेक समाजिक व सांस्कृतिक भूमिकाएँ निभाते हैं। सम्पत्ति के उत्तरधिकारी एवं विवाह क्षेत्र का निर्धारण नातेदारी के आधार पर ही होता है। नातेदारी प्रथा ही यह तय करती है कि एक व्यक्ति के लिए विवाह साथी चुनने का दायित्व किस पर हें। जीवन साथी का चयन का क्षेत्र क्या होगा अर्थात यह मिन लोगों से विवाह कर सकता है, किसको प्राथमिकता देगा, आदि। इन दोनों क्षेत्रों में नातेदारी सम्बन्धी अनेक नियम और प्रथाएं भी पायी जाती हैं।

अर्थव्यवस्था

ग्रामीण आर्थिक संरचनाएं भी ग्रामीण सामाजिक संरचना का भाग होती है। इन दोनों क्षेत्रों की अर्थव्यवस्था जाति व्यवस्था पर आधारित है। इन क्षेत्रों में अधिकांश लोग कृषि व परम्परागत व्यवसाय के द्वारा अपना जीवन यापन करते हैं। गांव के लोगों का अपनी जमीन से घनिष्ठ लगाव है और जमीन के स्वामित्व के आधार पर व्यक्ति का मूल्यांकन किया जाता है। इन दोनों क्षेत्रों में खरीफ एवं रबी फसलों के अतिरिक्त बड़ी मात्रा में साग सब्जियों की खेती होती है। सब्जियों में आलू, टमाटर, गोभी एवं बैगन प्रमुख रूप से उगायी जाती है। गांव के 60 प्रतिशत भूमि में सब्जियों की खेती की जाती है। प्रत्येक साल यहां सब्जियां उगाने वाले किसानों द्वारा अधिक मात्रा में दूसरे प्रदेशों में भेजे जाते हैं। टमाटर के मौसम में रोजाना पचासों ट्रक टमाटर बाहर भेजे जाते हैं। यह कार्य गांव के किसानों के अतिरिक्त कुजड़ा (तुरहा) लोग भी वृहत पैमाने पर करते है। इसमें एक अच्छी आय प्राप्त होती है।

इन दोनों क्षेत्रों में पशुपालन का भी महत्वपूर्ण स्थान है। यहां के किसानों के मवेशी उनके पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन का अंग बन गये हैं। यहां गाय, भैंस, बैल, घोड़े, गधा, बकरी, सुअर, मुर्गी, बतख आदि पशुधन के रूप में पाले जाते हैं। इन दोनों गांवों में मुस्लिम समुदाय द्वारा बकरी और मुर्गी पालन व्यापक पैमाने पर लिया जाता है। बकरी और मुर्गी उनके आय का एक महत्वपूर्ण स्त्रोत होता है। सामाजिक स्तरीकरण में सबसे निम्नतम स्थान पर समझे जाने वाले डोम जाति द्वारा सुअर पालन किया जाता है। धोबी, गधा से गांवों में भट्ठे से ईट लाकर लोगों के दरवाजे पर पहुँचाता है। साथ ही मिट्टी और बालू ढ़ोने में भी गधा का प्रयोग करते हैं। इससे धोबी जाति के लोगों की आर्थिक्री में कुछ सहयोग प्राप्त हो जाता है। इन दोनों गांवों में मुस्लिम और हिन्दू समुदाय के कुछ निम्न जातियों द्वारा घोड़ों का प्रयोग इक्का गाड़ी खीचने में किया जाता

है। इक्के द्वारा लोग गांवों से शहरों, अस्पतालों रेलवे स्टेशन पर जाते है। वर्तमान में टैम्पू व अन्य आवागमन के साधनों के विकास से इक्के की संख्या में कमी आयी है, फिर भी गांवों को शहरों से जोड़ने में इक्कागाड़ी महत्वपूर्ण स्थान रख रहा है। औद्योगिक दृष्टिकोण से ये दोनों क्षेत्र पिछड़े हुए क्षेत्र हैं। लघु व कुटीर उद्योग का सर्वथा अभाव है। नयाभोजपुर गांव में लघु उद्योग के नाम पर आटा-चक्की, तेल व धान कूटने की कुछ मशीने लगी हैं। इस क्षेत्र में कोई भी ऐसी औद्योगिक इकाई नहीं है, जो यहां के लोगों को पूर्णकालिक रोजगार उपलब्ध करा सके। फलस्वरूप इस क्षेत्र के मजदूर वर्ग बेकारी एवं बेरोजगारी के शिकार हैं। कृषि के मौसमी स्वरूप की वजह से यहां के खेतिहर मजदूरों को वर्ष में 4 से 6 महीने तक बेरोजगारी का सामना करना पड़ता है।

औद्योगिक प्रतिष्ठान के नाम पर नयाभोजपुर गांव में ग्लेज्ड एण्ड सिरामिक्स लिमिटेड फैक्ट्री है। 1982 में तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री जगन्नाथ मिश्र ने इस फैक्ट्री का शिलान्यास किया था, लेकिन चालू न होने के कारण मशीनों में जंग लग चुकी है। श्रमिक संगठनों ने बताया है कि अगर यही स्थिति रही तो करोड़ों की लागत से तैयार सिरामिक्स फैक्ट्री का अस्तित्व समाप्त हो पाएगा। इस फैक्ट्री से अस्थायी मजदूर के रूप में 500 लोगों को तथा स्थाई रूप से 250 लोगों को रोजगार मिलने की संभावना थी। फिलहाल अभी तक इस सम्बन्ध में सरकारी रवैया उदासीन है। अन्य उद्योगों में इंजीनियरिंग वर्क्स शॉप जिसमें ग्रिल, गेट व खराद का काम होता है। यहां जूता चप्पल बनाने का भी उद्योग है। लगभग 12 चर्म उद्योग इस क्षेत्र में कार्यरत हैं। वन पर आधारित उद्योगों में यहां 6 लकड़ी चीरने (आरा मशीन) की मशीने हैं। यहां लकड़ी से कुर्सी, पलंग, फर्नीचर आदि बनाये जाते हैं।

कुल मिलाकर यह दोनो क्षेत्र, सड़क और रेलमार्ग से जुड़े होने के बावजूद भी औद्योगिक रूप से पिछड़े हुए क्षेत्र हैं। कमोवेश पूरे बिहार (अब 37 जिलों के बने बिहार को बिहार कहा जाता है) की यही स्थिति है। यहां की करीब तीस हजार औद्योगिक इकाइयां बीमार हैं। बिहार की चिंता से जुड़े सामाजशास्त्रियों और अर्थशास्त्रियों का स्पष्ट कहना है कि यहां क नेतृत्वकारी शक्तियों के पास बिहार को बनाने की इच्छाशक्ति और राजनैतिक दृष्टि का अभाव रहा है। यहां से उद्यमियों का पलायन हो रहा है। अर्थशास्त्री शशिभूषण का तो यहां तक कहना है कि बिना औद्योगिकीकरण और शहरीकरण से विकास हो ही नहीं सकता **(हिन्दुस्तान, 21 जून 2001)**

नयाभोजपुर और काजीपुर गांव में विभिन्न प्रकार के धर्म, मत एवं सम्प्रदाय प्रचलित हैं। यह धर्म मुख्यरूप से ग्राम समुदाय को दो भिन्न समुदायों - हिन्दू और मुसलमान में विभाजित करता है। इन दोनों गांवों में दोनो सम्प्रदायों के लोग साथ साथ रहते हैं जो धार्मिक सहिष्णुता और सामुदायिक सौहार्द का परिचायक है।

यद्यपि लम्बे अर्से से साथ साथ रहने और निकट साहचर्य के कारण वे एक दूसरे के घनिष्ठ सम्पर्क में आए हैं और उनकी संस्कृतियां कुछेक क्षेत्रों में अंतर्सम्बन्धित है, फिर भी दोनों समुदायों का अपना भिन्न सामाजिक-धार्मिक अस्तित्व है। इस गांवों की जनसंख्या में मुसलमान अलपसंख्यक हैं, किन्तु सामाजिक धार्मिक मामलों में उनका समूह परम सुगंठित है। सभी मुसलमान कट्टर सुन्नी शाखा के हैं। इनमें सम्पत्ति और पूँजी की दृष्टि से कोई भारी असमानता नहीं है, परिणामत: मुसलमान समुदाय में वर्ग भेद का उतना स्पष्ट स्वरूप देखने को नहीं मिलता है, जितना हिन्दू समुदाय में भिन्नता है। यद्यपि यह सच है कि मुसलमान समुदाय भी हिन्दू समुदाय के जाति स्तरण से प्रभावित हुए हैं।

गांव में किसी प्रकार के गंभीर अन्तर समूह तनाव या संघर्ष अब तक देखने व सुनने को नहीं मिला है। हिन्दू मुस्लिम समुदायों के बीच में जहां तक गांव के बड़े बुजुर्गो को याद है की केवल दो ही बड़े झगड़े हुए। इसके बारे में विस्तार से लोगों को याद नहीं पर यह कहा जाता है कि वह तनाव थोड़े समय के लिए था और शीघ्र ही संघर्षरत समूहों में सम्बन्ध सामान्य हो गये।

इन दोनों गांवों में अनेक प्रकार के देवी देवताओं को माना जाता है, जैसे दुर्गा, काली, राम, कृष्ण, हनुमान आदि। इन दोनों गांवों में मंदिर व शिवालय आदि धार्मिक स्थान देखने को मिलते हैं। इन क्षेत्रों के अध्ययनोपरांत यहां के ग्रामीण धर्म की निम्नलिखित विशेषताएं उभरकर सामने आयी हैं जैसे- धर्म पर परिवार का प्रभाव पाया जाता है एवं पितरों एवं पारिवारिक देवताओं की पूजा की जाती है। प्राकृतिक आपदा में- पहाड़, नदी, जल, सूर्य, चन्द्रमा, पेड़-पौधे आदि में अलौकिक शक्ति के निवास की कल्पना की गयी है। धर्म से सम्बन्धित अनेक अंधविश्वासों जादू टोने आदि का प्रचलन पाया जाता है। भूत-प्रेत एवं उनसे सम्बन्धित झाड़फूँक तंत्र-मंत्र आदि में विश्वास पाया जाता है। जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त अनेक दैनिक कार्यो का धार्मिक क्रियाओं के साथ प्रारंभ एवं समापन होता है।

संस्कार एवं उत्सव भी यहां की सामाजिक संरचना के लक्षण हैं। धार्मिक संस्कारों के मानने के दौरान लोगों में परस्पर सहयोग, समानता और एकीकरण के भाव पैदा होते हैं। होली, दिपावली, रक्षाबन्धन, दशहरा, जन्माष्टमी आदि त्यौहार और पर्व गांव

के सभी छोटे बड़े व्यक्ति साथ-साथ मनाते हैं। यहां तक कि मुस्लिम समुदाय के लोग भी इस त्यौहारों में हिन्दुओं के साथ शामिल होते हैं। धर्म से सम्बन्धित यहां अनेक लघु एवं दीर्घ परम्पराएं भी पायी जाती हैं।मुस्लिम समुदाय के लोग इन दोनों गांवों में चूँकि सुन्नी शाखा के हैं, फलत: इस शाखा के प्रवर्तक द्वारा की गई कुरान की व्याख्या को ये लोग मानते हैं। एक धर्मालु मुसलमान दिन में कम से कम दो बार नमाज पढ़ता है। कुछ केवल एक बार और शेष सप्ताह में एक दिन शुक्रवार (जुम्मे) को नमाज पढ़कर ही संतुष्ट हैं। इन दोनों अध्ययन क्षेत्रों में मुसलमान लोग मुहर्रम, शबेवरात, रमजान, ईद-उल-जुहा, बकरीद इत्यादि त्योहारों को मनाते हैं। इन त्योहारों का मुसलमानों के अपने कैलेंडर के अनुसार मनाया जाता है। हिन्दुओं के कुछ त्योहार विशेषकर दशहरा और होली में समस्त ग्राम समुदाय हिन्दू और मुस्लिम भाग लेते हैं। दशहरा के जुलूस में मुस्लिम समुदाय के लोग भी शामिल होते हैं। हिन्दू लोग होली के दिन अपने मुसलमान दोस्तों पर रंग व गुलाल डालते हैं। इसी प्रकार हिन्दू भी मुसलमान के मुहर्रम के जुलूस में सहयोग देते हैं। ईद के दिन मुसलमान अपने सभी दोस्तों से गले मिलते हैं, चाहे वे हिन्दू हो या मुसलमान। यद्यपि मुसलमानों में सामुदायिक भावना प्रबल होती है, लेकिन इन दोनों गांवों में मुसलमानों ने अपनी गहन धार्मिक भक्ति का परिचय नहीं दिया है।

धर्म का प्रभाव यहां के लोगों पर विशेष रूप में देखा जाता है और इस धर्म के प्रभाव ने खेतिहर मजदूरों एवं अन्य लोगों को विशेषकर गरीब लोगों को बहुत कुछ भाग्यवादी बना दिया है। इस क्षेत्र के हिन्दू और मुसलमान दोनों ही परम भाग्यवादी हैं। लोगों को बहुधा ऐसा कहते सुना जा सकता है कि यदि यह हमारे भाग्य में लिखा है तो हम क्या कर सकते हैं। अपने चाहे से हम भगवान की इच्छा को टाल नहीं सकते। जो भी लिखा है, वह होकर ही रहेगा। भाग्य के इस सम्बोध के साथ ही हिन्दुओं का कर्म का सिद्धांत जुड़ा है। इस संबोध के अनुसार जो आत्मा के स्थानांतरण और उसके पुनर्जन्म पर बल देता है, हमारे पूर्व जन्म के कार्यो से हमारा वर्तमान जीवन प्रभावित होता है, और जो कुछ हम इस जन्म में करेंगे उससे अगले जन्म का निर्धारण होगा। हमारे पिछले जन्म के आधार पर ही इस जन्म का मार्ग निर्धारित होता है, किन्तु इस जीवन में सही ढंग से काम करने पर हमारी मृत्यु के बाद के जीवन का स्वरूप बदल संकता है।

अध्याय-2

अध्ययन क्षेत्र की सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक स्थिति

अध्याय–2

अध्ययन क्षेत्र की सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक स्थिति

प्रस्तुत अध्ययन भारतीय ग्रामीण समाज में विषमता के विशेष संदर्भ मे सामाजिक स्तरीकरण के कुछ पहलुओं तथा उसमे हो रहे परिवर्तनों से सम्बन्धित है। अतः यह आवश्यक है कि अध्ययन हेतु चुने गये दोनों गाँवों की आजादी के पूर्व तथा आजादी के बाद की सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक स्थिति का अवलोकन किया जाय जिससे इन दोनों क्षेत्रों में हुए परिवर्तन का पता चल सके। आजादी से पूर्व व बाद की स्थिति को जानने के लिए अनुसंधानकर्ता ने साक्षात्कार-अनुसूची, जीवनवृत (बायोग्राफी) आदि प्रविधियों का सहारा लिया। साथ ही द्वितीयक स्रोतों (प्रकाशित साहित्य) के आधार पर भी जानकारी प्राप्त किया।

सामाजिक स्थिति

इन दोनों क्षेत्रो में आजादी के पूर्व जाति संस्तरण शुद्धता और अशुद्धता की कसौटी पर आधारित था। शुद्धता की कसौटियों पर जो जाति अधिकतम शुद्ध थी, उसे सामाजिक स्तरीकरण के स्थानक्रम में सर्वोच्च स्थान प्रदान किया गया था तथा जिन समुहो में शुद्धता के तत्व कम पाये गये उन्हें स्थानक्रम में निम्न श्रेणी प्रदान किया गया। शुद्धता का आधार वाछित विधान, आचरण, खानपान और छुआ-छूत के नियमों का पालन है। इन दोनो क्षेत्रो मे शुद्धता की कसौटियों के आधार पर ब्राह्मण का स्थान सर्वोच्च था तथा शूद्र का निम्न स्थान था। परम्परागत व्यवस्था के अन्तर्गत ब्राह्मण का मुख्य कार्य पठन-पाठन तथा पौरोहित्य था। पदानुकम की दृष्टि से वर्ण व्यवस्था में इन दोनों क्षेत्रों में द्वितीय स्थान पर आने वाली क्षत्रिय जाति का अभाव था। वैश्य का वर्ण व्यवस्था में तृतीय स्थान प्राप्त था जिनका मुख्य कार्य कृषि और वाणिज्य था। सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत आने वाली शूद्र जाति का स्थान निम्नतम था और उसका मुख्य कार्य तीन वर्णो की सेवा करना था। प्रत्येक जाति, चाहे वे ऊँची जाति हो या निम्न जाति को यह पता होता था कि हमारी पदस्थिति समाज में कहां है, अर्थात स्पष्ट रूप से उन्हें मालूम होता था कि कौन-कौन सी जातियां परम्परागत रूप में उसमें ऊँची मानी जाती है, तथा कौन-कौन सी जातियाँ परम्परागत रूप से उससे नीची मानी जाती है। साथ ही उसे यह भी जानकारी होती है कि क्षेत्र विशेष में कौन-कौन सी जातियों की सामाजिक स्थिति उस जाति के बराबर मानी जाती है। अपनी जाति की सामाजिक संरचना में परम्परागत स्थिति को ध्यान में रखते हुए ही पहले और वर्तमान में भी, विशेषकर इन क्षेत्रों में लोग अपने खान-पान, रहन-सहन, सामाजिक सम्बन्ध स्थापन, विवाह आदि सम्बन्धी बातों को निश्चित करते है।

इन दोनों क्षेत्रों में **जाति व्यवस्था** की जड़े काफी गहरी एवं प्राचीन है। बिहार प्रदेश के साथ-साथ पूरे भारत में खासकर ग्रामीण समाज आज भी जाति व्यवस्था पर

आधारित है। यद्यपि इस व्यवस्था में अनेकों कारणों के फलस्वरूप अनेक परिवर्तन आए हैं और अध्ययन क्षेत्र भी इससे अछूता नहीं है। औद्योगिकीकरण, नगरीकरण, शिक्षा में प्रगति, राजनैतिक जागरूकता, सामाजिक विधानों के प्रभाव के फलस्वरूप जाति संरचना में परिवर्तन आया है।

वर्तमान अध्ययन का उद्देश्य, **जातीय गतिशीलता** के बढ़ने से यह देखना है कि सामाजिक स्तरीकरण के स्वरूप में कौन-कौन से परिवर्तन आ रहे हैं। प्रत्येक सामाजिक संस्था में समय के साथ-साथ परिवर्तन होता रहता है, क्योंकि परिवर्तन एक स्वाभाविक नियम है। यह अवश्य सम्भव हो सकता है कि किसी संस्था में परिवर्तन की गति इतनी धीमी हो कि साधारणत: पता नहीं चल पाये, परंतु उसमें समयानुसार परिवर्तन होना आवश्यक रहता है। जाति व्यवस्था के सम्बन्ध में भी यही बात सत्य है। समय के साथ साथ इसके स्वरूप में भी परिवर्तन आया है। जाति व्यवस्था ने नवीन परिवर्तित परिस्थितियों में सदैव सामंजस्य स्थापित किया है। सामंजस्य स्थापित करने की यही प्रक्रिया जाति व्यवस्था की गतिशीलता कहलाती है। जाति व्यवस्था की गतिशीलता को समझने के लिए यह आवश्यक है कि वैदिककाल से वर्तमान समय तक की सामाजिक परिस्थितियों का विश्लेषण ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में किया जाय।

वैदिक काल भारतीय इतिहास का सबसे प्राचीन काल समझा जाता है। इस समय समाज कर्म के आधार पर चार वर्णो-ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र में विभक्त था। इन वर्णो में ऊँच-नीच की कटु भावना नहीं पायी जाती थी। पेशों के चुनाव में कोई प्रतिबन्ध नहीं था। व्यक्ति अपना पेशा बदल कर अन्य कोई भी पेशा अपना सकता था। इस तरह यह स्पष्ट है कि वैदिक काल में जन्म पर आधारित जाति-व्यवस्था नहीं थी बल्कि कर्म पर आधारित वर्ण व्यवस्था थी जो पाश्चात्य देशों की मुक्त वर्ग प्रणाली के समान थी।

परन्तु इस काल के अन्तिम भाग में ब्राह्मण और क्षत्रियों में, ब्राह्मणों द्वारा रखी गई सुविधाओं सम्बन्धी मांगों के कारण संघर्ष हुआ। यद्यपि ब्राह्मणों को हरा दिया गया तथापि . उन्हें बहुत-सी सुविधायें प्राप्त हो गई। पुजारी या पंडित का पद वंशानुगत हो गया तथा ब्राह्ममण रक्त-शुद्धता पर ध्यान देने लगे। इस काल में जाति-व्यवस्था नहीं थी। खान-पान सम्बन्धी प्रतिबन्ध भी नहीं पाए जाते थे। ऊपर के तीनों वर्णो (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य) के लोगों में विवाह सम्बन्धी कोई प्रतिबन्ध नहीं था तथा ये आपस में वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित कर सकते थे। भोजन तथा विवाह सम्बन्धी प्रतिबन्धों का न होने का कारण यह था कि इन वर्णो में आपस में ऊंच नीच की भावना नहीं थी। ये

तीनों वर्ण एक ही प्रजाति के थे तथा इनमें भाषा, धर्म तथा संस्कृति की दृष्टि से कोई भेद नहीं था।

ऋग्वेद कालीन साहित्य के अध्ययन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि इस काल के अन्मि वर्षो में ब्राह्मणों को उच्चतम स्थिति प्राप्त हो गयी थी। इस काल के अन्त में क्षत्रियों को 'राजन्य' कहा गया। इस वर्ग के लोग मुख्यत: शासन तथा सेना सम्बन्धी कार्यो में लगे हुए थे, परन्तु वे अन्य पेशे अपना सकते थे। इस वर्ग को ब्राह्मणों से निम्न स्थिति प्राप्त हुई। वैदिक साहित्य में वैश्य वर्ण का वर्णन बहुत कम मिलता है। वैश्यों की स्थिति महत्वपूर्ण नहीं थी। ऋग्वेद में शूद्र का वर्णन केवल एक स्थान पर मिलता है।

चार वर्णो के अतिरिक्त ऋग्वैदिक साहित्य में अनेक व्यवसायों के नाम पाये जाते है, जैसे सुनार, नाई, मोची, चिकित्सक, लुहार, व्यापारी तथा रथ बनाने वाला आदि। यह स्पष्ट नहीं है कि इन व्यवसायों में लगे हुए लोग चार वर्णो के अन्तर्गत ही विभक्त थे अथवा उनके अपने अलग वर्ग थे। एक ही पेशे में विभिन्न नाम भी मिलते हैं। एक ही पेशे में लगे हुए दो समूहों के बीच भिन्न-भिन्न नाम पाये जाते हैं। तथा उनकी स्थिति पृथक जातियों अथवा उप-जातियों के रूप में है। श्रग्वेद में कुछ ऐसे समूहों का वर्णन मिलता है जिनसे जाति का बोध होता है, जैसे चाण्डाल, निषाद आदि। चाण्डाल को शूद्र पिता और ब्राह्मण माता की सन्तान तथा वर्णसंकर और पतित माना गया है। **जी0 एस0 घुरिये(1961)** का मत है कि चाण्डाल एवं निषाद आदिवासी समूह रहे हैं जिनका आर्यो के साथ सम्पर्क हुआ तथा आर्यो ने उन्हें समाज में निम्नतम स्थिति प्रदान की।

उत्तर वैदिक समय में चारों वर्ण एक-दूसरे से पृथक हो गए तथा प्रत्येक में आन्तरिक दृढ़ता आने लगी। ब्राह्मणों ने अपनी शक्ति को बढ़ाने का प्रयत्न किया और धर्मशास्त्रों ने इसमें योग दिया। इस काल में सर्वप्रथम 'जाति' शब्द का प्रयोग हुआ। वास्तव में जाति शब्द का प्रयोग वर्णो और उनके अन्तर्गत बनने वाले उप-समूहों के लिए किया गया। सामाजिक तथा आर्थिक परिवर्तनों के कारण सामाजिक विभेद बढ़ता जा रहा था। ब्राह्मण दण्ड और उत्तराधिकार के सम्बन्ध में पक्षपातपूर्ण नियम बना रहे थे। वर्ग-संघर्ष अधिक जटिल रूप धारण करता जा रहा था। इस समय जैन तथा बौद्ध धर्म का विकास हुआ। समानता की नीति पर आधारित, क्षत्रियों द्वारा पोषित जैन तथा बौद्ध धर्म ब्राह्मणवाद के विरूद्ध थे। जैन तथा बौद्ध धर्म-ग्रन्थों में क्षत्रियों को ब्राह्मणों से ऊंचा माना गया है जिससे ब्राह्मणवाद को क्षति पहुंची। जन्म को महत्व न देकर कर्म को महत्व दिया गया।

जैन तथा बौद्ध धर्म के पतन के पश्चात् ब्राह्मणों की शक्ति फिर से बढ़ने लगी। उन्होंने धर्म के क्षेत्र में यज्ञ, विधि-विधान तथा अनुष्ठान आदि की व्यवस्था कर

धार्मिक विधानों को अत्यत्न जटिल बना दिया। वर्ण-व्यवस्था में जाति-व्यवस्था की अनेक विशेषताऐं आने लगीं। इस काल में ब्राह्मण एवं वैश्य, जाति का रूप प्राप्त कर चुके थे। अपने वर्ण से बाहर विवाह करने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। यद्यपि अनुलोम विवाह मान्य थे। तथापि ऐसे विवाहों से उत्पन्न सन्तान को माता-पिता की जाति मे न रख कर अलग जातियों में रखा गया। जाति-वर्ण-संकरता को हेय दृष्टि से देखा गया। गौतम तथा बौधायन ने मिश्रित जातियों की एक सूची प्रस्तुत की है। इन सब में विभिन्न वर्गो मे प्रतिबन्धों के उपरान्त भी अन्तर्जातीय विवाह होते रहे। इस काल में प्रत्येक जाति के पेशे तथा कर्तव्य जन्म के आधार पर निश्चित कर दिये गये। बौद्ध धर्म से सम्बन्धित साहित्य मे अनेक पेशों को आनुवंशिक माना गया है। छुआ-छूत के विचारो का प्रारम्भ इसी काल मे हुआ। भोजन के सम्बन्ध मे छुआ-छूत के नियमों का उल्लेख प्रथम बार आपस्तम्बू के धर्मशास्त्रों मे मिलता है। इस समय भोजन के सम्बन्ध में अनेक नियम बनाए गए जिनमे मुख्य रूप से शूद्रों के हाथ का बनाया हुआ भोजन अन्य वर्णो के लिए वर्जित माना गया। इस काल में एक ओर जहाँ ब्राह्मणों की स्थिति और भी उच्च हुई वहाँ दूसरी और शूद्रों की स्थिति में गिरावट आयी। घुरिये ने लिखा है कि प्रमाणों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि इस काल में वैश्य और शूद्र एक ही स्तर पर रखे गए थे, उन्हें समान माना गया था। इसी उत्तरवैदिक काल में वास्तविक रूप में जाति-व्यवस्था का निर्माण प्रारम्भ हुआ। जन्म तथा वंशानुक्रमण के तत्वों को महत्व दिया जाने लगा। जन्म के आधार पर व्यक्ति का वर्ण निश्चित होने लगा। ब्राह्मण परिवार में जन्म लेने वाला ब्राह्मण ही कहलाने लगा चाहे वह कोई भी कार्य क्यों न करे। इतना सब कुछ होने के उपरान्त भी इस काल में जाति-व्यवस्था के बन्धन पूर्णतः स्पष्ट नहीं थे।

तीसरी शताब्दी के अन्तिम वर्षो से **धर्मशास्त्र काल** का प्रारम्भ होता है। इस काल में जाति-व्यवस्था को अधिक स्थायित्व प्राप्त हुआ। इस युग में ब्राह्मणों का स्थान बहुत ऊचां हो गया। घुरिये का कथन है कि इस काल में हिन्दू धर्म के आदर्शो में दो महत्तवपूर्ण परिवर्तन हुए जिनका जाति-व्यवसथा के सैद्धान्तिक और व्यवहारिक पहलुओं पर काफी प्रभाव पड़ा। एक ओर ब्राह्मणों को दान देने की पवित्रता एवं महत्व को व्यक्त कर उनकी सामाजिक स्थिति को दृढ़ किया गया तथा दूसरी ओर पुनर्जन्म और कर्मवाद कें सिद्धान्तों को प्रतिपादित किया गया। इस काल में ब्राह्मणों को अनेक विशेषाधिकार प्राप्त हुए, उनकी सामाजिक स्थिति उच्चतर हुई ।

इस काल में अन्तर्जातीय विवाहों पर कठोर प्रतिबन्ध लगाए गए और जाति अन्तर्विवाह के नियम का पालन करना अति आवश्यक बताया गया, परन्तु अनुलोम विवाह मान्य थे और ऐसे विवाहों से उत्पन्न द्विज वर्णो की सन्तानों को द्विज ही माना गया।

शक्तिशाली ब्राह्मणों ने वेदों तथा धर्मशास्त्रों के मन्तव्यों को परिवर्तित कर अपने इच्छानुसार उनकी व्याख्या की। उन्होंने जाति-व्यवस्था को और भी संकुचित करने का प्रयत्न किया। जाति के नियमों में कठोरता आने लगी। अन्तर्विवाह पर जोर दिया गया और अनुलोम विवाहों को समाप्त कर दिया गया। चारों वर्ण अन्तर्विवाहिक समूह बन गये। जन्म और शुद्धता को विशेष महत्व दिया गया। भोजन सम्बन्धी प्रतिबन्ध भी बढ़ने लगे और कारीगरी का काम करने वाली जातियों को, जिसमें सुनार, लुहार, धोबी, बढ़ई, जुलाहा इत्यादि आते हैं, नीचा समझा गया। जातियों में पवित्रता, अपवित्रता और छुआ-छूत के भाव निर्मित किये गये। आर्थिक परिवर्तनों के कारण लोगों को इस काल में परम्परागत पेशों के अतिरिक्त अन्य पेशे भी विवशतावश अपनाने पड़े। इस काल में वर्णसंकर जातियों की संख्या में वृद्धि हुई।

इस काल में कबीर, नानक, चैतन्य महाप्रभु आदि सन्तों ने ब्राह्मणों द्वारा फैलाये गये आडम्बर, रूढ़िवादिता, छुआ-छूत इत्यादि का विरोध किया। तेरहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में महाराष्ट्र में नामदेव और तुकाराम नामक प्रसिद्ध शूद्र सन्त हुए। इन लोगों के फलस्वरूप शुद्रों कों कुछ अधिकार प्राप्त हुए तथा उनके लिए मोक्ष प्राप्ति का साधन जप बताया गया, लेकिन इस समय तक समाज में इतनी जड़ता आ चुकी थी, व्यक्ति इतने गतिहीन एवं धर्मभीरू बन चुके कि साधु-सन्तों के सुधार प्रयासों का लोगों पर कोई विशेष प्रभाव नही पड़ा। इस काल में जाति की कट्टरता में और भी अधिक तेजी आई और लोग अधिकाधिक मात्रा में रूढ़िवादी एवं अन्धविश्वासी बनते गये। वास्तव में, इस समय तक जाति व्यवस्था हिन्दुओं के सामाजिक जीवन का एकमात्र आधार बन चुकी थी।हिन्दू स्त्रियों के सतीत्व रक्षा, मुसलमानों के साथ उनके विवाह रोकने एवं रक्त-शुद्धता को बनाए रखने के लिए एक ओर तो बाल विवाहों का प्रचलन हुआ, सती प्रथा को प्रोत्साहित किया गया एवं दूसरी ओर स्त्रियों की गतिशीलता पर रोक लगाई गई, पर्दा प्रथा को बढ़ावा दिया गया, विधवा विवाह पर कठोर प्रतिबन्ध लगा दिये गये। इस प्रकार हिन्दू समाज जातिगत संकीर्णता और रूढ़ियों में जकड़ गया। विदेशी हम पर दिन-प्रतिदिन आक्रमण करक अपना साम्राज्य विस्तार करने में सफल होते जा रहे थे।

भारत में **आधुनिक काल** में ब्रिटिश साम्राज्य के स्थापित होने के पश्चात् जाति-व्यवस्था में अनेक परिवर्तन हुए। ब्रिटिश काल में उन उपजातियों में स्थायित्व आ गया जिनकी रचना मध्यकाल में हुई थी। इस काल में उपजातियों की संख्या में बृद्धि हुई। भारत में आने पर अंग्रेजों ने देखा कि भारतीय समाज पर ब्राह्मणों का अत्यधिक प्रभाव है। अत: उन्होंने ब्राह्मणों की सहायता से अपना शासन सुदृढ़ बनाने की कोशिश की। उन्होंने ब्राह्मणों को उच्च आय वाले पदों पर नियुक्त किया और ब्राह्मणों ने सार्वजनिक प्रशासन के प्रत्येक क्षेत्र में अपने को अनिवार्य बना दिया। इस समय ब्राह्मण

पूर्ण शक्ति-सम्पन्न हो गये। **नर्मदेश्वर प्रसाद** ने लिखा है, ''ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत ब्राह्मणवाद अत्यधिक सुरक्षित हो गया''।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने मन्दिरों को काफी प्रोत्साहन दिया क्योंकि ये कम्पनी की आय के अच्छे साधन थे। इन मन्दिरों ने ब्राह्मणवाद एवं जाति-व्यवस्था के विकास में अत्यधिक सहयोग दिया। इस काल में कई सुधारवादी आंदोलन असफल रहे क्योंकि ब्राह्मणवाद को ब्रिटिश-काल का संरक्षण प्राप्त था। इसके अतिरिक्त अंग्रेजी शासन-काल में कानून के हिन्दू धर्म-ग्रन्थों पर आधारत होने क कारण ब्राह्मणों से उनकी व्याख्या करवाई जाती थी। सन् 1767 ई0 ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने जातीय अदालतों की सथापना की जिन्हें हिन्दुओं के सामाजिक और पारिवारिक जीवन में हस्तक्षेप करने के अधिकार दिये गये विरूद्ध फैसले का अर्थ था, व्यक्ति की सामाजिक मृत्यु। इन सबका परिणाम यह हुआ कि जाति-व्यवस्था, जिस पर ब्राह्मणों का सामाजिक एवं धार्मिक प्रभुत्व आधारित था, अत्यन्त शक्तिशाली होती गई।

लेकिन ब्रिटिश सरकार ने धीरे-धीरे भारतीयों के सामाजिक एवं धार्मिक जीवन में रूचि लेना बन्द कर दिया। विज्ञान तथा दर्शन का विकास होने लगा और ब्राह्मण पण्डितों एवं पुजारियों का प्रभाव कम होने लगा। पिछले चार कालों में जाति-व्यवस्था में जो परिवर्तन हुए, वे इतने महत्वपूर्ण एवं क्रांतिकारी नहीं थे जितने आधुनिक काल में हुए परिवर्तन। इस काल में एक ओर हिन्दू समाज पर एकेश्वरवादी ईसाई धर्म का प्रभाव पड़ा और दूसरी ओर देश की नवीन पूंजीवादी आर्थिक और धर्म-निरपेक्ष राजनीतिक व्यवस्था का ईसाई धर्म के प्रभाव के कारण जाति-व्यवस्था के विरोध में अनेक सुधारवादी आंदोलन उठ खड़े हुए। ब्रह्म समाज, आर्य समाज एवं प्रार्थना समाज इत्यादि ने जातीय आधार पर पाये जाने वाले भेद-भाव के विरूद्ध आवाज उठाई और गुण तथा कर्म पर आधारित वर्ण-व्यवस्था को स्वीकार कर, उसी का प्रचार प्रारम्भ किया। सुधारवादी आन्दांलनों के कारण शूद्रों की स्थिति में काफी सुधार हुआ। इन सुधार आन्दोलनों के कारण इतना अवश्य हुआ कि समय-समय पर अनेक अधिनियम पारित हुए जिन्होंने सती-प्रथा एवं बाल-विवाह को बन्द करने और अनतर्जातीय विवाहों को प्रोत्सिाहित करने में योग दिया।

20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में जाति-व्यवस्था के आधारभूत सिद्धान्तों का विरोध प्रारम्भ हुआ।इस दिशा में गोपालकृष्ण गोखले, लोकमान्य तिलक, रानाडे तथा महात्मा गांधी के प्रयास उल्लेखनीय हैं। अछूतों को हिन्दू समाज का अभिन्न अंग माना गया। स्वतन्त्रता प्राप्ति हेतु राष्ट्रीय कांग्रेस के नेतृत्व में चल रहे आन्दोलन में विभिन्न जातियों के व्यक्तियों को एक साथ काम करने का अवसर मिला। वे एक साथ जेलों में गये

तथा एक-दूसरे के निकट सम्पर्क में आए। इस काल में अनेक कारकों यथा, पाश्चात्य शिक्षा, पाश्चात्य सभ्यता, संचार साधनों, नवीन आर्थिक व्यवस्था, नगरीकरण, नवीनसामाजिक समूहों का जन्म, धार्मिक राजनैतिक, सामाजिक आंदोलन, प्रजातंत्रीय प्रणाली, कल्याणकारी राज्य की नीति, जजमानी प्रथा में ह्रास के फलस्वरूप देश में ऐसा वातावरण तैयार हुआ जिसने जाति व्यवस्था में तेजी से परिवर्तन लाने में महत्वपूर्ण योग दिया।

इन कारकों के फलस्वरूप जातीय संस्तरण में महत्वपूर्ण परिवर्तन आए। प्रत्येक जातीय समूह ने विशेष रूप से निम्न जातियों ने अपने से उच्च जातियों की जीवन विधि अपनाकर जातीय संस्तरण में अपनी सामाजिक स्थिाति ऊँचा उठाने का प्रयत्न किया है। इस प्रक्रिया को **एम0 एन0 श्रीनिवास(1966)** ने **संस्कृतीकरण** की प्रक्रिया कहा है। इस प्रक्रिया के तहत इन्होंने इस धारणा को तोड़ा कि जाति एक स्थिर एवं अपरिवर्तनशील व्यवस्था है। अपने कुर्ग के अध्ययन में श्रीनिवास ने पाया कि कुर्ग में पायी जाने वाली अनेक जातयां लगातार इस प्रयास में रहती है कि समाज में एक दो पीढ़ी के बाद उनका स्तर ऊँचा समझा जाये। इस प्रयास में वे लगातार अपने संस्कारों में परिवर्तन लाती है, क्योंकि कुर्ग में सर्वोच्च जाति ब्राह्मण माने जाते हैं, इसलिए जाति अनुक्रम में ब्राह्मण से नीचे आने वाली सभी जातियां ब्राह्मणों के संस्कार जैसे जनेऊ पहनना, मांस-मदिरा का सेवन न करना तथा ब्राह्मणों की तरह छुआछूत का पालन करना यहां तक कि वेशभूषा में परिवर्तन लाने का लगातार उपक्रम करती है। ऐसा करने का प्रयोजन यह रहता है कि एक दो पीढ़ी के बाद जाति अनुक्रम में उनका स्थान ऊँचा समझा जाये। श्रीनिवास ने जातिव्यवस्था में व्याप्त इसी गतिशीलता का सूक्ष्मता से अध्ययन किया और अपने पहले अध्ययन में उन्होंने इस प्रक्रिया को **ब्राह्मणीकरण** की संज्ञा दी। बाद में उनहोंने ब्राह्मणीकरण के स्थान पर इस प्रक्रिया को संस्कृतीकरण कहा। इस धारणा को संस्कृतीकरण के नाम से जानने का कारण उन्होंने बताया कि कुर्ग में ब्राह्मण सबसे प्रभुत्वशाली जाति है, इसलिए अन्य जातियां ब्राह्मणे का अनुकरण कर रही है। लेकिन अन्य स्थानों पर यह देखा गया कि अनेक जातियां जहां क्षत्रिय प्रभावशाली है, वहां क्षत्रियों का अनुकरण कर रही है।, अथवा जहां वैश्य प्रभावशाली है, वहां वैश्यों का अनुकरण कर जाति अनुक्रम में अपना ऊँचा स्थान सुनिश्चित करने में प्रयत्नशील है। इसलिए भारतीय समाज में निहित प्रक्रिया को उन्होंने ब्राह्मणीकरण के स्थान पर संस्कृतीकरण की संज्ञा से संबोधित किया। उनके कहने का तात्पर्य यह था कि सभी जातियां जिनका स्थान जाति अनुक्रम में नीचे रहता है, वे लगातार अपने संस्कारों में परिवर्तन लाने के लिए प्रयासरत रहती हैं और यही जाति व्यवस्था की गतिशीलता कहलाती हैं।

लेकिन जहां सामाजिक संस्तरण में जातीय समूह भी सामाजिक स्थिति को ऊँचा उठाने का प्रयास हुआ वहां जाति विशेष के लोगों में दृढ़ता की भावना मजबूत हुई है। विभिन्न समुदायों में शक्ति एवं सत्ता के सम्बन्ध में परिवर्तन आया है। यह बात सही है कि धार्मिक अथवा संस्कारात्मक क्षेत्र में आज भी परम्परागत संस्तरण को महत्व दिया जाता है, लेकिन राजनैतिक, आर्थिक तथा सामाजिक क्षेत्र में केवल उच्च जाति से सम्बन्धित होने के कारण उनका प्रभुत्व अथवा विशेषाधिकार अब नहीं है। केवल ब्राह्मण मात्र होने से व्यक्ति की प्रभुता एवं आधिपत्य मानने के लिए आज लोग तैयार नहीं हैं। प्रजातंत्रीकरण, सामाजिक संरचना के राजनीतिकरण, भूमिसुधारों के कारण विभिन्न जातियों के बीच शक्ति सम्बन्ध परिवर्तित हो रहे हैं।

आर्थिक स्थिति

नवीन आर्थिक परिवर्तनों के कारण जातिगत पेशों में परिवर्तन हो रहा है। अब व्यक्ति पूर्व व्यवसाय के स्थान पर नये व्यवसाय को अपना रहा है। जिसे व्यवसायिक गतिशीलता भी माना जाता है।

औद्योगिक विकास के कारण प्राचीन समय से चले आ रहे परम्परागत व्यवसाय में परिवर्तन की गति तीव्र हो रही है। आज व्यक्ति अपनी इच्छा एवं योग्यता के आधार पर किसी भी पेशों को अपना सकता है। व्यवसायिक क्षेत्र में गतिशीलता बढ़ने से विभिन्न जातियों के लोगों को समान आर्थिक अवसर मिलने लगे हैं एवं जाति का व्यवसायिक आधार कमजोर होता जा रहा हैं भूमि के स्थान पर मुद्रा का आर्थिक जीवन का आधार बन जाने से शूद्रों की स्थिति में परिर्वतन आया है। वे उन पेशों को छोड़ने लगे हैं जिनके करने से उन्हें निम्न स्तर प्राप्त था और वे नवीन पेशों को अपना रहे हैं।

सामाजिक परिवर्तन के फलस्वरूप व्यवसायिक गतिशीलता में तीव्र वृद्धि हो रही है। व्यवसायिक गतिशीलता वास्तव में सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन काल की देन है और औद्योगीकरण एवं कृषि विकास की प्रक्रिया का पूर्ण होने पर व्यवसायिक गतिशीलता कम हो जाती है। यही कारण है कि विकसित देशों में जहां औद्यौगीकरण विकास की चरम सीमा पर, वहां व्यवसायिक गतिशीलता कम है, उसी प्रकार भारत के पंजाब, हरियाणा आदि जगहों पर जहां कृषि विकास हुआ है, वहां की गतिशीलता की दर अन्य जगहों की अपेक्षा कम पायी जाती है। कृषि पर आधारित स्थिर समाजों में व्यवसायिक गतिशीलता पायी जाती है।यह बात इन अध्ययन क्षेत्रों में पायी जा रही हैं।

सामाजिक गतिशीलता एवं व्यवसायिक गतिशीलता एक दूसरे से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित है। व्यवसायिक गतिशीलता के अन्तर्गत व्यक्ति एक व्यवसाय को छोड़कर दूसरे व्यवसाय को अपना लेता है, जबकि सामाजिक गतिशीलता के अन्तर्गत लोग एक सामाजिक स्थिति से दूसरी सामाजिक स्थिति में चले जाते हैं। वर्तमान में सर्वत्र सामाजिक

एवं व्यवसायिक गतिशीलता देखी जा रही हैं। अकुशल श्रमिक अधिक कुशल बन रहे हैं। शारीरिक परिश्रम करने वाले लोग सफेदपोश बनकर नये नये व्यवसाय अपना रहे हैं। ग्रामीण मजदूर एवं गरीब बेरोजगार अपने क्षेत्र में रोजगार की कमी, कम मजदूरी दर एवं शोषण आदि की वजह से अपने क्षेत्र से पलायन करके बाहर रोजगार की तलाश में जा रहे हैं।

चूँकि अध्ययन हेतु चुने गये दोनों क्षेत्रों में औद्योगिकीकरण का अभाव है, साथ ही ये दोनों क्षेत्र कृषि पर आधारित समाज है, अत: इन क्षेत्रों में व्यवसायिक गतिशीलता बहुतायत में देखने को मिलती है। इन दोनों क्षेत्रों में यादव जाति व्यवसायिक गतिशीलता में अग्रणी है। यादव जाति के लोग भट्टा, ट्रक सम्बन्धी उद्योग धंधों में तेजी से आ रहे हैं। इसी प्रकार मुस्लिम समुदाय के लोग भी सभी प्रकार के व्यवसायों को अपना रहे हैं।

राजनीतिक स्थिति

अध्ययन हेतु चुने गये दोनो क्षेत्रों में अजादी के पहले विभिन्न जातियों के बीच जो शक्ति सम्बन्ध थे, वे आजादी के बाद नही रहे तथा विभिन्न जातियों के बीच शक्ति सम्बन्ध तेजी से परिवर्तित हो रहे है। जातिगत चेतना ने शक्ति सम्बन्ध को परिवर्तित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। जातिगत चेतना के कारण उच्च व पिछड़ी जातियों के मध्य अन्त: सम्बन्धों में परिर्वतन आया है। आज कोई जाति अपने की किसी जाति से नीचा नही मानती है। वर्तमान समय में व्यक्ति की सामाजिक स्थिति का निर्धारण भी जन्म अथवा जाति के आधार पर नही हो रहा है। पिछड़ी जातियों एवं अनुसूचित जातियों की स्तरीकृत समाज में स्थिति ऊँचा उठा है।

वर्तमान में विभिन्न जातियों के बीच शक्ति सम्बन्ध तथा निम्न जातियों में उच्च जातियों का अनुकरण करने और उनके जीवन की विधि को अपनाने की प्रवृत्ति कम होती जा रही है। इसका कारण सम्मान और शक्ति के बदलते स्रोत हैं। प्रजातंत्रीकरण सामाजिक संरचना के राजनतिकरण, भूमि-सुधारों ग्रामों में चल रहे विकास कार्यो के कारण ग्रामीण समुदायों की औपचारिक रूप से बंद व्यवस्थाओं में कुछ खुलापन आता जा रहा है, अत: ऐसी स्थिति में जातियों की पूर्ववर्ती शक्ति का स्वरूप भी तेजी से बदल रहा है। **डा० योगेन्द्र सिंह (1983)** का मानना है कि जाति व्यवस्था में संरचनात्मक परिवर्तन की दृष्टि से यह एक संभावित क्षेत्र है।[1] ऊपर वर्णित कारकों से विभिन्न जातियों के बीच शक्ति संरचना परिवर्तित हो रहे हैं। वर्तमान में ग्रामीण क्षेत्रों में प्रभुत्व सम्पन्न जातियों को अन्य जातियों की नवीन चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। इसका कारण यह है कि भूमि सुधारों एवं ग्राम पंचायतों में स्थान प्राप्त करने से इन जातियों की शक्ति बढ़ गयी है। आज निम्न जातियां एवं वर्ग संगठित होकर उच्च जातियोंक एवं वर्गो से शक्ति प्राप्त

करने के लिए प्रतस्पर्द्धा कर रहे हैं। यह प्रवृत्ति वर्ग समूह के स्थान पर जाति समूहों के लिए अधिक सही है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात मौलिक प्रजातंत्रीकरण की प्रक्रिया ने उच्च जातियों की संदर्भ समूह के रूप में स्थिति को चुनौती दी है। योगेन्द्र सिंह ने बताया कि उदग्र गतिशीलता या संस्कृतीकरण की प्रारंभिक आकांक्षा का स्थान अब स्वयं की जाति के साथ तादात्म्य या एकता स्थापित करने की नवीन भावना बढ़ती हुई जातीय दृढ़ता ने ले लिया है। जातीय संगठन (समितियां) इसी नवीन प्रवृत्ति का एक अप्रत्यक्ष प्रतिबिम्ब है।

ग्रामीण भारत में प्रारम्भ में स्तरीकृत समाज का स्वरूप वर्ण व्यवस्था के समान था। जिस प्रकार वर्गो के बीच सदस्यता में परिवर्तन हो सकता है, उसी प्रकार वर्णव्यवस्था में भी कोई व्यक्ति अपने अर्जित गुणों के आधार पर नये वर्णो की सदस्यता ग्रहण कर सकता था। प्रमुख बात यह थी कि किसी एक वर्ण में जन्म लेकर भी कोई व्यक्ति अन्य वर्ग का सदस्य बन सकता था, इस प्रकार ज्ञान और विद्या अर्जन से शूद्र, वैश्य और क्षत्रिय भी ब्राह्मण बन सकते थे। साथ ही एक ब्राह्मण अपने कर्मो से गिर जाने पर नीचे वर्ण को ग्रहण कर लेता था। अत: प्रस्थिति निर्धारण किसी व्यक्ति के व्यक्तिगत योग्यता और रूचियों पर आधारित था।

इसके ठीक विपरीत जाति व्यवस्था में अपनी जाति के व्यवसाय या उसके द्वारा अपेक्षित योगयता न होने पर भी व्यक्ति जाति का सदस्य बना रह सकता है। इस प्रकार जाति व्यवस्था संकीर्ण होती चली गई और इसकी सदस्यता जन्म से निर्धारित होने लगी।

वर्तमान में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन यह देखने में आ रहा है कि जाति के अंदर ही वर्ग पैदा होने लगे हैं और विभिन्न जातियों के व्यक्ति एक वर्ग में सम्मिलत हो रहे हैं। आज औद्योगीकरण, नगरीकरण तथा धर्म निरपेक्ष राज्य ने अनेक सामाजिक, आर्थिक शक्तियों को जन्म दिया है, जिन्होंने जाति व्यवस्था के संरचनात्मक आधार में परिवर्तन लाने में योग दिया है। आज जन्म के स्थान पर सम्पत्ति सामाजिक स्थिति के निर्धारण का आधार बन गई है, साथ ही जाति व्यवस्था से सम्बन्धित कई प्रतिबन्ध शिथिल होते जा रहे हैं। जाति के कुछ परम्परागत बन्धन ठीक हुये है। इसी संदर्भ में राधाकमल मुख़र्जी ने कहा है कि नगरी वातावरण ने छुआ-छूत के नियमों और निम्नस्तर की जातियों की नागरिक और धार्मिक निर्योग्यताओं को शिथिल करने में सहायता पहुँचाई है। आज छुआछूत और खानपान के प्रतिबन्ध ही ढीले नहीं हुए बल्कि जातियों की परम्परागत स्थिति भी परिवर्तित हो रही है।[1] आज जाति के साथ साथ कुछ समानान्तर संगठन भी प्रकट होने लगे हैं। आज एक ओर जाति के भीतर वर्ग उत्पन्न होने लगे है और दूसरी ओर जाति की सीमाओं को पार कर विभिन्न जातियों के लोगों के वर्ग बनने लगे है। आर्थिक, राजनैतिक एवं शैक्षिक दृष्टि से जब व्यक्ति उच्च स्थिति प्राप्त कर लेता है, तो

उसके परिवार की प्रस्थिति भी उच्च हो जाती है। एक जाति विशेष में उच्च प्रस्थिति वाले परिवार चेतन अथवा अचेतन रूप में एक परत बना लेते हैं, जो कालान्तर में श्रेणी अथवा वर्ग के रूप में बदल जाती है। आज ऐसे संघों का निर्माण भी हुआ है जिनकी सफलता का आधार जाति न होकर व्यवसाय है। ये संघ, वर्गों की ही विशेषताओं को इंगित करते हैं। इसमें जाति की सीमाओं को लॉघकर समान व्यवसाय अथवा आर्थिक स्थिति वाले लोग पाये जाते हैं।

इन दोनों क्षेत्रों में एक नया परिवर्तन देखने में आ रहा है कि एक नया वर्ग **मिडलिंग क्लास** का प्रादुर्भाव हो रहा है, जो राजनैतिक तथा आर्थिक रूप से मजबूत है।ये इन क्षेत्रों में राजनीति के साथ साथ आर्थिक रूप में भी शक्तिशाली है। ये अधिकांशतः पिछड़ी जातियों से सम्बद्ध लोग हैं, साथ ही साथ अल्पसंख्यक वर्ग कहे जाने वाले मुस्लिम समुदाय भी उभर रहा है। इन क्षेत्रों में इनका वर्चस्व बढ़ता जा रहा है।यह स्थिति पूरे बिहार में भी देखी जा रही है। बिहार में यादव, कुर्मी, मुस्लिम एक ''मिडिलिंग क्लास'' के रूप में उभर रहे हैं। समाजशास्त्रीय दृष्टि से यह एक क्रांतिकारी परिवर्तन है। यद्यपि परम्परागत जातिस्तरण में ये जातियां किसी स्थान को ग्रहण नहीं करती परंतु राजनैतिक व आर्थिक रूप से उच्च प्रस्थिति को धारण किये हुए हैं। यह बात आज भी सही है कि धार्मिक कृत्यों का सम्पन्न करने के लिए अब भी ब्राह्मणों की आवश्यकता पड़ती है, परंतु राजनैतिक आर्थिक मामलों में जाति व्यवस्था के संस्तरण के सिद्धांत को अब कोई महत्व नहीं दिया जाता। यद्यपि जाति प्रथा और वर्ग व्यवस्था दोनों ही स्तरीकरण के दो मुख्य रूप हैं, तथापि दोनों के आधार में कुछ भिन्नता है- जातिप्रथा का आधार सामाजिक है, वर्ग व्यवस्था का आर्थिक।

नर्मदेश्वर प्रसाद(1965) का कहना है कि भारतीय जाति व्यवस्था धार्मिक पौराणिक किस्म की है, जब यूरोपीय जाति व्यवस्था आर्थिक-राजनैतिक किस्म की है। आधुनिक समय में भारतीय जाति व्यवस्था ने राजनैतिक विशेषताओं को भी ग्रहण कर लिया है, अर्थात अब इसमें दोनों किस्मों का समिश्रण है। यूरोप में, जाति के वर्ग के रूप में बदलने की और वर्ग के जाति के रूप में दृढ़ होने की सदैव सम्भावना रही, लेकिन भारत में जाति ने कभी भी अपने को पूर्णतः वर्ग के रूप से मुक्त नहीं किया। इसका कारण है कि भारत में जाति को कभी भी पौराणिक कथा और अन्धविश्वासों से स्वतंत्र नहीं किया गया। भारत में भूमि तथा मंदिर भी एक अथवा दूसरी जाति से सम्बन्धित होते हैं। हिन्दू देवी देवता भी प्रायः उन्हीं जातीय प्रतिमानों का अनुकरण करते हैं। **आर0 एन0 सक्सेना(1960)** का मानना है कि भारत उन्हीं परिवर्तनकारी शक्तियों के प्रभाव में है, जिन्होंने पश्चिमी समाज की वर्ग व्यवस्था को जन्म दिया है।

एक महत्वपूर्ण बात यह देखने में आ रही है कि जाति के अंदर ही वर्ग पैदा होने लगे हैं और विभिन्न जातियों के व्यक्ति एक वर्ग में सम्मिलित हो रहे हैं। विभिन्न जातियों ने अपना जातीय संगठन बनाकर वर्ग की विशेषताएं ग्रहण की है। जातीय संगठनों ने विभिन्न जातियों के मध्य जातिगत चेतना के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। वर्तमान में जातीय संगठनों का गठन एक नवीन लक्षण है। आज परम्परागत जाति पंचायतें अपने क्षेत्र में कार्य कर रही है तो नवीन जातीय संगठनों, परम्परागत जाति व्यवस्था की बुराइयों को दूर करने में और समान स्तर की जातियों में एकता स्थापित करने के प्रयत्नों में लगी हैं। जातीय संगठन अब भारत की राजनैतिक प्रक्रियाओं में अधिकाधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। विशेषत:, विधानसभाओं और जिला समितियों के चुनावों में तथा सरकार द्वारा संचालित संस्थाओं के पदों में वितरण के मामलों में। भारतीय राजनीति में जाति संगठन उसी प्रकार की भूमिका निभा रही है, जैसी यूरोप और अमेरिका की राजनीति में ऐच्छिक समितियां। जातीय संगठन पैराकम्यूनिटीज हैं जो जातियों के सदस्यों को सामाजिक गतिशीलता, राजनैतिक शक्ति तथा आर्थिक लाभ प्राप्ति हेतु आगे बढ़ने में समर्थ बनाती है। वर्तमान में अनेक जातियों में राजनैतिक चेतना बढ़ी है जिससे उन्हें संगठित होने के लिए प्रेरित किया है। वर्तमान परिस्थितियों के अन्तर्गत जाति का राजनैतिक महत्व बढ़ गया है और इस कारण प्रत्येक जाति संगठित होने के लिए प्रोत्साहित हुई है। बिहार राज्य में **त्रिवेणी संगम** का गठन यह इंगित करता है कि किस प्रकार से बिहार राज्य की तीन प्रमुख पिछड़ी जातियां- कुर्मी, कोइरी, यादव ने अपने हितों की रक्षा हेतु एक मंच का गठन किया। इसका मुख्य कारण यह था कि बदली परिस्थितियों में जिस नई आर्थिक संरचना का निर्माण हुआ उसमें इन तीनों जातियों को विशेष रूप से आर्थिक लाभ हुआ तथा अपनी प्रस्थिति की उन्नति करने हेतु इन्हें एक मंच पर आना पड़ा। वर्तमान में **एमवाई(MY)** संगठन बिहार की क्षेत्रीय राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। मुसलमान व यादव मिलकर क्षेत्रीय पार्टी को लाभ पहुँचा रहे हैं।

अध्याय-3

आर्थिक परिवर्तन के प्रतिमान

अध्याय–3

आर्थिक परिवर्तन के प्रतिमान

इस अध्याय में अध्ययनकर्ता दोनों अध्ययन क्षेत्र के बदलते हुए आर्थिक प्रतिमान का अध्ययन किया है। आजादी के पूर्व इन दोनों क्षेत्रों की अर्थव्यवस्था का आधार कृषि था, जो जीवन निर्वाह की सीमा पर थी तथा सापेक्षतः आत्मसीमित थी।अधिकांश लोग कृषि और परम्परागत व्यवसाय के आधार पर अपना जीवन यापन करते थे। व्यक्ति की, जाति द्वारा व्यवसाय का निर्धारण होता था। प्रत्येक जाति किसी न किसी व्यवसाय के साथ जुड़ी हुई होती थी। गाँव की अर्थव्यवस्था के समग्र स्वरूप में अपने व्यवसायिक विशेषीकरण के आधार पर विभिन्न जातियाँ एकीकृत थी, तथा विभिन्न व्यवसायिक जातियों के मध्य व्यवसायिक सेवाओं का विनिमय होता था। इन दोनों क्षेत्रों में प्रत्येक परिवार गाँव के कई परिवारों से सम्बन्ध होता था और उन परिवारों को कृषि के क्षेत्र में तथा सामाजिक-धार्मिक पर्वो और त्योहारों पर अपनी सेवाएं देता था। कृषकों को कृषि कार्य से सम्बन्धित व्यवसायगत सेवाएं इससे सम्बद्ध जातियाँ करती थीं तथा इसके बदले में कृषक से फसलों की कटाई के समय अपना हिस्सा वे (सेवा के बदले में) ले जाते थे। सेवा और उसके लिए मिलने वाला भुगतान दोनों ही सामान्यतया परम्परा से निश्चित होते थे, और कृषक की खेती बारी पर निर्भर करते थे। कृषि से भिन्न अन्य क्षेत्रों में भी कुछ जातियां अपनी व्यवसायिक सेवाएं प्रदान करती थीं, और यह आशा रखती थी कि कृषक उन्हें भी फसल काटने के समय उनका हिस्सा देगा।

वर्तमान में विभिन्न जातियों के व्यवसाय और कार्य पूरी तरह जातिगत नहीं रह गये है। वे अपनी जीविका चलाने के लिए अन्य व्यवसायों को अपना रहे हैं। फिर भी ग्रामीण भारत में कई ऐसे व्यवसाय व धन्धे हैं जो अभी भी विभिन्न जातियों के एकाधिकार में है। कुम्हार, नाई, धोबी मुख्य रूप से अभी भी अपने-अपने परम्परागत व्यवसाय में लगे हैं। साथ ही कृषि कार्य में भी संलग्न है। परम्परा ने प्रत्येक समूह को समुदाय की संरचना में एक निश्चित आर्थिक प्रकार्य दिये हैं जो कि उस समूह की जीविका का प्रमुख स्रोत होते हैं। भारत की अर्थव्यवस्था में कृषि की प्रमुखता होने के कारण गांवों में पाये जाने वाले अन्य व्यवसाय और कौशल उसके साथ सामान्यतया समेकित होते हैं। विभिन्न जातियों की अर्थिक भूमिका के विश्लेषण से हमें गांव की अर्थव्यवस्था का स्वरूप स्पष्ट हो जायेगा और हम यह जान पायेंगे कि विभिन्न जातियों की उसमें क्या स्थिति है।

अध्ययन क्षेत्र की जातियों की आर्थिकी

ब्राह्मण जाति का मुख्य व्यवसाय कृषि है। साथ ही इनमें कुछ परिवारों के लोग नौकरी भी करते हैं। इन दोनों क्षेत्रों में ब्राह्मण के कुछ परिवार, पूजा, संस्कार सम्बन्धी भी कार्य करते हैं। लोग प्रस्तावित विवाह के सम्बन्ध में शुभ मुहूर्त निकलवाते हैं, विवाह सम्पन्न करवाते हैं। बच्चों के जन्म के समय उससे बालक के नक्षत्रों की स्थिति तथा बालक उसके माता-पिता एवं परिवार के अन्य सदस्यों पर उन नक्षत्रों के पड़ने वाले प्रभावों के बारे में पूछा जाता है। यदि पंडित जी के अनुसार कष्ट का संकेत मिलता है तो पंडित जी विशेष पूजा अर्चना करके कष्टों को दूर करवाते हैं। इसी प्रकार मृत्यु संस्कार पर भी ब्राह्मण से सलाह ली जाती है। मृत्यु संस्कार करवाने वाले पंडित जी शादी-व्याह करवाने वाले ब्राह्मणों से अलग होते हैं। अध्ययन हेतु चुने गये एक क्षेत्र नयाभोजपुर में ब्राह्मणों के पास सबसे ज्यादा भूमि अब भी है। प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप में गांव की कृषि सम्बन्धी गतिविधियों में ब्राह्मण का महत्वपूर्ण योगदान है।

राजपूत जाति का इन दोनों क्षेत्रों में प्रायः अभाव है। नयाभोजपुर गांव में भी इनकी संख्या नगण्य है। दूसरे क्षेत्रों से आकर कुछ राजपूत जातियां इस क्षेत्र में आकर बस गयी है। चूंकि नयाभोजपुर गांव यातायात साधनों से अच्छी तरह जुड़ा हुआ है, अतः ये जातियां यहां पर सीमेंट, सरिया, लोहा आदि व्यवसायों से जुड़ी हुई है। इन जातियों में व्यवसायिक गतिशीलता देखने में आ रही है।

कायस्थ दोनों क्षेत्रों में कृषि के साथ-साथ नौकरी-पेशा से जुड़े हुये हैं। इन दोनों क्षेत्रों में इनकी संख्या करीब-करीब समान है। काजीपुर गांव में कायस्थ गांव में कायस्थ लोगों के पास अभी भी सबसे ज्यादा भूमि है। पहले इस गांव में मुसलमानों के पास सबसे ज्यादा भूमि थी।

यादव जाति का मुख्य व्यवसाय कृषि व पशुपालन है। दुग्ध सम्बन्धी व्यवसाय में ये लोग अग्रणी हैं। इन क्षेत्रों से दुग्ध शहरों में भेजे जाते हैं, जहां से पैकेटों में भरकर दुकानों पर दिया जाता है। वर्तमान में ये जाति ट्रक सम्बन्धी व्यवसाय में तेजी से आ रहे हैं। व्यवसायिक गतिशीलता इनमें आसानी से देखी जा रही है। दोनों अध्ययन क्षेत्रों में इनकी संख्या लगभग बराबर है।

कोइरी जाति का मुख्य व्यवसाय कृषि है। ये लोग प्रायः बड़े पैमाने पर सब्जी की खेती करते हैं और नजदीक के बाजारों में ले जाकर बिक्री करते हैं। वर्तमान में खाद, कीटनाशक दवाइयों के बेचने के कार्य में संलग्न हो रहे हैं। काजीपुर क्षेत्र में इनकी संख्या सबसे ज्यादा है।

बनिया जाति के लोग, इन दोनों क्षेत्रों में व्यवसाय व व्यापार सम्बन्धी कार्यो में संलग्न हैं। ये लोग कपड़े व अनाज सम्बन्धी व्यवसाय से संलग्न हैं। साथ ही लकड़ी

सम्बन्धी व्यवसाय में भी अग्रणी हैं। कृषि इनकी गौण व्यवसाय है। इन दोनों क्षेत्रों में बनिया जाति की संख्या लगभग समान है।

हरिजन जाति अपने परम्परागत व्यवसाय के साथ जुड़ने रहने के साथ-साथ कृषि मजदूर के रूप में भी कार्यरत है। वर्तमान में ये लोग चमड़े से जूता बनाकर अन्य क्षेत्रों में बिक्री करते हैं।

सुनार परिवार के अधिकांश लोग अपनी परम्परागत व्यवसाय में लगें हैं। लेकिन एक बात महत्वपूर्ण देखने में यह आ रही है कि व्यवसायिक गतिशीलता के दृष्टिकोण से यह जाति सर्वाधिक प्रभावित है। ये लोग नौकरी के अलावा मेडिकल की दुकाने, कपड़ा की दुकाने, बर्तन की दुकाने लगाने में अग्रणी है। सुनारो के लगभग 10 (दस) परिवारों के पास मेडिकल स्टोर है। काजीपुर गाँव में इनकी संख्या नगण्य है। सुनारी का कार्य इस गाँव में कुछ मुस्लिम परिवार करते है।

मल्लाह व बिन्द परिवारों का मुख्य कार्य कृषि करना व बरसात के दिनों में मछली मारकर बेचना है। चूँकि मछली बेचने का कार्य मौसमी होता है अर्थात मौसम विशेष में ही मछली बेचने का कार्य करते है। अन्य मौसम मे ये कृषि व मजदूरी का कार्य करते है। दोनो क्षेत्रों में इनकी संख्या ज्यादा है काजीपुर गाँव मे इनकी संख्या सर्वाधिक है। वर्तमान में शिक्षा व संचार साधनों के विस्तार से ये लोग शिक्षा प्राप्त करके नौकरी भी कर रहे है।

तुरहा जाति का मुख्य कार्य सब्जी बेचना है। ये लोग दूसरे का खेत ले कर सब्जी खासकर टमाटर, आलू आदि उगाते है और थोक मे अन्य शहरों मे भेजते है। नयाभोजपुर गाँव में टमाटर की खेती बहुतायत मात्रा में होती है। यहाँ से टमाटर नजदीकी राज्य उ0 प्र0 के विभिन्न शहरों-बनारस, गोरखपुर, बस्ती-में भेजे जाते है।

दुसाध जाति के लोग कृषक मजदूर के रूप मे कार्य करते है। ये लोग गाँव मे चौकीदारी का भी कार्य करते है।

गोड़ जाति के लोग लकड़ी काटने व बेचने का कार्य करते है। प्रायः ये जलावन की लकड़ी बेचते है। वर्तमान में क्षेत्रीय मेले के अवसर पर चौखट व दरवाजा बना कर बिक्री करते है। ये लोग दोनो क्षेत्रो में कृषि कार्य में भी संलग्न है। यद्यपि इऩका परम्परागत कार्य दुसरे के अनाजों को भूजना है लेकिन यह कार्य कुछेक परिवार ही कर रहे हैं। लेकिन गाँवों में एक आय के स्रोत के रूप में भी आज भी इसका महत्व है।

धोबी, हरिजन, डोम, नट आदि जातियाँ अपने-अपने परम्परागत पेशों से जुड़ी हुई है। धोबी गाँव के सभी जातियों के कपड़े धोने का कार्य करता है। वर्तमान में ये अपने परम्परागत पेशा को लाभ अर्जन के दृष्टिकोण से लौन्ड्री खोलकर कर रहे हैं।

डोम का मुख्य व्यवसाय सुअर पालना है। यह कार्य ये लोग छोटे पैमाने पर करते हैं। बांस से सूप, पंखा, सीढ़ी आदि बना कर बेचने का भी कार्य करते हैं। नट जाति कृषक मजदूर के रूप में करते हैं।

मुस्लिम समुदाय की संख्या इन दोनों क्षेत्रों पर्याप्त मात्रा में हैं। ये लोग किसी एक पेशा व व्यवसाय से नही जुड़े हुए है। ये लोग कृषि, मजदूरी, राजमिस्त्री, कपड़ा व्यवसाय, चर्म उद्योग व्यवसाय आदि से जुड़े हुए हैं। अपनी सामाजिक, धार्मिक विशिष्टता को बनाये रखकर भी मुस्लिम समुदाय ने जाति के कतिपय लक्षण ग्रहण कर लिये हैं, विशेषकर व्यवसायिक विशेषीकरण के रूप में। इन दोनों क्षेत्रों के मुसलमान लोग एक व्यवसायिक जाति के रूप में अपना जीवन निर्वाह कर रहे हैं। पटाखे बनाना, ताँगा, इक्का या अन्य वाहन चलाना, बाजे बजाना (बैन्ड पार्टी) आदि कार्य कर रहे है। चूँकि इन दोनो क्षेत्रों मे एक सम्मिश्र जन्संख्या पाई जाती है, जिसमें हिन्दू व मुस्लिम दोनों समुदायों के लोग हैं। और दोनों समुदाय के लोग एक दूसरे पर आश्रित हैं। साथ ही कोई भी व्यवसायिक जाति स्वयं में आत्मपूर्ण नही होती क्योंकि उसे अन्य कई व्यवसासियक जातियों की सेवाओं की आवश्यकता होती है जिसका कि कुछ धन्धों व वृत्तियों पर एकाधिकार होता है। अतः इस दृष्टिकोण सें दोनों समुदाय व्यवसाय के दृष्टिकोण से एक दूसरे पर आश्रित हैं। खासकर मुस्लिम समुदाय के लोग हिन्दू व्यवसायिक जातियों पर आश्रित हैं। दोनों समुदायों के हित इस संदर्भ में एक दूसरे से जुड़े हुये हैं।

<u>जजमानी व्यवस्था</u>

कुछ जातियां जजमानी व्यवस्था से जुडी हुई हैं। जैसे धोबी, नाई, कुम्हार, हरिजन, कमकर, बढ़ई, कुहार को उनकी परम्परागत सेवाओं के बदले अन्य जातियां सेवाएं प्रदान करती हैं। इन दोनों क्षेत्रों में ऐसा देखने में आया है। कुम्हार कृषक को मिट्टी के घड़े और बर्तन उसकी रोजमर्रा की आवश्यकता को पूरा करने के लिए देता है। इसी प्रकार नाई कृषक के परिवार के सदस्यों का बाल काटता है। धोबी भी अपने जजमानों का कपड़ा धोता है। इन सबको अपनी सेवाओं के बदले फसल का एक निश्चित हिस्सा मिलता है। सेवा और उसके लिए मिलने वाला भुगतान दोनो ही सामान्यता परम्परा से निश्चित होते हैं और यह कृषक के खेती बारी पर निर्भर करता है। उपरोक्त वर्णित जातियों खासकर नाई, कुम्हार, हरिजन आदि जीवन से जुड़े संस्कारों में महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। संस्कारों के संदर्भ में दी जाने वाली सेवाएं वे परम्परा के आधार पर प्रदान करते हैं। और इन सेवाओं के लिए दिए जाने वाले पारिश्रमिक के विषय में पहले से कोई मोल भाव नहीं होता है। परम्पराओं से ही उनका न्यूनतम मेहनताना बँधा होता है और धार्मिक सेवाएं देते समय विभिन्न अवसरों पर उसका एक अंश दिया जाता है।

संस्कारो के सम्पन्न होने पर लोग अपनी सामाजिक और आर्थिक हैसियत के हिसाब से इन सेवाओं के लिए निश्चित राशि से अधिक भी देते है। इस प्रकार जजमानी व्यवस्था से जुड़ी जातियों का आय का एक महत्वपूर्ण स्रोत उनके जजमान हैं। ये जातियों अपनी परम्परागत व्यवसाय करते हुए इन स्रोतों से भी आय अर्जित करती हैं।

उत्तरदाताओं के सूचनानुसार आज यह व्यवस्था वैसी नही रही है, जैसा कि पचास साल पहले थी। गाँवों में बढ़ती हुई व्यक्तिवाद की भावना, शिक्षा, शहरी सम्पर्क, लाभकारी व्यवसाय अपनाने की प्रवृत्ति, भूमि सुधार आदि के कारण इस व्यवस्था में परिवर्तन लाने हेतु उत्तरदायी है। एक उत्तरदाता महावीर प्रसाद, जो पेशे से कृषक है, का कहना है कि बढ़ती जनसंख्या इस व्यवस्था के टूटने का महत्वपूर्ण कारण है। एक व्यक्ति जो शहर में किसी व्यवसाय व कार्य द्वारा अपना जीवन यापन कर रहा है तो वह अपने बूढ़े पिता व माता की सम्बद्ध परिवारों को दी जाने वाली सेवाओं को देते रहने से मना कर देते हैं, किन्तु उसके गरीब अन्य सम्बन्धी (भाई आदि) उस कार्य को करने के लिए तत्पर रहते है, जिसके कारण इस व्यवस्था से वह परिवार जुड़ा रहता है और जजमानी व्यवस्था कमोवेश विद्यमान हैं।

इस संदर्भ में अनुसंधानकर्ता ने इस जजमानी व्यवस्था के संदर्भ में विचार जानने का प्रयास किया है, जिसका विश्लेषण तालिका के माध्यम से प्रस्तुत किया जा रहा है।

तालिका–3.1

क्या जजमानी व्यवस्था कमजोर हो रही है?

क्रम संख्या	विचार	संख्या	प्रतिशत
1.	हां	191	79.58
2.	नही	38	15.83
3.	तटस्थ	11	4.58
कुल	–	240	99.99

तालिका–3.1 से स्पष्ट है कि जजमानी व्यवस्था के कमजोर होने के पक्ष में 80 प्रतिशत उत्तरदाता है। 16 प्रतिशत उत्तरदाता का कहना है कि जजमानी व्यवस्था कमजोर नहीं हो रही है बल्कि उसका स्वरूप बदल रहा है। केवल 5 प्रतिशत उत्तरदाता इसके विषय में नहीं जानते हैं।

कृषि:– ये दोनो क्षेत्र कृषि प्रधान क्षेत्र है और अध्ययनकर्ता का उदेश्य इन दोनों क्षेत्रों में भूस्वामित्व के आधार पर जाति श्रेणी क्रम का अध्ययन करना और यह पता करना है कि इन दोनो क्षेत्रों में भूस्वामित्व के आधार पर जाति श्रेणीक्रम का स्वरूप क्या है।

नयाभोजपुर गांव में कृषि योग्य भूमि करीब 700 बीधा है। 700 बीधा में सबसे ज्यादा भूमि ब्राह्मण जाति के पास है। ब्राह्मण जाति के बाद मुस्लिम, यादव, कुशवाहा,

बनिया आदि जातियों के पास भूमि है। तालिका के माध्यम से विभिन्न जातियों के बीच गाँव की भूमि का वितरण इस प्रकार दर्शाया जा सकता है।

तालिका–3.2

विभिन्न जातियों के बीच भूमि का विवरण

जाति का नाम	भूमि (बीधा में)	प्रतिशत
ब्राह्मण	350	50.00
यादव	90	12.85
कोइरी	70	10.00
बनिया	70	10.00
अन्य	20	2.85
मुस्लिम	100	14.28
कुल	700	99.98

तालिका-3.2 से स्पष्ट है कि कुल भूमि का 50 प्रतिशत ब्राह्मण जाति के पास है। इसके बाद मुस्लिम समुदाय के पास है। मुस्लिम के बाद यादव, कोइरी, बनिया और अन्य हिन्दू जाति के पास है।

तालिका–3.3

ब्राह्मण और अब्राह्मण के बीच भूमि का वितरण

जाति का नाम	भूमि	प्रतिशत
ब्राह्मण	350	58.33
यादव	90	15.0
कोइरी	70	11.66
बनिया	70	11.66
अन्य	20	3.33
कुल	600	99.98

तालिका-3.3 से स्पष्ट है कि कुल भूमि का 58.33 प्रतिशत भूमि ब्राह्मण जाति के पास है। तथा अब्राह्मण जातियों के पास 41.66 प्रतिशत है। ब्राह्मण के बाद यादव जाति के पास भूमि अधिक है।

इसी प्रकार अध्ययन हेतु लिये गये दूसरे क्षेत्र काजीपुर में कृषि योग्य भूमि करीब 258 बीघा है। इस 258 बीघा में सबसे ज्यादा कायस्थ समुदाय के पास है। कायस्थ के बाद कोइरी, मुस्लिम, यादव, ब्राह्मण व बनिया के पास है। इसे तालिका द्वारा इस प्रकार दर्शाया जा सकता है।

तालिका–3.4

काजीपुर गांव में विभिन्न जातियों के बीच भूमि का वितरण

जाति का नाम	भूमि (बीघा)	प्रतिशत
कायस्थ	85	32.94
कोइरी	48	18.60
यादव	39	15.11
ब्राह्मण	12	4.65
बनिया	13	5.03
मुस्लिम	45	17.44
अन्य	16	6.20
कुल	258	99.98

तालिका-3.4 से स्पष्ट है कि इस गांव में कायस्थ जाति के पास सम्पूर्ण भूमि का 33 प्रतिशत भूमि है। जबकि कोइरी के पास 18.60 प्रतिशत और मुस्लिम के पास करीब 17.44 प्रतिशत है।

तालिका–3.5

हिन्दुओं में भू–स्वामित्व के आधार पर जातीय श्रेणीकरण

जाति	भूमि	प्रतिशत
कायस्थ	85	39.90
कोइरी	48	22.53
यादव	39	18.30
बनिया	13	6.10
ब्राह्मण	12	5.63
अन्य	16	7.52
कुल	213	99.98

तालिका-3.5 से स्पष्ट है कि कायस्थ जाति के पास कुल भूमि का करीब 40 प्रतिशत है। जबकि शेष 60 प्रतिशत के करीब भूमि अन्य हिन्दू जातियों के पास है।

अगर दोनों क्षेत्रों का तुलनात्मक रूप से अध्ययन करें तो यह स्पष्ट निर्दिष्ट होता है कि जहां नयाभोजपुर गांव में हिन्दू जाति के पास कुल भूमि का 350 बीघा ब्राह्मण जाति के पास है तथा 250 बीघा अन्य हिन्दू जाति के पास है। लेकिन काजीपुर गांव मे अन्य हिन्दू जातियों के पास करीब 116 बीघा जमीन है। जबकि अपने को उच्च जाति कहलाने वाले ब्राह्मण और कायस्थ के पास 97 बीघा जमीन है।

तालिका–3.6

दोनों गॉवों में ब्राह्मण और अब्राह्मण के बीच भूमि का वितरण

(नयाभोजपुर) (काजीपुर)

जाति	भूमि	प्रतिशत	जाति	भूमि	प्रतिशत
ब्राह्मण	350	58.33	कायस्थब्राह्मण	97	45.53
अन्य	250	41.66	अन्य	116	54.46
कुल	600	99.99	कुल	213	99.99

तालिका-3.6 से स्पष्ट है कि नयाभोजपुर गॉव में ब्राह्मण जाति के पास भूमि अधिक है तथा अन्य हिन्दू जाति के पास उससे कम है। जबकि काजीपुर गांव के अन्य हिन्दू जाति के पास ही भूमि का प्रतिशत अधिक है।

भूस्वामित्व के आधार पर इन दोनों क्षेत्रों में आर्थिक श्रेणी क्रम के संदर्भ में स्पष्ट प्रतीत होता है कि नयाभोजपुर गॉव में ब्राह्मण, मुस्लिम, यादव, कोइरी, बनिया जाति के पास अधिक भूमि है। जबकि काजीपुर गांव में कायस्थ, कोइरी, मुस्लिम, यादव, बनिया के पास भूमि अधिक है। दोनों क्षेत्रों की आर्थिक श्रेणीक्रम (भूमि स्वामित्व के आधार पर) का तालिका के माध्यम से स्पष्ट किया जा सकता है।

तालिका-3.7

विभिन्न जातियों में आर्थिक श्रेणीक्रम (भूस्वामित्व के आधार पर)

नयाभोजपुर गांव	काजीपुर गांव
ब्राह्मण	कायस्थ
मुस्लिम	कोइरी
यादव	मुस्लिम
कोइरी	यादव
बनिया	बनिया

तालिका-3.7 से स्पष्ट है कि नयाभोजपुर गांव में जहां ब्राह्मण जाति भूस्वामित्व के आधार पर सबसे आगे है, वही काजीपुर गांव में कायस्थ जाति भूस्वामित्व के आधार पर अग्रणी है। जहां नयाभोजपुर गांव मे भूस्वामित्व प्रारंम्भ से ही ब्राह्मण जाति के पास रही है, वहीं काजीपुर गांव में कायस्थ जाति के पास भूस्वामित्व मुस्लिम से आया है।

व्यवसाय:- प्राय: प्रत्येक जातियों का अपना एक परम्परागत प्रमुख शिल्प या व्यवसाय होता है। इसके अतिरिक्त वे अपनी जीविका चलाने के लिए अन्य व्यवसायों को अपनाने के लिए स्वतंत्र होते हैं। ब्राह्मण गॉवो में पुजारी होने के साथ-साथ अपनी भूमि पर कृषि भी कर सकता है। कुम्हार, नाई, हरिजन, पासवान, बिन्द, मल्लाह आदि जातियों यद्यपि अपने-अपने परम्परागत व्यवसाय में लगे रहते हैं, तथापि कृषि कार्य के व्यस्त समय में

इन जातियों के पुरूषों व महिलाओं को श्रमिक के रूप में काम करने की अपेक्षा की जाती है। इतना होते हुए भी एक जाति को किसी न किसी व्यवसाय के साथ जोड़ा जाता है और उस व्यवसाय के साथ चली आ रही सामाजिक परम्पराएं उससे जुड़ी रहती हैं। वर्तमान में विभिन्न जातियों के व्यवसाय और कार्य पूरी तरह जातिगत ही नहीं है। दोनों क्षेत्र चूंकि कृषि प्रधान क्षेत्र है, अतः व्यवसायिक गतिशीलता इन दोनों क्षेत्रों में पायी गयी है। यह सर्वविदित तथ्य है कि कृषि पर आधारित स्थिर समाजों में व्यवसायिक गतिशीलता अधिक पायी जाती है। व्यवसायिक गतिशीलता के अन्तर्गत एक व्यवसाय को छोड़कर दूसरे व्यवसाय को अपनाया जाता है। एक व्यवसाय को छोड़ने का अर्थ अपनी परम्परागत व्यवसाय का छोड़ने से है। वर्तमान मे प्रायः सभी जातियो में व्यवसायिक गतिशीलता देखने को मिल रही है। इन दोनों क्षेत्रों में यादव, कुशवाहा, मुस्लिम जातियों में व्यवसायिक गतिशीलता देखने को मिल रही है। यादव व कुशवाहा जाति के लोग ट्रक व्यवसाय, भट्ठा व्यवसाय, अनाज व्यवसाय मे तेजी से आ रहे है। मुस्लिम समुदाय के लोग भी सभी तरह के व्यवसायों को कर रहे हैं।

व्यवसायिक गतिशीलता व इसके परिणमस्वरूप होने वाली आर्थिक परिवर्तन के मुख्य कारण बढ़ती हुई जनसंख्या, शिक्षा का प्रसार, संचार के साधनों का विकास और औद्योगीकरण व नगरीकरण आदि है। बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण अब यह संभव नहीं है कि लोग अपनी परम्परागत पेशों से जुड़े रहें। इससे जुड़े होने का यह परिणाम होगा कि सभी की आवश्यकताएं पूरी नही हो पाएगी। बढ़ती हुई जनसंख्या ने व्यवसायिक गतिशीलता को बढ़ाने मे योगदान दिया है। जनसंख्या के बढ़ने मे, स्वास्थय सुविधाओं के प्रति जागरूकता ने प्रेरक का काम किया है। पहले इन दोनो क्षेत्रो में स्वास्थ्य केन्द्रो का आभाव था। लेकिन वर्तमान मे दोनो क्षेत्रो में स्वास्थ्य केन्द्र खुल जाने से स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधाएं आसानी से प्राप्त हो जा रही है।

शिक्षा ने भी व्यवसायिक गतिशीलता को बढ़ाने में योगदान दिया है। प्रत्येक जाति या समुदाय अपनी सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक स्तर वृद्धि या उन्नति करना चाहता है। लेकिन वह उस समय तक ऐसा नहीं कर सकता, जब तक कि उसके सदस्यों में अधिक से अधिक शिक्षा की सुविधाएं उपलब्ध न हो। यह स्पष्ट है कि पिछले 20-25 वर्षो में भारत में शिक्षा के प्रसार ने व्यवसायिक गतिशीलता की अभिवृद्धि में योग दिया है। आजकल यह प्रवृत्ति देखने में आ रहा है कि लोग अपने पैतृक व्यवसायों को अपनाने में हिचकिचाते हैं, क्योंकि उनमें न तो पर्याप्त आर्थिक लाभ होता है, न कोई नवीनता है और ना ही उनको समाज में कोई विशेष उच्च सम्मान प्राप्त है। प्रत्येक व्यक्ति कोई ऐसा व्यवसाय अपनाना चाहता है जिससे आधिक से अधिक लाभ अर्जित हो सके, अधिक से अधिक सुख सुविधाएं और सामाजिक सम्मान प्राप्त हो सके। इसके लिए

शिक्षा आवश्यक प्रतीत हो रहा है। क्योंकि सभी प्रकार की सम्मानीय नौकरियों के लिए शिक्षा आवश्यक हो गयी है। लोग अपने जीवन के हर प्रकार की सुविधाओं को त्याग करते हुए अपने बच्चों को पढ़ा रहे हैं, ताकि परम्परागत पैतृक व्यवसायों को छोड़कर सम्माननीय व्यवसाय अपना सकें तथा आधुनिक जीवन की समृद्धशाली अवस्थाओं का लाभ उठा सके। कई लोग गांवों व पिछड़े हुए क्षेत्रों से निकलकर शहरों व कस्बों में आ बसे हैं जिससे कि वे अपने बच्चों को उच्च शिक्षा दिलवाकर उनका भविष्य बना सके। उच्च शिक्षा संस्थाओं में पश्चिमी शिक्षा, आधुनिकता का वातावरण प्रजातंत्रीय भावना तथा वैयक्तिकता का बहुत अधिक प्रसार होने के कारण अब सामाजिक व व्यवसायिक गतिशीलता की प्रवृत्ति बढ़ने लगी है। शिक्षा के प्रकार के कारण व इसके प्रति जागरूकता के कारण लोग विभिन्न प्रकार के नौकरिओं मे जाने के कारण वे अपनी परम्परागत पेशों को पूर्णतया छोड़ देते हैं। इन दोनो क्षेत्रों में शिक्षा का विकास प्रगति पर है तथा स्वतंत्रता के बाद इन क्षेत्रों में शिक्षा में काफी सुधार हुआ है। नयाभोजपुर गाँव में विश्वविद्यालय स्तर के मदरसा की स्थापना 1940 ई0 में की गयी जिसमे दूर-दूर से छात्र अरबी, फारसी पढ़ने के लिए आते हैं। 1981 में यहां ए0 पी0 शर्मा उच्च विद्यालय की स्थापना की गई जिसमे हाई स्कूल तक पढ़ाई होती है। सरकारी मिडिल स्कूल की संख्या 2 है। इसके अलावा इन दोनों क्षेत्रों में 6 नर्सरी (चार नयाभोजपुर गाँव और दो काजीपुर गांव में) है जोकि प्राइवेट स्तर पर ठीक ढंग से चलाया जा रहा है। इन शिक्षा केन्द्रो ने दोनों क्षेत्रों में शिक्षा के प्रति जागरूकता ने व्यवसायिक गतिशीलता को बढ़ाया है। हाईस्कूल तक शिक्षा पा लेने के बाद लोग छोटे-छोटे उद्योग धन्धों के लिए बैंक से ऋण ले रहे है तथा उद्योगो व जिविकोपार्जन हेतु अन्य उद्यम अपना रहे है। ये सभी गतिविधियां व्यवसायिक गतिशीलता को ही इंगित कर रही है। इन दोनों क्षेत्रों में जो जातियां व्यवसायिक गतिशीलता में अग्रणी हैं उसे तालिका के माध्यम से दर्शाया गया है।

तालिका–3.8

व्यावसायिक गतिशीलता में अग्रणी जाति श्रेणीक्रम

नयाभोजपुर	काजीपुर
बनिया	यादव
यादव	मुस्लिम
सुनार	कोइरी
कोइरी	बनिया
मुस्लिम	हरिजन

तालिका-3.8 से स्पष्ट है कि नयाभोजपुर गॉंव में व्यवसायिक गतिशीलता में बनिया, यादव अग्रणी हैं जबकि काजीपुर गॉंव में यादव, मुस्लिम, कोइरी व्यवसायिक गतिशीलता में अग्रणी हैं।

व्यवसायिक गतिशीलता को बढ़ाने में संचार के साधनों का विकास, औद्योगीकरण व नगरीकरण का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है। संचार साधनों के विकास के कारण अब लोग आसानी से व्यापारिक गतिविधियों का संचालन कर ले रहे हैं। संचार साधनों के विकास से वैयक्तिक सम्पर्कों में वृद्धि हुई है, जिससे जातियों के पृथक करने वाले विचारों पर प्रभाव पड़ा है। विभिन्न धर्मो, जातियों एवं प्रदेशों के लोगों का एक दूसरे के सम्पर्क में आने से विचार विनिमय करने का अवसर प्राप्त हुआ है। इसमें उनमें समानता की भावना का बीजारोपण हुआ और संकुचित जातीय भावना कम हुई है।

औद्योगीकरण की बढ़ती प्रवृत्ति के कारण ग्रामीण व वंशानुगत व्यवसायों का पतन हो रहा है तथा इसके स्थान पर नवीन पेशे व व्यवसायों का जन्म हो रहा है। जिसमें सभी जातीय समूह के लोग मिल-जुलकर काम करते हैं। औद्योगीकरण के कारण कृषि पर आधारित अर्थव्यवस्था, औद्योगिक सामाजिक-मौलिक व्यवस्था में परिणित होने लग है। इन सब परिवर्तनों के कारण जातिगत योगदान की भावना कम हुई है क्योंकि सभी जातियों में मुद्रा व्यवस्था का महत्व बढ़ गया है। इस औद्योगीकरण ने नगरीकरण को जन्म दिया। नगरीकरण के फलस्वरूप लोग रोजगार की तलाश में शहरों में आ रहे हैं। इससे व्यवसायिक गतिशीलता में वृद्धि हो रही है।

इन दोनों क्षेत्रों में ग्रामीण खेतिहर मजदूरों के बीच रोजगार को लेकर गंभीर समस्या बनी रहती है। अत: अपनी जीविकोपार्जन के लिए वे सालों भर एक जगह से दूसरी जगह भटकते रहते हैं। उन्हें समय एवं मौसम के हिसाब से रोजगार के लिए स्थान परिवर्तित करते रहना पड़ता है। इसका प्रमुख कारण इस क्षेत्र में व्याप्त बेरोजगारी, औद्योगीकरण का अभाव आदि रहा है।

इस प्रकार उपरोक्त विवरणों के आधार पर कहा जा सकता है कि इन क्षेत्रों में व्यवसायिक गतिशीलता बढ़ने से विभिन्न जातियों के लोगों को समान आर्थिक अवसर मिंलने लगे हैं। परिणामस्वरूप राजनीतिक दृष्टिकोण में भी परिवर्तन आया है। कुल मिलाकर व्यवसायिक गतिशीलता के कारण इस क्षेत्र के निवासियों के जीवन मूल्यों में बहुत बड़ा परिवर्तन आया है।

अध्याय-4

राजनैतिक परिवर्तन के प्रतिमान

अध्याय—4

राजनीतिक परिवर्तन के प्रतिमान

प्रस्तुत अध्याय में अध्ययनकर्ता ने दोनों अध्ययन क्षेत्रों में आर्थिक संरचना में हुए परिवर्तनों के कारण राजनीतिक संरचना में हुये परिवर्तनों का अध्ययन किया है।

औद्योगीकरण, नगरीकरण, शिक्षा में प्रगति व लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया के फलस्वरूप राजनीतिक संरचना में परिवर्तन आया है। राजनीतिक शक्ति एक विशेष वर्ग के पास आया है। प्राचीन भारत में गांवों में शक्ति एवं प्रभुत्व ग्राम पंचायत व जात पंचायत पर आधारित था। आर्थिक सम्बन्ध शक्ति सम्बन्धों को भी तय करते थे। जो लोग आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न थे, राजनीतिक शक्ति भी उन्हीं के हाथों में थी। ब्रिटिश काल में तथा आजादी प्राप्त करने के बाद गांवों की अर्थव्यवस्था में परिवर्तन आया। उसके साथ-साथ शक्ति संरचना भी परिवर्तित हुई। गांवों में नवीन परिवर्तन लाने एवं परम्परागत शक्ति संरचना को बदलने के लिए अनेक कारक भूमि सुधार कानून, पंचायती राज की स्थापना, सामुदायिक विकास योजनाएं वयस्क मताधिकार उत्तरदायी रहे हैं। इन सभी कारकों में से भारत के विभिन्न भागों में अलग-अलग कारक क्रियाशील रहे हैं। कहीं जमींदारी के उन्मूलन ने शक्ति जमींदारों से छीन ली, तो कहीं यह अब भी गांव की प्रभुत्व जाति के पास है। कहीं पर निम्न जातियां संख्या में अधिक होने से चुनावों में पंचायतों के पद पर विजय प्राप्त कर औपचारिक शक्ति ग्रहण कर बैठी हैं तो कहीं अधिक निर्भरता के कारण संख्या में अधिक होने के कारण भी ऐसे लोग शक्ति ग्रहण कर जाते हैं जो संख्या में कम हैं, किन्तु शिक्षित, समृद्ध और लोकप्रिय हैं। संविधान द्वारा निम्न जातियों के लिए स्थान सुरक्षित किये जाने का लाभ भी अस्पृश्य जातियों ने उठाया है और शक्ति ग्रहण की है। जो ग्रामवासी शिक्षा प्राप्त करने अथवा व्यवसाय के लिए शहरों में चले गये, वे विभिन्न राजनीतिक दलों से सम्बद्ध हो गये। ऐसे व्यक्ति गांवों में आकर अपनी राजनीतिक निष्ठा के अनुरूप ही गांव की राजनीति में परिवर्तन लाने का प्रयत्न करने लगे जिसका प्रभाव गांवों की शक्ति व्यवस्था पर भी पड़ा।

विभिन्न अध्ययनों से यह स्पष्ट है कि गांवों में राजनीतिक शक्ति अब भी बहुत कुछ आर्थिक शक्ति पर ही निर्भर है। जिस व्यक्ति, जाति व वर्ग के पास जितनी आर्थिक शक्ति है, उसी अनुपात में उसके पास राजनीतिक शक्ति भी है। **बी० एस० कोहेन(1962)** ने उ० प्र० के माधोपुर गांव का अध्ययन किया। माधोपुर में 23 जातियां थीं। आजादी के पूर्व तक ठाकुरों के पास गांव की सारी भूमि थी। निम्न जातियां उनकी भूमि को जोतकर कृषि करती थीं। गांव में ठाकुर ही आर्थिक व राजनैतिक दृष्टि से शक्तिशाली थे। जमींदारी उन्मूलन अधिनियम के कारण ठाकुर की कुछ भूमि निम्न

जातियों के पास आ गयी थी। जमींदारी प्रथा उन्मूलन तथा 1952 में देश में ग्राम पंचायतों के चुनावों के कारण निम्न जातियों में राजनतिक जगृति आयी।

यातायात व संचार के सधनों के विकास, शिक्षा के प्रसार, गतिशीलता में वृद्धि तथा शहरी व्यवसाय आदि के कारण भी निम्न जातियों की प्रतिष्ठा में वृद्धि हुयी। निम्न जातियों के व्यक्ति शहरों में जाकर शिक्षा, नये व्यवसाय व नौकरी करने लगे। इससे उनकी प्रतिष्ठा बढ़ी। पंचायत के चुनावों में नोनिया तथा चमारों ने ठाकुरों की शक्ति को ललकारा और संख्या में अधिक होने के कारण पंचायत के सभी पदों पर अधिकार कर लिया। अब निम्न जाति के व्यक्ति अपने विवाद निपटाने के लिए ठाकुरों के पास नहीं जाते। ठाकुरों का अन्य जाति पंचायतों पर प्रभाव व नियंत्रण अब शिथिल पड़ गया है। पंचायत में आने पर भी चमार व नोनिये लोग सफलतापूर्वक कार्य नहीं कर सके, और विकास के कार्य ठप्प कर दिये गये। क्योंकि अधिकांश भूमि पर अब भी ठाकुरों का स्वामित्व बना हुआ था। आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न होने तथा प्रशासकीय अधिकारियों के सम्पर्क के कारण ठाकुर कोई न कोई रोड़ा अवश्य पैदा कर देते थे। इस प्रकार वे अपनी परम्परागत शक्ति को बनाये रखने के लिए संघर्षरत थे। कोहन का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि "गांवों में शक्ति संरचना आर्थिक व संख्यात्मक शक्ति के बीच झूलती दिखायी देती है।"

एन0 के0 शुक्ला(1970) ने बिहार के भागलपुर के पास स्थित भारकों गांव का अध्ययन किया। इस गांव में यादव प्रभुजाति थी, जिसके हाथ में राजनैतिक शक्ति केन्द्रित थी। यादव ही गांव में संख्या में सर्वाधिक थे। वे अधिकांश भूमि के स्वामी थे, अत: उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा भी ऊँची थी। किन्तु वर्तमान में ब्राह्मण तथा निम्न जाति सुरही ने अपनी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ बना ली है और तीनों ही जातियों में शक्ति प्राप्त करने के लिए प्रतिस्पर्द्धा पायी जाती है। परिणामस्वरूप गाँव में अनेक गुट बन गये हैं। नयी पंचायत व्यवस्था के कारण जाति पंचायतों की शक्ति क्षीण हुई है। गांव में संवैधानिक पंचायत ने परम्परागत शक्ति संरचना को बदल दिया है।

गाँवों में शक्ति संरचना के संदर्भ में एक महत्वपूर्ण अध्ययन **के0 एल0 शर्मा(1974)** ने किया है। इन्होंने राजस्थान के छ: गाँवों का अध्ययन किया। इन गाँवों में परम्परात्मक शक्ति संरचना के तीन स्रोत थे(1) जमींदार, (2) गाँव पंचायत और (3) जाति पंचायत। गाँव में जागीरदार, जमींदार और उनके प्रतिनिधियों के हाथ में सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक शक्ति थी। इन गाँवों में जाति श्रेष्ठता एवं शिक्षा के कारण ब्राह्मणों का भी प्रभाव था। आर्थिक समृद्धि के कारण बनिया लोग भी प्रभावशाली थे। जाति पंचायतें अपने जाति सदस्यों के व्यवहारों पर नियन्त्रण रखती थीं। गाँव में एक

गाँव पंचयत होती थी। जिसमें सभी प्रमुख जातियों के वयोवद्ध व्यक्ति एवं जागीरदार का प्रतिनिधित्व होता था। इस पंचायत में भी जमींदार अथवा उसका प्रतिनिधि ही अधिक प्रभावशाली था। गाँव पंचायत, गाँव से सम्बन्धित सभी महत्वपूर्ण विषयों पर निर्णय लेती थी। किन्तु नवीन व्यवस्था ने गाँव में कई नये परिवर्तन कर दिये हैं। अब जागीरदार एवं जमींदारों के स्थान पर मध्यम आय समूह के व्यक्ति चुनी हुई पंचायतों में शक्ति धारण किये हुए हैं। इनमें से अधिकांशतः उच्च जातियों के थे। निम्न जातियों के व्यक्ति कृषि मजदूर और अछूत जातियों के लोग भी अब ग्रामीण संरचना में भागीदार हो रहे थे।

आनन्द चक्रवर्ती ने राजस्थान के जयपुर जिले के देवीसार गाँव में सत्ता के बदलते प्रतिमान का अध्ययन किया। गाँव में परम्परात्मक राजनैतिक शक्ति जागीरदारों के पास थी। भौमिया राजपूत गाँव के मुखिया एवं प्रशासक थे। उन्हें राजनैतिक शक्ति वंश परम्परा में मिली हुई थी। वे ही गाँव के बारे में निर्णय लेते और लगान वसूल करते और उसे शिवगढ़ में जमा करते। जमींदारी प्रथा के उनमूलन तथा पंचायती राज की स्थापना के बाद गाँव की शक्ति संरचना में परिवर्तन आया है। **डॉ0 चौहान** ने भी राजस्थान के राणावतों की सादड़ी गाँव में परम्परात्मक शक्ति संरचना में में परिवर्तन का उल्लेख किया है। वहाँ परम्परत्मक शक्ति संरचना में जागीरदार केन्द्रीय स्थिति में थे। जागीरदारी उन्मूलन पंचायती राज व नयी शिक्षा आदि ने गाँव में नयी शक्ति संरचना को जन्म दिया है।जाति पंचायतों की शक्ति घटी है और शक्ति का प्रजातन्त्रीकरण हुआ है।

ओ0 पी0 शर्मा(1971) ने राजस्थान के गाँवों अध्ययन के आधार पर बताया है कि नयी पंचायत व्यवस्था ने गाँव के नेताओं को अधिक शक्ति प्रदान की है। राज्य स्तर के नेता अपने चुनावों में इसका सहारा लेते हैं। अतः वे ग्रामीण नेताओं को ग्राम एवं पंचायत समिति स्तर पर अधिक प्रतिष्ठा देते है। राजनैतिक दल की अपनी दलीय कार्यवाही इन नेताओं के सहारे ही चलने लगे हैं। ग्राम एवं खण्ड स्तर के नेताओं ने अपना महत्व समझा है। राज्य स्तर व ग्राम स्तर के नेताओं में एक प्रकार से राजनैतिक आदान-प्रदान हुआ है।

ए0 सी0 मेयर(1961–81) ने ग्रामीण शक्ति व्यवस्था को पंचायती राज व्यवस्था कें तीन स्तरों से प्रेरित माना है। तीनों स्तर- ग्राम पंचायत, पंचायत समितियां व परिषदें-पर गाँव के प्रतिनिधि होते हैं। तीनों स्तर पर शक्ति प्रतिमान राजनीतिज्ञों एवं जाति समूहों द्वारा प्रभावित हुआ है। गाँव में भूस्वामित्व एवं प्रभुत्वशाली जाति की सदस्यता व्यक्ति की शक्ति संरचना में हिस्सेदारी तय करती है।

पी0 सी0 जोशी (1975) का कहना है कि भूमि सुधारों के परिणामस्वरूप नये हित समूहों का उदय हुआ है। प्रथम एवं द्वितीय पंचवर्षीय योजनाओं में भूमि सुधार के नियमों से प्रभावित होकर गाँवों में चार हित समूह-बड़े भूस्वामियों, समृद्ध किसानों, छोटे काश्तकारों तथा कृषि मजदूर के समूह-बने हैं। बड़े भूस्वामियों के पास गाँव की अधिकांश भूमि है। दूसरा हित समूह बड़े किसानों का है, जिन्होंने भूमि सुधारों का सर्वाधिक लाभ उठाया। वे गाँव की शक्ति व्यवस्था में भूस्वामियों के बाद दूसरे नम्बर पर है।तीसरा हित समूह छोटे-छोटे जोतकारों का है, जो संख्या में अधिक हैं। इनकी स्थिति में केवल यही परिवर्तन हुआ है कि वे अब भूस्वामियों के स्थान पार राज्य के प्रति उत्तरदायी हो गये है। इन्हें भूमि को बेचने व हस्तांतरित करने का अधिकार नहीं है सहकारी ऋण की सीधा सुविधा के अभाव में ये अब भी जागीरदारी पर ही निर्भर हैं। चौथा हित समूह कृषि मजदूरों का है जिन्हें खेती पर काम करने के बदले फसल में से कुछ हिस्सा मिल जाता है। जिन स्थानों पर बड़े-बड़े भूस्वामियों ने स्वयं खेती करना प्रारम्भ कर दिया है वहाँ इन्हें भूमि से बेदखल कर दिया गया है। उनकी मजबूरी का लाभ उठाकर अपनी मनमानी शर्तें लागू कर उन्हें पुनः काम भी दे दिया गया है 'श्री निवास' का मत है कि ग्रामीण शक्ति संरचना को समझने के लिए प्रभुत्वशाली जाति की अवधारण अब भी महत्वपूर्ण है जो जाति संख्या में अधिक होती है, जिसके पास आर्थिक और राजनैतिक शक्ति है, सांस्कारिक प्रतिष्ठा है, पश्चिमी शिक्षा प्राप्त है और नये व्यवसायों में लगी हुई है।उसका गाँव में निर्णायक प्रभुत्व पाया जाता है श्रीनिवास परम्परात्मक नेताओं को वोट बैंक की संज्ञा देते हैं जिनका प्रयोग चुनाव में शहरी अभिजात वर्ग द्वारा किया जाता है। **टी0 के0 ओमेन(1970)** का मत है कि वर्तमान में शक्तिधारण करने वाले समूह की तीन प्रमुख विशेषतायें हैं (1)परम्परा से लगाव (2)नये संगठनों में पद ग्रहण करना (3)व्यक्तित्व सम्बन्धी गुण।

आन्द्रे बेतेई(1965) ने तन्जौर जिले के <u>श्रीपुरम गाँव</u> का अध्ययन कर बताया कि श्रीपुरम में परम्परात्मक शक्ति संरचना भूस्वामियों एवं उच्च अनुष्ठानिक प्रस्थिति पर निर्भर थी। वहाँ ब्रह्मण मिरासदारों के हाथ में शक्ति केद्रित थी। गाँव से सम्बन्धित सभी महत्वपूर्ण निर्णय वे ही लेते थे। गाँव की अधिकांश भूमि के वे ही स्वामी थे। उनकी सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और अनुष्ठानिक प्रतिष्ठा सर्वोच्च थी। किन्तु वर्तमान में परिवर्तन की नयी शक्तियों ने गाँव की परम्परात्मक शक्ति संरचना को बदल दिया है। अब ब्राह्मण जातियां गाँव की सामूहिक क्रियाओं के संगठन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं।

उन्होंने ब्राह्मणों के हाथों से पंचायत का नियंत्रण छीन लिया है अब जाति ही राजनैतिक संगठन का नियंत्रण करने वाला एक मात्र कारक नहीं है, वरन राजनैतिक दल की सदस्यता, राजकीय अधिकारियों से सम्पर्क आश्रयदाता एवं संरक्षकों के सम्बन्ध आदि भी महत्वपूर्ण हैं। परम्परात्मक शक्ति संरचना में प्रदत्त कारकों का अधिक महत्व था, किन्तु वर्तमान में अर्जित और व्यक्तिगत गुणों का महत्व बढ़ा है। राजनैतिक दल की सदस्यता व्यक्ति को गाँव, जाति एवं वर्ग की सीमा से परे शक्ति बन्धनों में बाँध देती है। नयी राजनैतिक व्यवस्था ने एक तरफ गाँव को विस्तृत क्षेत्र में बांधा है, तो दूसरी ओर गाँव में ही जाति, वर्ग पंचायत और राजनैतिक दल को परस्पर सम्बन्धित कर दिया है। प्रजातंत्रीय व्यवस्था ने संख्यात्मक शक्ति का महत्व बढ़ा दिया है केवल संख्यात्वक शक्ति ही सब कुछ नहीं है इसके साथ साथ संगठन, सामाजिक और आर्थिक प्रतिष्ठा भी आवश्यक है।

योगेन्द्र सिंह(1977) ने परम्परात्मक भारतीय गाँवों में शक्ति संरचना के प्रमुख तीन आधार बताये है- जमींदारी प्रथा, गाँव पंचायत एवं जाति पंचायत। एक तरफ जमींदारी प्रथा समुदाय के लोगों के भौतिक व आर्थिक हितों एवं आकांक्षाओं की प्रतिनिधि थी तो दूसरी ओर गाँव पंचायत तथा जाति पंचायतें ग्रामीण राजनीति व्यवस्था की सामाजिक विशेषताओं की प्रतीक थीं।

ग्रामवासियों का मुख्य व्यवसाय कृषि था। अतः भूस्वामित्व के अधिकार उनके सामाजिक सम्बन्ध में प्रभुता और अधीनता की स्थिति को निश्चित करते थे। भूस्वामित्व के अधिकार ही समुदायों के लोगों की आर्थिक अपेक्षाओं पर नियन्त्रण रखते थे। जमींदारी व्यवस्था गाँव की शक्ति व्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती थी। धीरे-धीरे जमींदारी व्यवस्था ही गाँवों में शक्ति संस्था के रूप में विकसित हो गई और यही नेताओं का निर्धारण भी करने लगी। इस प्रथा ने गाँव पंचायत व जाति पंचायतों की भूमिकाओं को भी प्रभावित किया।

जमींदारी प्रथा के बाद ग्रामीण लोगों के व्यवहार संस्कार, परम्परात्मक अपेक्षाओं एवं सामाजिक जीवन को प्रभावित करने वाला दूसरा महत्वपूर्ण संगठन जाति संगठन था। जाति संगठन ने जमींदारी प्रथा के साथ-साथ अपनी शक्ति संरचना का विकास किया। गाँवों में शक्ति संरचना का तीसरा प्रमुख आधार ग्राम पंचायतें थीं। वर्तमान पंचायती राज्य की स्थापना से पूर्व गाँवों में सभी जातियों के वयोवृद्ध लोगों द्वारा निर्मित एक परिषद अथवा ग्राम पंचायत होती थी। यह पंचायत जमींदारों की सामूहिक संस्था की शक्ति पर नियन्त्रण रखती थी। इस प्रकार से जमीदारी प्रथा के उन्मूलन से पूर्व गाँव में शक्ति व्यवस्था को निर्धारित करने मे जमींदारी व्यवस्था गाँव पंचायत व जाति पंचायत की संस्थाऐं महत्वपूर्ण भूमिका निभाती थी, कोई भी आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक,

सांस्कृतिक और सांस्कारिक विवाद इन तीनों संस्थाओं द्वारा ही निपटाये जाते थे। इसका यह अर्थ नहीं है कि इन तीनों के अतिरिक्त गाँवों में शक्ति के अन्य स्रोत नहीं थे। पुरोहित, प्रथाएँ, परम्पराएँ एवं जनरीतियाँ भी गाँवों में शक्ति के स्रोत थे। इन्हें गाँव के लोग अचेतन रूप से स्वीकार करते थे। और इनका उल्लंघन करने पर व्यक्ति के सम्मुख अनेक कठिनाइयाँ उत्पन्न हो जाती थीं। ग्रामीण शक्ति के तीनों स्रोत, जमींदारी प्रथा, गाँव पंचायत एंव जाति पंचायत अपने आप में स्वतन्त्र इकाई नहीं थी वरन् परस्पर एक दूसरे पर निर्भर भी थीं। इनसे भी ऊपर पुलिस एवं राज्य की शक्ति थी। उन्हीं पर ये तीनों संस्थाएँ आश्रित भी थी और उनसे अपनी शक्ति भी प्राप्त करती थीं ।

जमींदारी प्रथा तथा गाँवों की शक्ति संरचना के बीच सम्बन्ध सम्पत्ति में तथा भूमि में अधिकारों से घनिष्ट रूप से सम्बद्ध थे। जमींदारी प्रथा से पूर्व गाँवों में भूस्वामित्व का क्या तरीका प्रचलित था इस सदर्भ में हेनरी मेन की मान्यता है कि प्राचीन समय में पितृसत्तात्मक परिवार प्रचलित थे। परिवार का मुखिया अपने सदस्यों के साथ मिलकर कृषि कार्य करता था और भूमि पर सामूहिक अधिकार की प्रथा विद्यमान थी। बेडन पॉवेल का मत है कि प्रजातीय आवागमन के परिणामस्वरूप भू-स्वामित्व के अधिकारों में भी परिवर्तन होता रहा। आर्यो से पूर्व रैयतवाड़ी व्यवस्था प्रचलित थी जो अब भी दक्षिणी भारत में पायी जाती है। आर्यो ने भूमि पर गाँव के सामूहिक स्वामित्व की प्रथा प्रारम्भ की। वे कहते हैं कि भूमि पर जो व्यक्ति श्रम करता और उसे कृषि योग्य बनाता उसका उस पर अधिकार होता। दूसरा भूमि पर अधिकार विजय के कारण पैदा होता है। उत्तरी भारत में भूमि का अधिकार एक गोत्र द्वारा भूमि विस्तार के कारण भी प्राप्त हुआ अथवा राजा द्वारा भूमि देने या गोत्र द्वारा भूमि विस्तार के कारण भी। भूमि पर स्वामित्व के आधार पर उत्तरी भारत में दो प्रकार के गाँव देखने को मिलते हैं: (1) ताल्लुकेदारी अथवा जमींदारी प्रथा वाले गाँव (2) संयुक्त जमींदारी प्रथा वाले गाँव।

जिन गाँवों में जमींदारी या ताल्लुकेदारी प्रथा थी वहाँ गाँव की सारी भूमि पर जमींदार अथवा ताल्लुकेदार का अधिकार होता था। गाँव के दूसरे लोग उनकी प्रजा अथवा रैयत कहलाते थे जिन्हें केवल खेती करने का अधिकार था। भूमि पर कृषि करने के बदले लोग जमींदारों को लगान देते थे। गाँव के बाग-बगीचे, तालाब, चरागाह, भूमि आदि पर जमींदारों का अधिकार होता था। इनका उपयोग करने वाले को नकद अथवा वस्तु के रूप में लगान या मुआवजा देना होता था। व्यापारी, दस्तकारी एवं सेवा करने वाली जातियाँ मुआवजे का भुगतान, उपहार के रूप में करती थीं। जमींदार को अपनी रैयत पर अनेक न्यायिक अधिकार भी प्राप्त थे। जमींदारी प्रथा ने अनेक आर्थिक,

राजनैतिक, सामाजिक एवं न्यायिक अधिकारों को जन्म दिया। इन अधिकारों में कानून का कोई हस्तक्षेप नहीं था। बिना कानून के ही जमींदार बहुत शक्तिशाली होते थे।

गाँव के लोग भी कानून से अधिक प्रथाओं को स्वीकार करते थे। जमींदारी प्रथा ने गाँवों में इस प्रकार से एक विशिष्ट शक्ति संरचना को जन्म दिया। जाति पंचायत के बाद गाँव में जमींदार ही सभी प्रकार के व्यावहारिक मामलों में कानून एवं नियमों के प्रतीक एवं संरक्षक थे। वे अपनी कचहरी लगाते, कागजों का लेखा-जोखा रखते, न्याय करते एवं अपराधियों को दण्डित करते थे। जमींदार ही गाँव का मुखिया होता था।

दूसरे प्रकार के गाँवों में जहाँ संयुक्त जमींदारी प्रथा का प्रचलन था शक्ति संरचना दूसरे प्रकार की थी। सामूहिक जमींदार प्रथा में वहाँ सभी भूमिदार 'थोकों' में बँटे हुए थे तथा थोक 'पट्टियों' में बटे हुए थे। एक थोक का एक या अधिक लम्बरदार होता था जो शक्ति की एक स्वतन्त्र इकाई था। गाँव के किसान सेवा करने वाली जातियाँ एवं व्यापारी भी थोक के अनुसार बटे होते थे और उन पर थोक की ही सत्ता होती थी। इस प्रकार संयुक्त जमींदार वाले गाँव में शक्ति की एक से अधिक इकाइयाँ होती थीं। इन इकाइयों के जमींदारी से सम्बन्धित कई अधिकार थे जैसे वे भूमि, लगान और मकान के टैक्स की वसूली करते। वे अपनी चरागाह भूमि को विवाह, मृत्यु एवं जन्म के समय जनता में बाँटते। अपनी जनता की विभिन्न जाति पंचायतों के विरूद्ध सुनवाई करते। ऐसे गाँवों में शक्ति धारण करने वाली एक संस्था होती है। जिसमें भूस्वामी परिवारों के वयोवृद्ध व्यक्ति, निम्न जाति का सेवक व्यक्ति, पटवारी, चौकीदार तथा गाँव का मुखिया आदि होते थे।

ताल्लुकेदार, गाँवों में भी उप-भूस्वामी होते थे जिन्हें ठेकेदार कहते थे। ये ठेकेदार ताल्लुकेदार की तरह ही शक्ति का प्रयोग करते थे। कुछ गाँवों में ताल्लुकेदार का एक प्रतिनिधि गाँव में उसके नाम से शक्ति का प्रयोग करता था और महत्वपूर्ण मामलों की सुनवाई करता था।

ग्राम पंचायतों का संगठन भी जमींदारी प्रथा के अनुसार ही विभिन्न गाँवों में अलग-अलग प्रकार का था। पंजाब और दक्षिणी भारत के गाँवों में एक गाँव पंचायत होती थी। जिसके अधिकार क्या होंगे? और सदस्य कौन होंगे? यह लगभग तय था। गाँव पंचायत में विभिन्न थोकों के लम्बरदार, ताल्लुकेदारों के ठेकेदार, विभिन्न जाति पंचायतों के वयोवृद्ध व्यक्ति, चौकीदार आदि, होते थे। जमींदार प्रथा जहाँ गाँवों को विभन्न थोकों ओर पट्टियों में विभाजित करती थी वहीं वह ग्रामीण शक्ति संरचना का व्यापक आधार भी थी। ये गाँव पंचायतें गाँव में कानून व्यवस्था को बनाये रखने, जाति

पंचायतों के विरूद्ध अपील सुनने तथा थोक के भूस्वामियों की शिकायतें सुनने का कार्य करती थीं।

सैद्धान्तिक रूप में तो ग्राम पंचायतें ग्रामीण शक्ति संरचना में सर्वोच्च स्थान रखती थीं। किन्तु व्यवहार में इनका प्रभुत्व थोंकों के भूस्वामियों के गुटों के साथ-साथ इधर-उधर खिसकता रहता था और शायद ही यह व्यापक संस्था कभी अपनी शक्ति का प्रयोग सफलतापूर्वक करती थी। सामान्यत: ये ग्राम पंचायतें सुषुप्त अवस्था में ही रहती थीं। किन्तु जब कभी गाँव की प्रतिष्ठा और सुरक्षा का प्रश्न पैदा होता था तो गाँव पंचायतें क्रियाशील और सर्वोच्च शक्तिमान दिखाई देती थीं।

सम्पूर्ण भारतीय गाँवों में जाति पंचायतें शक्ति का महत्वपूर्ण स्रोत थीं। जाति पंचायत ने ही जाति व्यवस्था को सुरक्षा प्रदान की। अंग्रेजी राज्य की न्याय व्यवस्था की स्थापना के साथ ही जाति पंचायतों के कई कार्य भी समाप्त हो गये। जाति पंचायत के प्रमुख अधिकारी चौधरी (प्रधान), पंच (पंचायत की कार्यकारिणी के सदस्य), चरिदार या सिपाही (सन्देशवाहक) आदि होते थे जो सभी निम्न तथा बीच की जातियों में वंशानुगत होते थे। इन जाति पंचायतों का प्रभाव एक गाँव तक ही सीमित नहीं था वरन् दस या बीस गाँव तक फैला होता था। जाति पंचायतें कई कार्य करती थीं जैसे भोजन के नियमों को तय करना, विवाह का क्षेत्र व नियम तय करना, नियमों के उल्लंघन करने वालों को दण्ड देना, तथा विरोधी जातियों व समूहों से जाति की प्रतिष्ठा एवं सुरक्षा और हितों की रक्षा करना आदि।

किन्तु समय के साथ-साथ जब जमींदारी प्रथा का उन्मूलन हुआ और नई चयनित पंचायतों का गठन हुआ तो गाँवों में जाति पंचायतें क्रियाशील हुई और जातियों के गुट बने। जमींदारी प्रथा में जाति पंचायतों में जातिवाद का तत्व दबा हुआ था और जाति पंचायतें शक्ति का द्वैतीयक एवं अपेक्षित स्रोत थीं। किन्तु अब वे गाँव में सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक सम्बन्धों को नियन्त्रित करने वाली शक्ति बन गयी हैं। अब वे ग्रामीण सामाजिक संरचना में सामाजिक तनाव का एक कारण भी है। इस विवरणों के आधार पर परम्परागत ग्रामिण शक्ति संरचना की निम्नलिखित विशेषताओं का पता चलता है।

(1) जमींदारी प्रथा के उन्मूलन से पूर्व गाँवों में शक्ति का स्रोत आर्थिक स्रोतों पर निर्भर था, जो कुछ ही वर्गो के हाथों में केन्द्रित था।(2) जमींदारी अर्थ-व्यवस्था में गाँवों की समाज व्यवस्था व शक्ति व्यवस्था को प्रभावित किया था। गाँव पंचायत जमींदार के हाथों में एक साधन थी। गाँवों में नेतृत्व का प्रतिमान जमींदारी व्यवस्था से प्रभावित था।(3) परम्परागत ग्रामीण शक्ति संरचना पर जाति का भी स्पष्ट प्रभाव था।

जाति पंचायतें काफी शक्तिशाली थीं। उच्च जातियों के लोगों ने भी जमींदारों एवं गाँव पंचायत के मुखियाओं के रूप में शक्ति प्रयोग में अहम् भूमिका निभायी।(4) परम्परागत ग्रामीण शक्ति संरचना का स्वरूप वंशानुगत था। जमींदार गाँव पंचायत एवं जाति पंचायत के मुखियाओं के पुत्रों को ही पिता से शक्ति एवं पद वंश परम्परा में प्राप्त होते थे।(5) परम्परागत ग्रामीण शक्ति संरचना में निरंकुशता का तत्व पाया जाता है। शक्ति धारण करने वाले निरंकुश प्रकृति के होते थे तथा ग्राम हित एवं जनहित की अपेक्षा वे अपना व्यक्तिगत हित ही अधिक देखते थे।(6) परम्परागत ग्रामीण शक्ति संचार का स्वरूप स्थानीय था। जिसका सम्बन्ध सामान्यतः उसी गाँव व जाति तक सीमित था।(7) परम्परागत ग्रामीण शक्ति संरचना ने ग्रामीण सामाजिक संरचनाओं को भी प्रभावित किया। वह जाति व्यवस्था जमींदारी सम्बन्धों परिवार, विवाह, नातेदारी, धर्म ग्रामीण शक्ति संचार में जाति और आर्थिक सम्पन्नता का प्रमुख प्रभाव था। व्यक्ति शक्ति संरचना में कितना ऊँचा चढ़ सकेगा, इसका निर्धारण उसकी जाति एवं आर्थिक स्थिति से ही होता था। नेतृत्व में बहुत कम ही परिवर्तन होता था और उसका भी दायरा सीमित था।

शक्ति का नया प्रतिमान

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत सरकार ने एक महत्वपूर्ण कदम यह उठाया कि उसने जमींदारी प्रथा को समाप्त किया तथा उसके स्थान पर नई पंचायत व्यवस्था को लागू किया। इस पंचायत व्यवस्था ने गाँवों में नयी शक्ति संरचना को जन्म दिया। 1920 में ब्रिटिश सरकार ने भी कानून बना कर गांव पंचायतों में अधिकारियों को मनोनीत करने की व्यवस्था की थी किन्तु उस व्यवस्था में भी जमींदारों का प्रभाव समाप्त नहीं हुआ। उस समय भी पंचायत अधिकारियों के चुनाव की एवं वयस्क मताधिकार की व्यवस्था नहीं थी। इसलिए इन पंचायतों को भी जनता का समर्थन प्राप्त नहीं था। 1948 के कानून ने कई क्रान्तिकारी विचारों एवं चलनों का शुभारम्भ किया। इस कानून के द्वारा प्रत्येक युवा व्यक्ति को मताधिकार दिया गया तथा हाथ खड़े करके चुनाव कराये जाने लगे। स्त्रियों को पहली बार गांव की गतिविधियों में सक्रिय भाग लेने का अधिकार दिया। गाँव पंचायत की कार्यवाही का लिखित रिकार्ड रखा जाने लगा और इनका सम्बन्ध राज्य की सम्पूर्ण न्याय व्यवस्था तथा लगान प्रशासन से जोड़ दिया गया। इस तरह पहली बार गाँव के अधिकारियों का सैद्धान्तिक व कानूनी रूप से आर्थिक स्थिति एवं जाति से सम्बन्ध तोड़ दिया गया।

जमींदारी उन्मूलन के कानून ने ग्रामीण प्रजातंत्र को तीव्र गति प्रदान की भूमि में मध्यस्थ अधिकारियों की समाप्ति करने से पुराने कास्तकारों के परिवारों को आर्थिक तथा सामाजिक क्षेत्र में जमींदारों के अधिकारों से मुक्ति मिली। नम्बरदार व मुखिया के पदों को समाप्त कर दिया गया। जो बाग-बगीचे, तालाब, चरागाह भूमि जमींदारों के अधिकारों

में थे। उन्हें गाँव की सामूहिक सम्पत्ति घोषित कर दिया गया और उन पर नई चुनी हुई पंचायत को अधिकार एवं प्रशासन सौंप दिया गया। गाँव का चौकीदार अब जमींदार के स्थान पर चुनी हुई पंयचायत के अधिकारियों के प्रति उत्तरदायी बना दिया गया।

इस प्रकार समाजशास्त्रीय दृष्टि से ग्रामीण समुदाय की सामाजिक, आर्थिक एवं शक्ति संरचना में महत्वपूर्ण प्रजातांत्रीय परिवर्तन कर दिये गये। यह राष्ट्रीय समाजवादी प्रजातंत्र की ओर एक कदम था। कानूनी दृष्टि से भी गाँव में सामूहिक सम्बन्धों की प्राचीन व्यवस्था के स्थान पर नई व्यवस्था लागू कर दी गई। इस व्यवस्था ने परिवार के स्थान पर व्यक्ति को शक्ति व्यवस्था में सहभागी बनाया। जाति का महत्व भी समाप्त कर दिया गया। इस प्रकार प्रदत्त पदों के स्थान पर अर्जित पदों को महत्व दिया गया जो समाजशास्त्रीय दृष्टि से परम्परात्मक ग्रामीण विश्व दृष्टिकोण में परिवर्तन का प्रयास कहा जा सकता है।

नयी विकास पंचायतों एवं न्याय पंचायतों ने नयी शक्ति व्यवस्था को जन्म दिया जिसका उद्देश्य ग्रामीण शक्ति के स्रोतों को जनसहयोग तथा लोकतंत्र पर आधारित करता था। अब ग्रामीण नेताओं का चुनाव वर्ग एवं जाति के स्थान पर उनके अर्जित गुणों के आधार पर होने लगा। यद्यपि पंचायत चुनावों से सम्बन्धित अनेक अध्ययन इस बात की पुष्टि करते है कि अब भी कई गाँवों में पंच एवं सरपंचों के चयन में जाति एवं वर्ग का महत्व कम नहीं हुआ है। आर्थिक विषमता के कारण भूस्वामियों, बड़े-बड़े किसानों तथा सहूकारों का अब भी ग्रामीण शक्ति संरचना में महत्वपूर्ण स्थान है। ग्रामीण काश्तकारों की भूस्वामियों एवं साहूकारों पर आर्थिक निर्भरता अब भी बनी हुई है। इसके लिए उनकी निम्न एवं दयनीय आर्थिक स्थिति उत्तरदायी है। गाँव की उच्च जाति एवं वर्ग के साथ मध्यम एवं निम्न जातियों तथा वर्गो का असन्तोष एवं संघर्ष धीरे-धीरे बढ़ रहा है। **योगेन्द्र सिंह** ने वर्तमान भारतीय गाँवों की शक्ति संरचना की निम्न विशेषताओं का उल्लेख इस प्रकार से किया है: (1) गाँवों में आज भी उच्च जातियों (जैसे ब्राह्मण, क्षत्रिय, भूमिहार) एवं वर्गो (जैसे भूतपूर्व भूस्वामी और साहूकार) के हाथों में शक्ति केन्द्रित है। (2) निम्न जातियाँ एवं वर्ग संगठित होकर उच्च जातियों एवं वर्गो से शक्ति प्राप्त करने के लिए प्रतिस्पर्द्धा कर रहे हैं। यह प्रवृत्ति वर्ग समूह के स्थान पर जाति समूहों के लिए अधिक सही है। जाति स्तर पर इस सहभागीकरण ने गुटबंदी को जन्म दिया है। गुटबंदी ने गॉव को विभाजित ही नहीं किया वरन् ग्रामीण जीवन में तनाव और सुरक्षा भी पैदा की है।(3) गाँव में नई शक्ति व्यवस्था में जिन लौकिक और प्रजातांत्रीय मूल्य व्यवस्थाओं की अपेक्षा की गयी थी वे गाँवों की मूल व्यवस्था एवं सामाजिक संरचना में प्रवेश नहीं कर पाये हैं। गाँवों में सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक

सहभागीकरण की इकाई व्यक्ति नहीं अपितु गृहस्थी परिवारों का समूह या गुट है।(4) गाँव की राजनीति आज भी विभिन्न जातियों एवं वर्गो की आर्थिक सम्पन्नता एवं वंचित रहने ने प्रतिमानों द्वारा प्रभावित है। गाँव में शक्ति व्यवस्था का झुकाव उन समूहों की ओर है जो ग्रामीण लोगों की आर्थिक आकांक्षओं को नियंत्रित करते हैं। भविष्य में ग्रामीण शक्ति व्यवस्था की गतिशीलता की दिशा गाँवों में होने वाले आर्थिक परिवर्तन और आर्थिक वृद्धि पर निर्भर करेगी।

नयाभोजपुर एवं काजीपुर गाँव में राजनैतिक परिवर्तन

अध्ययन हेतु चुने गये दोनो क्षेत्रो में यद्यपि भूमि उच्च जातियों के पास अभी भी अधिक है। लेकिन राजनैतिक शक्ति पिछड़े वर्ग और मुस्लिम समुदाय के हाथ में है। इन दोनो क्षेत्रों मे पहला ग्राम पंचायत चुनाव सन् 1962 में हुआ था। एक बात महत्वपूर्ण है कि नयाभोजपुर गाँव में हमेशा से ही राजनीतिक शक्ति पिछड़े वर्ग व मुस्लिम के हाथों मे रही है। इस गाँव के प्रथम निर्वचित मुखियां स्व0 लक्ष्मी नारायण मैढ़ थे। इनके बाद स्व0 जगदीश प्रसाद गुप्ता रहे। इसके बाद 1978 में परिवर्तन आया और सर्वप्रथम ब्राह्मण जाति के सभापति मिश्र मुखिया निर्वाचित हुए। हमेशा से ही सरपंच और उपमुखिया का पद यादव व मुस्लिम के हाथों में हुआ करता था। वर्तमान में मुखिया का पद एक मुस्लिम जाति का नौजवान मोहम्मद नौसाद खाँ सुशोभित कर रहा है। ऐसा ही परिवर्तन काजीपुर गाँव में हुआ है। प्रारंभ में इस गांव के मुखिया पद कायस्थ लोगों के पास था। वर्तमान में यह पद मुस्लिम जाति के पास है। इस परिवर्तन का मुख्य कारण पिछड़ी जातियों में जागृत हो रही राजनीतिक चेतना है। राजनीतिक जागरूकता लाने में इन दोनो क्षेत्रो में ही नहीं बल्कि पूरे बिहार में यादव-मुस्लिम समीकरण कारक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। पंचायती राज व्यवस्था ने इस जागरूकता को जगाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

बिहार प्रदेश में पंचायती राज

यद्यपि बिहार देश के मानचित्र पर अत्यंत गरीब, पिछड़े एवं अशिक्षित राज्य के तौर पर विद्यमान है, लेकिन राजनीतिक रूप से इसकी सक्रियता जगजाहिर है। आजादी के बांद देश में पंचायती राज का पहला कानून बनाने वाला प्रदेश बिहार ही रहा है। देश में सबसे पहले 1947 में बिहार पंचायत राज अधिनियम बना। विधानमंडल में पारित होने के बाद व 1948 में पूरे प्रदेश में लागू हुआ। इस अधिनियम मे मुखियां और कार्यपालक (प्रशासनिक ढांचा), सरपंच और पंच (न्यायपालिका का ढांचा) तथा दलपति और स्वयंसेवक (सुरक्षा प्रबंधन) प्रावधान किया गया। यही अधिनियम 22 अगस्त 1993 तक लागू रहा। इस अधिनियम के तहत बिहार में 1952 से 1965 तक हर तीन साल में एक

बार पंचायत चुनाव हुये, क्योंकि उस समय तक पंचायतों का कार्यकाल तीन सालों का निर्धारित किया गया था। 1965 से पंचायतों का कार्यकाल पांच सालों का हो गया। इन निकायों ने सही ढंग से लगभग दस वर्षो तक काम किया। इसके बाद सभी राज्य के विधायकों और सांसदों में ऐसा महःसूस किया किया कि जिला परिषदों, ग्राम पंचायतों और पंचायत: समितियों के निर्वाचित प्रतिनिधि उनके साथ प्रतिद्वंद्विता में आ रहे है। अत: राज्य सरकारों ने इसके चुनाव कराने में जानबूझ कर ढील दे दी। फलस्वरूप पंचायती राज व्यवस्था के क्रियाकलाप में काफी शिथिलता आ गई।

बिहार में **कर्पूरी ठाकुर** ने पंचायत चुनाव के महत्व को समझते हुए अपने मुख्यमंत्रित्व काल में काफी विरोध का सामना कर 1978 में पंचायत चुनाव कराया। इस चुनाव के परिणामस्वरूप काफी संख्या में पिछड़ा वर्ग के मुखिया निर्वाचित हुए। इसके बाद बिहार में पंचायत चुनाव नहीं हुए। 1992 में 73वें संविधान संशोधन के बाद फिर इस दिशा में सरगर्मी आई क्योंकि इसके अनुच्छेद 243 के द्वारा अनुसूचित जाति, जनजाति, महिला एवं पिछड़ा की के लिए आबादी के अनुपात में सभी पदों पर आरक्षण का प्रावधान किया गया। साथ ही इसे संवैधानिक दर्जा प्रदान कर इसके राजनीतिक महत्व को भी बढ़ा दिया गया। 24 अप्रैल 1993 को सरकारी अधिसूचना के बाद भारत के सभी राज्यों में पंचायती कानून बने तथा वंचित लोगों के लिए सभी पदों पर पंचायती चुनाव कराये गए। किन्तु बिहार ही ऐसा इकलौता राज्य रहा, जो चुनाव को टालता रहा। पटना उच्च न्यायालय की बार बार फटकार सुनने तथा केन्द्र सरकार द्वारा 700 करोड़ रूपये की अनुदान लगातार रोके जाने पर 23 वर्षो के बाद पिछले साल विहार के 37 जिलों के 529 प्रखण्ड़ों में 8452 ग्राम पंचायतों में मुखिया के चुनाव सम्पन्न हुये। इसके साथ-साथ ग्राम पंचायतों के सदस्य और प्रखंड पंचात समितियों के सादस्य चुने गये। जिला पंचात परिषद के 1160 सदस्यों का चुनाव हुआ। इन सदस्यों ने जिला पंचायत समितियों के अध्यक्षों और उपाध्यक्षों का चुाव किया। इन चनावों में राजीनति के अपराधी करण की झलक पंचायत स्तर प भी साफ दिखई पड़ी। इसके बावजूद भी जहाँ-तहाँ जनता ने अच्छे प्रतिनिधि चुनकर पंचातों में भेजे हैं लेकिन इनकी संख्या नगण्य है। 23 वर्ष बाद बिहार में हुए पंचायत चुनाव में एक महत्वपूर्ण बात यह रहा कि बिना आरक्षण का चुनाव हुआ। बिहार को छोड़कर सभी राज्यों में पंचायती राज कानून के तहत अनुसूचित जाति जनजाति, महिला एवं पिछड़ा वर्ग के आरक्षण का प्रावधान है। पिछड़ा वर्ग आंदोलन के कारण पिछड़े व अल्पसंख्यक समुदाय में जनतांत्रिक नेतृत्व उभर कर आया है। बदली हुई परिस्थितियों में निम्न जातियां नेतृत्व के क्षेत्र में देखा जा रहा है। वयस्क मताधिाकर के कारण अश्पृश्य और निम्न जातियां अपनी अधिक संख्या का लाभ उठाकर औपचारिक नेतृत्व के पदों को हथिया रही है। गाँव में इस चुनाव के कारण

उच्च जाति का प्रभुत्व कम होता जा रहा है। और निम्न जातियां शक्तिशाली हो रही है। सरकार द्वारा निम्न जातियों के लिए नयी राजनैतिक व्यवस्था में स्थन सुरक्षित रखे गये हैं। इस कारण से भी ये जातियां नेतृत्व के क्षेत्र में आगे आ रही है। वर्तमान में नेतृत्व का अवसर किसी धर्म, जाति, व्यवसाय, रंग, लिंग और परिवार तक ही सीमित नहीं है। सभी प्रकार के लोग गाँवों में नेतृत्व के क्षेत्र में दिखई पड़ते हैं। आज गाँव से सम्बन्धित निर्णय किसी एक व्यक्ति द्वारा सामूहिक रूप से किये जाते हैं। इन पंचायतों में विभिन्न वार्ड में कई जातियों के सदस्य होते हैं। इन दोनों क्षेत्रों के वार्ड में भी ब्राह्मण, बनिया, यादव, कोइरी, हरिजन, दुसाध, मल्लाह, बिन्द और मुसलमान है। नया भोजपुर गाँव में 22 वार्ड हैं, जिसमें विभिन्न जातियों के सदस्य हैं।

इन दोनों क्षेत्रों में राजनीतिक शक्ति एवं ग्रामीण नेतृत्व में पिछड़ी जातियों व मुसलमान समुदाय के लोगों का वर्चस्व बढ़ रहा है। इन जातियों के युवा व्यक्ति नेतृत्व के क्षेत्र में आगे आ रहे हैं। नये प्रजातंत्रीय अधिकारों एवं कानूनी सुरक्षाओं ने कम शक्शिाली लोगों को शक्ति प्राप्त करने के लिए प्रेरित किया है। ग्रामीण शक्ति परम्परागत नेताओं के हाथ में आ रही है। इन नेताओं ने ग्रामीणों की समूह शक्ति का उपयोग करना सीख लिया है और वे अपने दैनिक जीवन में पूर्ण व्यवहारवादी होने का ढोंग रचने लगे हैं। वे अपने स्रोतों को जानते हुए अपने पद का प्रयोग शक्ति में बने रहने के लिए करने लगे हैं। वर्तमान में ग्रामीण नेतृत्व का उदीयमान प्रतिमान नयी प्रकृति और परम्परागत तत्वों का मिश्रित चित्र प्रस्तुत कर रहा है। इस उदीयमान प्रतिमान की गति तेज करने में पंचायती राज व्यवस्था सहायक सिद्ध हुयी है।

इसका उद्देश्य जनतंत्रात्मक क्रियाकलापों में प्रत्येक स्तर पर ग्रामीण लोगों को सम्मिलित करके जनतंत्र के आदर्शो को यथार्थ बनाना है। पंचायत राज के क्रियान्वयन ने सरकार के जनतंत्रात्मक स्वरूप को ग्राम स्तर तक सुनिश्चित कर दिया है। इससे ग्राम स्तर पर नेतृत्व विकसित करने में सहायता मिलेगी। पंचायत राज के विकास के फलस्वरूप ग्रामीण समुदाय में राजनैतिक चेतना विकसित हुई है। महिलाओं ने भी ग्रामीण चुनावों में बढ़-चढ़ कर भाग लेकर भारी संख्या में निर्वाचित हो रही है। पंचायती राज के सम्बन्ध में अध्ययन के लिए चयनित उत्तरदाताओं को दृष्टिकोण समाजशास्त्री अध्ययन की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। पंचायत राज के सम्बन्ध में उत्तरदाता के दृष्टिकोण की जानकारी अध्ययनकर्ता द्वारा ली गयी है।

तालिका–4.1

क्या आप पंचायतीराज व्यवस्था को सही मानते है?

दृष्टिकोण	संख्या	प्रतिशत
हॉ	189	78.75
नहीं	41	17.08
तटस्थ	10	4.16
कुल	240	99.99

तालिका-4.1 से स्पष्ट है कि चयनित उत्तरदाताओं की बहुसंख्या 79 प्रतिशत पंचायतीराज व्यवस्था के पक्ष में है। 17 प्रतिशत उत्तरदाता इसके पक्ष में नहीं है। मात्र 4 प्रतिशत उत्तरदाता इस व्यवस्था के संदर्भ में तटस्थ है। इनको पंचायतीराज व्यवस्था के विषय में ज्ञान नहीं है। अतः उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि दोनों क्षेत्रों में पंचायतराज व्यवस्था की उपयोगिता एवं महत्व को अनुभव किया जा रहा है।

अध्याय-5

व्यवहार के बदलते प्रतिमान

अध्याय–5

व्यवहार के बदलते प्रतिमान

पिछले अध्याय में अध्ययनकर्ता नें आर्थिक व राजनैतिक पहलुओं और उसमें हुए परिवर्तन का उल्लेख किया है। यह स्वाभाविक है कि इन परिवर्तनों के फलस्वरूप व्यक्ति का व्यवहार भी परिवर्तित होगा अर्थात व्यवहार में भी परिवर्तन आयेगा। व्यवहार में आये परिवर्तनों को अध्ययनकर्ता ने विभिन्न जातियों के बीच समतावादी दृष्टिकोण, छुआ-छूत की भावना, अनुसूचित जातियों व पिछड़े वर्गो को दिये जाने वाले आरक्षण, जातिय भेद भाव आदि के संदर्भ में अध्ययन किया है।

समतावादी दृष्टिकोण

ग्रामीण समाज की सामाजिक संरचना की एक महत्वपूर्ण विशेषता विभिन्न जातियों के बीच अन्तर्जातीय सम्बन्ध की व्यवस्था है। यह अन्तर्जातीय सम्बन्ध की व्यवस्था के नाम से जानी जाती है। यह व्यवस्था जातियों के बीच उदग्र सम्बन्ध व्यवस्था पर आधारित है। एक ही जाति के सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्धों को क्षैतिज सम्बन्ध कहा जाता है। किन्तु विभिन्न जातियों के पारस्परिक सम्बन्धों का उदग्र सम्बन्ध कहा जाता है। जजमानी व्यवस्था में निम्न और उच्च जातियों परस्पर सेवाओं के आदान प्रदान के द्वारा एक दूसरे से जुड़ी रहती है। यह व्यवस्था एक तरह से विभिन्न जातियों के बीच असमानता को निर्दिष्ट करती है।

वर्तमान में नयाभोजपुर व काजीपुर गांव के विभिन्न जातियों के पारस्परिक सम्बन्धों में आए इस परिवर्तन का मुख्य कारण आर्थिक व राजनैतिक परिवर्तन ने विभिन्न जातियों के व्यवहार में भी परिवर्तन ला दिया है। व्यवहारों में समानता का भाव देखा जा रहा है। सैद्धांतिक रूप से, भले ही उच्च जाति स्वयं में स्वीकार नही कर रही है, लेकिन उस व्यवहार में दर्शित अवश्य कर रही है। सिद्धांत और व्यवहार के बीच खाई को पाटने में संवैधानिक प्रावधानों में महत्वपूर्ण कार्य किया है। संविधान की दृष्टि से सभी जातियों का समान आधार पर व्यवस्थित किया गया है। समाज में जातीयता के आधार पर छोटे बड़े की भावना को समाप्त करने के लिए स्वतंत्र भारत में व्यापक स्तर पर सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा अन्य सभी क्षेत्रों में समानता स्थापित करने का प्रयास किया गया है, जिससे समाज में असमानता की भावना को दूर किया जा सके। अतः प्रस्तुत अध्ययन के समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण के लिए आवश्यक है कि चयनित उत्तरदाताओं के अन्य जातियों के सदस्यों के प्रति समतावादी दृष्टिकोण की जानकारी प्राप्त की जाय। इसलिए प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में उत्तर दाताओं के दृष्टि कोण की जानकारी प्राप्त की गयी है।

तालिका–5.2
क्या जाति निर्योग्यता के विचार को मान्यता देते है?

क्रम सं0	मान्यता	संख्या	प्रतिशत
1	देते है	49	20.41
2	नही देते है	181	75.41
3	तटस्थ	10	4.16
कुल	–	240	99.98

तालिका-5.2 से विदित होता है कि अधिकतया उत्तरदाता (75.41 प्रतिशत) का विचार है कि वे जाति निर्योग्यता के विचार को मान्यता नही देते हैं। 20.41 प्रतिशत उत्तरदाता जाति निर्योग्यता के विचार को मान्यता देते हैं। केवल 4.16 प्रतिशत उत्तरदाता इस संदर्भ में तटस्थ हैं।

छुआ–छूत सम्बन्धी दृष्टिकोण

शुद्धता तथा अशुद्धता की धारणा के आधार पर जाति व्यवस्था के अन्तर्गत छुआ छूत की प्रवृति दृष्टिगोचर होती थी । छुआ-छूत की भावना भेद-भाव पर आधारित है। भेद-भाव समाज के सदस्यों के सामाजिक व्यवहार से प्रकट होता है। यह माना जाता है। कि पंचम वर्ण के सदस्य अपवित्र होते है। इनके सदस्य अछूत या न छूने योग्य है और इसलिए उनसे एक सामाजिक दूरी बनाने रखना न केवल उच्च जातियों का कार्य है अपितु अश्पृश्य जातियों का कर्तव्य है कि वे उच्चजाति के सदस्यों से दूर रहें और उन्हें न छुएं। इसके अतिरिक्त वे अछूत थे इसलिये उनके साथ उठना-बैठना खाना-पिना या अन्य सामाजिक सम्बन्ध रखने का प्रश्न ही नही उठता था। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सामाजिक समानता स्थापित करने के लिए जाति के आधार पर भेद भाव को निषिद्ध घोषित किया गया। धर्मशास्त्रों के अन्र्तगत धार्मिक, समाजिक एंव राजनैतिक जाति निर्मोग्यताएं अधिनियम द्वारा समाप्त कर दी गयी है। सभी जातियों को, चाहे वे छूत हो या अछूत, सार्वजनिक स्थानों, तालाबो, कुओं, धार्मिक व सार्वजनिक स्थानों, शिक्षण संस्थाओं के उपयोग के सम्बन्ध मे समान अधिकार प्रदान कि गये है।अधिनियम द्वारा व्यवस्था की गयी है कि अस्पृश्य जातियों को उनके जातिगत व्यवसाय अपनाने के लिए बाध्य नही किया जा सकता। इस जाति के लोगों को भी उच्च जाति के लोगों की ही भांति शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है। संविधान ने इन जातियों को विशिष्ट प्रोत्साहन देने के लिए कुछ स्थान सरकारी सेवाओं में सुरक्षित किये है। आज समाज मे छुआ-छूत की प्रवृति दण्डनीय है।

दोनों गाँवों में छुआ-छूत की भावना में कमी आई है। आर्थिक व राजनीतिक परिवर्तन इस भावना को कम करने में सहायक रही है। दोनों गाँवों में ऐसा देखने में आ

रहा है। दोनों गाँवों में पंचायत के चुनावों में कुछ अछूत जातियों के वार्ड सदस्य है, जिनके प्रति अन्य सदस्यों द्वारा समानता का भाव पाया जा रहा है। समाजशास्त्रीय अध्ययन के लिए शोध समस्या के प्रत्येक पहलू के विषय में उत्तरदाताओं की प्रवृति जानना आवश्यक होता है ताकि अध्ययन वस्तुनिष्ठ हो सके। अतः शोध प्रबन्ध में चयनित उत्तरदाताओं की छुआ-छूत के प्रति दृष्टिकोण की जानकारी प्राप्त की गयी है।

तालिका–5.3

क्या छुआ–छूत के पक्ष मे है?

क्रम संख्या	पक्ष मे	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	79	32.92
2	नहीं	9,139	58.91
3	तटस्थ	22	9.16
कुल	–	240	99.99

तालिका-5.3 से स्पष्ट होता है कि चयनित उत्तरदाताओं का 32.92 प्रतिशत छुआ-छूत के पछ में है, जबकि 58.91 प्रतिशत छुआ-छूत के पक्ष में नही है। 9.16 प्रतिशत उत्तरदाता तटस्थ हैं। इस प्रकार उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि अध्ययन कर्ता अभी भी पूरी तरह छुआ-छूत की पद्धति से अपने को मुक्त नही कर सका हैं

जातीय भेद–भाव के प्रति दृष्टिकोण

जातीय आधार पर भेद-भाव समाज के स्वस्थ एवं स्वच्छ विकास के मार्ग में अवरोध का कार्य करता है। जातीय आधार पर समाज के विभाजित हो जाने से सभी वर्गो का अपेक्षित सहयोग समाज में नही मिल पाता है। वस्तुतः जाति प्रथा व्यक्ति और समाज दोनों को ही प्रगति में बाधक रही है। जाति सम्बन्धी नियमों का उल्लेखन करने पर जाति से बहिष्कृत होने के भय के कारण लोग परम्पराओं को बदलते परिवेश में अपनाने से डरते है। अतः समाज विकास के क्षेत्र मे अपेक्षित प्रगति नही कर पाता। भारत के ग्रामीण विकास के संदर्भ में यह तर्क सर्वथा सार्थक सिद्व होता है। भारत का ग्रामीण समाज जाति व्यवस्था के कारण अकर्मण्य तथा भाग्यवादी दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रतिपद्ध दिखाई देता है। जाति व्यवस्था पर आधारित भेद-भाव की भावना के कारण उद्योगों में श्रम विभाजन उचित रूप से क्रियान्वित नहीं हो पाता। जातीयता पर आधारित संकीर्णता की भावना के कारण उच्च जाति के लोग श्रम के महत्व को नहीं समझ पाते है तथा अपना ही कार्य करने में हिचकते है। ग्रामीण समाज मे उच्च जाति के लोग अपने खेतों में कार्य करना अपमानजनक मानते हैं। कहने का तात्पर्य है कि ग्रामीण विकास में जातीय भेद भाव बाधक सिद्ध हो रहे हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में समुचित विकास न हो पाने के कारण सम्पूर्ण देश अन्य देशों की तुलना में प्रगति करने में

पिछड़ गया है। जातीय भेद भाव का ग्रामीण विकास के संदर्भ में बाधक, के संदर्भ में अध्ययनकर्ता द्वारा उत्तरदाताओं के दृष्टिकोण का पता किया गया है।

तालिका–5.4

क्या आप जातीय भेद भाव को ग्रामीण विकास में बाधक मानते हैं?

क्रम संख्या	दृष्टि कोण	संख्या	प्रतिशत
1	मानते हैं	169	70.40
2	नही मानते है	48	20.00
3	तटस्थ	23	9.58
कुल	–	240	99.98

तालिका-5.4 से स्पष्ट है कि 70.40 प्रतिशत उत्तरदाता का दृष्टिकोण है कि ग्रामीण विकास के संदर्भ में जातीय भेद-भाव बाधक है। 20 प्रतिशत जनसंख्या बाधक नही मानते है। केवल 9.58 प्रतिशत उत्तरदाता इस संदर्भ में कुछ नही कहना चाहते हैं।

जातिवाद और प्रजातंत्र के प्रति दृष्टिकोण

जाति व्यवस्था और प्रजातंत्र परस्पर विरोधी मूल्यों पर आधारित है। जाति व्यवस्था में जन्म के आधार पर ही किसी को ऊँचा तथा किसी को नींचा समझा जाता है। एक जाति द्वारा दूसरी जाति का शोषण सामान्य क्रम में होता है। इसके विपरीत प्रजातंत्र तथा समाजवाद समानता एवं न्याय पर आधारित व्यवस्थायें होती है। प्रजातंत्र जैसी वैचारिकी का अस्तित्व परस्पर विरोधी दो व्यवस्थाओं को उत्पन्न करता है। आज स्वस्थ प्रजातंत्र के मार्ग में जाति व्यवस्था बाधक सिद्ध हो रही है। व्यक्ति जाति के संकुचित दृष्टिकोण से प्रभावित होने के लिए विवश है। राष्ट्रीय दृष्टिकोण का कुप्रभावित होना स्वाभाविक है। भारतीय प्रजातंत्र जातिवाद के प्रतिकूल प्रभावों से ग्रस्त है क्योंकि चुनावों में जातिवाद महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। आज ग्रामीण क्षेत्रों में पंचायती राज संस्थाओं के विकास से राजनीति में जाति का प्रभाव बढ़ा है। वर्तमान समय में प्रशासन, सेवाओं तथा चुनाव में जातिगत भावनाओं का सर्वत्र बोलबाला है। निसन्देह यह प्रस्थिति स्वस्थ प्रजातंत्र के लिए गंभीर चुनौती है। इसी प्रकार जातिवाद समाजवाद के अनुकूल वांतावरण उपस्थित नहीं कर सकता। प्रस्तुत अध्ययन में, इस संदर्भ में उत्तरदाताओं के विचार प्रश्न पूछकर जानने का प्रयास किया गया है।

चयनित उत्तरदाताओं की जातिवाद को जनतंत्र तथा समाजवाद के अनुकूल मानने के प्रति अवधारणा की जानकारी प्राप्त करने के लिए सभी सूचनाएं निम्न तालिका के माध्यम से प्रस्तुत की गयी है।

तालिका–5.5

जातिवाद व प्रजातंत्र के प्रति दृष्टिकोण

क्रम संख्या	विचार	संख्या	प्रतिशत
1.	अनुकूल	64	26.66
2.	प्रतिकूल	132	55.00
3.	तटस्थ	44	18.33
कुल	–	240	99.99

तालिका-5.5 से स्पष्ट है कि 55 प्रतिशत उत्तरदाताओं का विचार है कि जातिवाद जनतंत्र तथा समाजवाद के अनुकूल नही है। 26.66 प्रतिशत उत्तरदाता यह विचार व्यक्त करते हैं कि प्रजातंत्र तथा समाजवाद के अनुकूल ही जातिवाद है। 18.33 प्रतिशत उत्तरदाता इस संदर्भ में है। अतः उक्त तालिका के आधार पर यह कहना सम्भव है कि अध्ययन क्षेत्र में जातिवाद को जनतंत्र तथा समाजवाद के प्रतिकूल मानने का बाहुल्य है।

सेवाओं में अनुसूचित जातियों के आरक्षण के प्रति दृष्टिकोण

भारत के संविधान में अछूत जातियों को अनुसूचित जातियों के रूप में सूचीबद्ध किया गया है। इसका उद्देश्य अनको भेदभाव शोषण और अपकर्ष से सुरक्षा प्रदान करना है और उनके सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक शैक्षणिक उत्थान के लिए प्राविधानों की व्यवस्था करना है। संविधान ने संस्थाओं में तथा राज्यों की विधान सभा लोक सभा में अनुसूचित जातियों की उचित प्रतिनिधित्व प्रदान करने के लिए आरक्षण की व्यवस्था सुनिश्चित की। यद्यपि संविधान द्वारा अनुसूचित जातियों को हिन्दू जातियों के साथ समानता अर्जित करने के उद्देश्य से सामाजिक भेदभाव और अश्पृश्यता के विरूद्ध प्रावधान किये गये है। परंतु इन वर्गो को जो सामाजिक प्रस्थिति प्रदान की गई है, उसको इतनी सरलता से संवैधानिक प्राविधानों द्वारा समाप्त नहीं किया जा सकता। सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रियाओं और परम्परागत मूल्यों के आधुनिकीकरण द्वारा ही सामाजिक परिवर्तन संाव हो सकता है। भारत के संविधान में आर्थिक राजनैतिक एवं शैक्षणिक क्षेत्रों में अनुसूचित जातियों के उत्थान के लिये प्राविधान किये गये हैं। इन प्राविधानों का ठोस प्रभाव देखा जा सकता है। इससे अनुसूचित जातियों में एक स्तर तक चेतना उत्पन्न हुई है। उच्च एवं मध्यम जातियों ने बेचैनी अनुभव करनी प्रारंभ की है। विभिन्न राज्य सरकारों ने अपने स्तर पर भी अनुसूचित जातियों और अनुसूिचित जातियों के झगड़ों की सूचनाएं बराबर आ रही है। अनुसूचित जातियों में सामाजिक प्रतिरोध का सामना करने का साहस उत्पन्न हो रहा है, क्योंकि अनुसूचित जातियां धर्मनिरपेक्ष मूल्यों

समतावाद और समानता की खोज का प्रतिनिधित्व करने वाली शक्ति है। अनुसूचित जातियों के कुछ अनुभाग जिन्हें संवैधानिक प्राविधानों से पर्याप्त लाभ मिला, अनुसूचित जातियों में 'अभिजात प्रस्थिति' प्राप्त कर गये। अनुसूचित जातियों व पिछड़े वर्गो को राजकीय संवाओं में दिये जाने वाले आरक्षण के प्रति समाज में तीव्र प्रतिक्रिया देखी गई।

दोनों गाँवों के उच्च जाति के सूचनादाताओं का कहना है कि सरकार गरीबों की मदद करे, कोई ऐतराज नहीं, लेकिन हमारी भी सुने। एक तरफ अनुसूचित जाति व पिछड़ी जाति को धन आरक्षण छुट सभी दे रही है, हमको क्या दे रही है। पहले ये लोग गरीब थे, अब हम गरीब हुए जा रहे हैं। हमें भी आरक्षण की सुविधा मिलनी चाहिए। राजकीय सेवाओं में अनुसूचित जातियों व पिछड़े वर्गो को आरक्षण दिये जाने के सम्बन्ध में चयनित उत्तरदाताओं की क्रियात्मक दृष्टिकोण की जानकारी प्राप्त की गई है।

तालिका–5.6
क्या राजकीय सेवाओं में आरक्षण देना उचित है?

क्रम संख्या	आरक्षण	संरचना	प्रतिशत
1.	उचित	166	69.16
2.	उचित नहीं	44	18.33
3.	तटस्थ	30	12.50
कुल	–	240	99.99

तालिका-5.6 से स्पष्ट होता है कि 69.16 प्रतिशत उत्तरदाताओं का विचार है कि राजकीय सेवाओं में पिछड़े व अनुसूचित जातियों को आरक्षण दिया जाता उचित है, जब कि 18.33 प्रतिशत उत्तरदाता का विचार है कि आरक्षण नही दिया जाना चाहिये। 12.50 प्रतिशत उत्तरदाता इस संदर्भ में अपने विचार व्यक्त नहीं किये।

राजनीति में धर्म एवं जाति सम्बन्धी भावनाओं के सम्मिश्रण के प्रति दृष्टिकोण

वर्तमान भारत के संदर्भ में धार्मिक समुदाय और जातिगत भावनाओं का राजनीति में सम्मिश्रण महत्वपूर्ण बन चुका है। राजनेता अपने राजनीतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए धर्म तथा जाति को राजनीति में प्रयुक्त करने लगे हैं। विगत कई चुनावों में धर्म या जाति को आधार बनाकर आम चुनाव लड़े गये और लड़े भी जा रहे हैं। चुनाव में सफलता प्राप्त करने वाले राजनैतिक दल प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से धर्म या जाति के नाम पर सफल हो सके। यदि देखा जाय तो धर्म और राजनीति तथा जाति और राजनीति एक दूसरे से सर्वथा भिन्न नहीं है। राजनीति, धर्म एवं जाति का सम्मिश्रण देश और समाज के व्यापक हित में प्रतिकूल सिद्ध हो सकता है। चयनित उत्तरदाताओं के माध्यम से राजनीति में धर्म और जाति सम्बन्धी भावनाओं के सम्मिश्रण के प्रति दृष्टिकोण

की जानकारी प्राप्त करने के उद्देश्य से प्रश्न पूछकर जानकारी प्राप्त की गयी है, जिसे तालिका के माध्यम से दिखाया गया है:

तालिका–5.7

क्या राजनीति में धर्म और जाति सम्बन्धी भावनाओं का सम्मिश्रण उचित है?

क्रम संख्या	समिश्रण	संख्या	प्रतिशत
1.	उचित नहीं है	174	72.50
2.	उचित है	40	16.66
3.	तटस्थ	26	10.83
कुल	–	240	99.99

तालिका-5.7 स्पष्ट है कि चयनित उत्तरदाताओं का 72.50 प्रतिशत का दृष्टि कोण है कि राजनीति में धर्म एवं जाति सम्बन्धी भावनाओं का सम्मिश्रण उचित नही है। 16.66 प्रतिशत उत्तरदाता यह मानते है कि धर्म एवं जाति सम्बन्धी भावनाओं का सम्मिश्रण उचित है।

जाति प्रथा के विघटन के प्रति दृष्टिकोण
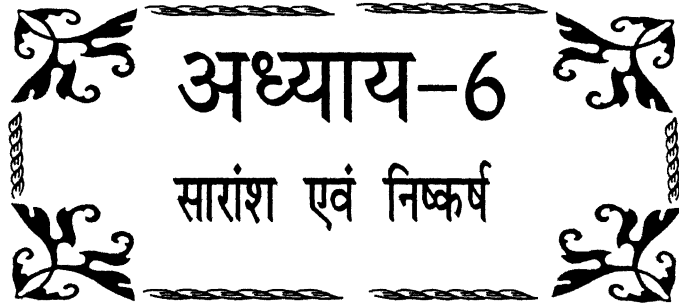
सामाजिक विधानों के परिप्रेक्ष्य में जाति व्यवस्था में होने वाले परिवर्तनों के आधार पर कई लोग कहने लगे हैं कि जाति को निश्चित रूप से समाप्त होना चाहिए तथा कुछ अन्य लोगों की धारणा है कि यह स्वयं समाप्ति की ओर अग्रसर है। इस सम्बन्ध में **आर0 के0 सक्सेना(1960)** ने लिखा है कि जाति प्रथा को समाप्त होना चाहिये, यह कहना और बात है और क्या जाति प्रथा समाप्त हो सकती है, यह कहना और बात। संस्थाओं को विशेषतया ऐसी संस्था को जिसकी शाखाएं हिन्दू समाज के बाहर तक फैली हुई है, निर्मूल समाप्त करने की बात समाजशास्त्र के अधिकार क्षेत्र के बाहर है।[1] जाति प्रथा स्वयं ही समाप्त हो रही है, ऐसा मानना निराधार है। इस सम्बन्ध में **घूर्ये** व **श्रीनिवास** का विचार है कि जहां अंग्रेजी शासन काल में होने वाले परिवर्तनों जो जाति प्रथा के बन्धनों को शिक्षित किया वहीं उन्होंने साथ ही जाति प्रथा को प्रोत्साहन भी दिया। सरकार द्वारा पिछड़े वर्गो व अनुसूचित जातियों को दी जाने वाली सुविधाओं एवं अछूत आंदोलनों ने जाति की जड़ों को मजबूत करने में योग दिया है, तथा जातीय बन्धनों को दृढ़ किया है। उत्तरदाताओं का दृष्टिकोण ग्रामीण क्षेत्रों में जाति प्रथा के विघटन के प्रति तालिका द्वारा प्रस्तुत किया गया है–

तलिका–5.8
क्या जाति प्रथा विघटित हो रही है?

क्रम संख्या	विचार	संख्या	प्रतिशत
1.	विघटन हो रहा है	190	79.16
2.	विघटन नहीं हो रहा है	30	12.50
3.	तटस्थ	20	8.33
कुल	–	240	99.99

तालिका-5.8 से स्पष्ट होता है कि चयनित उत्तरदाताओं की 79.16 प्रतिशत का दृष्टिकोण है कि ग्रामीण क्षेत्रों में जाति प्रथा का विघटन हो रहा है। 12.50 प्रतिशत का मत है कि जाति प्रथा विघटित नहीं हो रही है। 8.33 प्रतिशत उत्तरदाता इस संदर्भ मे तटस्थ है।

उपरोक्त विवेचन के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि वर्तमान में आर्थिक और राजनीतिक परिवर्तनों के कारण व्यक्तियों के व्यवहार व दृष्टिकोण में परिवर्तन आया है। यह परिवर्तन समाज की दिशा को सकारात्मक रूप प्रदान करेगा

अध्याय-6

सारांश एवं निष्कर्ष

अध्याय–6

सारांश एवं निष्कर्ष

जिस प्रकार प्रत्येक प्रारम्भ का अन्त होना निश्चित है, उसी प्रकार प्रत्येक शोध कार्य का एक निष्कर्ष होता है, क्योंकि बगैर निष्कर्ष के कोई भी कार्य अधुरा रहता है। निष्कर्ष की कड़ी उन सभी खोजों से जुड़ी होती है, जो शोध कार्य के दौरान स्थापित किया जाता है। वर्तमान अध्ययन बिहार राज्य के दो ग्रामों नयाभोजपुर काजीपुर में विषमता के विशेष संदर्भ में सामाजिक स्तरीकरण के कुछ पहलुओं तथा उसमें हो रहे परिवर्तनों से सम्बधित है। **इस अध्ययन में अनुसंधानकर्ता ने दोनों क्षेत्रों में आजादी के पूर्व की सामाजिक आर्थिक व राजनैतिक स्थिति के आधार पर वर्तमान में इन स्थितियों में आए परिवर्तनों का उल्लेख किया है। इन परिवर्तनों के फलस्वरूप उच्च, पिछड़ी व निम्न जातियों के बीच अन्तःसम्बन्धों में किस तरह परिवर्तन आया है, विभिन्न जातियों की स्तरीकृत समाज में क्या स्थिति है तथा शक्ति संरचना किस तरह परिवर्तित हुई है, को भी जानने का प्रयास अनुसंधानकर्ता ने किया है।**

वर्तमान शोध प्रबन्ध में उपर्युत्त बातों का ध्यान में रखते हुए इसे अध्ययन की पृष्ठभूमि व परिचय के अतिरिक्त कुल छः अध्यायों के अन्तर्गत विभक्त किया गया है, जिसमें सारांश व निष्कर्ष, उपकल्पनाओं का परीक्षण, उभरते प्रतिमान को शामिल किया गया है। इसके अतिरिक्त संदर्भ ग्रन्थ–सूची व परिशिष्ट भी है, जिसके अन्तर्गत साक्षात्कार अनुसूची, जीवनवृत्त (बायोग्राफी) को रखा गया है। इस अध्याय के अन्तर्गत सभी अध्यायों का सारांश व निष्कर्ष प्रस्तुत किया जा रहा है।

इस शोध प्रबन्ध के **अध्ययन की पृष्ठभूमि** के अन्तर्गत अध्ययनकर्ता ने विषमता के विशेष संदर्भ में सामाजिक स्तरीकरण को परिभाषित करते हुए इसका सैद्धांतिक विवेचन किया है। साथ ही सामाजिक स्तरीकरण के एक प्रमुख स्वरूप जाति व्यवस्था तथा उससे सम्बन्धित जजमानी व्यवस्था व प्रभुजाति की अवधारण का उल्लेख किया गया है।

सामाजिक विषमता समाज द्वारा निर्मित विषमता को इंगित करती है। प्राचीन काल से ही सामाजिक विषमता व्याप्त रही है, और ऐसा कोई समाज न रहा हो, जहां किसी न किसी रूप में सामाजिक विषमता विद्यमान न हो। यद्यपि विषमता सभी समाजों की विशेषता रही है, तथापि एक समूह में, एक संस्कृति से दूसरे संस्कृति में विषमता के स्वरूप व प्रकार में अन्तर पाया जाता है। मानव सभ्यता व संस्कृति के विकास के साथ–साथ सामाजिक विषमता और भी बढ़ती गयी तथा मानव समाज अनेक उच्च और निम्न स्तरों में विभाजित होता गया। सामाजिक स्तरीकरण, सामाजिक विषमता का एक विशिष्ट स्वरूप है। सामाजिक स्तरीकरण समाज या समूह के सदस्यों का विभिन्न आधारों पर उच्च एवं निम्न सोपानों में विभाजन से है। यह जरूरी नहीं है कि जहां सामाजिक विषमता हो वहां सामाजिक स्तरीकरण आवश्यक रूप से पायी जाये, लेकिन जहां सामाजिक

स्तरीकरण पायी जाती हो, वहां अनवार्य रूप से सामाजिक विषमता विद्यमान रहेगी। अतः सामाजिक स्तरीकरण अपने मूल रूप में सामाजिक विषमता का ही परिणाम होती है।

यह सार्वभौमिक सत्य है कि मानव समाज का इतिहास अपने मूल रूप में सामाजिक विषमता का ही इतिहास रहा है, जिसका अस्तित्व किसी न किसी रूप में मानव समाज में प्राचीनकाल से ही रहा है। **कार्ल मार्क्स** ने तो पूरी मानव समाज के इतिहास को ही वर्ग संघर्ष का इतिहास मानकर व्याख्या की है, जिसके मूल में यह विषमता ही विद्यमान है। यह विषमता समाज के सदस्यों को ऊँच-नीच के क्रम में दो वर्गों में बाट देती है। प्रकार्यवादियों का मत है कि सार्वभौमिक आवश्यकता ही किसी व्यवस्था में स्तरीकरण को जन्म देती है। सामाजिक स्तरीकरण प्रकार्यात्मक आवश्यकता है। इनका विचार है कि सामाजिक स्तरीकरण समाज में एकीकरण लाता है, जबकि मार्क्सवादी मानते हैं कि स्तरीकण समाज में एकीकरण करने वाला न होकर समाज में विघटन पैदा करने वाला होता है। नका मानना है कि सामाजिक स्तरीकरण का मुख्य आधार वर्ग संरचना है।

जब भी स्तरीकृत समाज की बात की जाती है तो मुख्य रूप से जो विशिष्ट स्वरूप आता है, वह है जाति के आधार पर स्तरीकृत समाज का निर्माण। जाति व्यवस्था सामाजिक स्तरीकरण की एक अद्वितीय विशेषता रही है। यह एक ऐसी विलक्षण विशेषता रही है, जो कि भारतीय समाज का प्रतिनिधि रही। भारत में पायी जने वाली तीन हजार से भी अधिक जाति ऊँच और निम्न के क्रम में स्तरीकृत है तथा एक दूसरे के मध्य परस्पर सम्बन्ध एक जटिल समाज का निर्माण करते हैं। भारतीय जाति व्यवस्था शताब्दियों से देश में स्तरीकरण का आधारशिला रही है। यह व्यवस्था न केवल हिन्दू समाज में पायी जाती है, अपितु मुस्लिम समाजों में भी पायी जाती है। भारतीय मुसलमानों में हिन्दुओं की वर्णव्यवस्था के अनुरूप ही सामाजिक स्तरीकरण पाया जाता है। मुसलमानों में साधारणतः दो श्रेणियां, ठीक वैसे ही है जैसे हिन्दुओं में ऊँची जातियां और छोटी जातियां। समाजशास्त्रियों की जाति व्यवस्था के विविध पक्षों के अध्ययन में बहुत अधिक रूचि रहीं है, और इसके परिणामस्वरूप ही आज हमारे सम्मुख अनेकों पुस्तकें एवं शोध अध्ययन इस सम्बन्ध में विद्यमान हैं। लेकिन हमारे लिए आज यह अधिक महत्वपूर्ण हैं कि आजादी के पूर्व तक जाति व्यवस्था की सामाजिक संरचना की क्या-क्या विशेषताएं स्थिरता प्राप्त कर चुकी थी और आजादी के बाद व वर्तमान में उन विशेषताओं में क्या क्या महत्वपूर्ण परिवर्तन आया है। इसी बात का अध्ययन प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में अन्य अध्यर्यो में किया गया है।

प्राय: प्रारम्भ से ही जाति सम्बन्धी गतिशीलता की मनाही रही है। निम्नजाति को ऊँची जाति का बनने में या किसी अन्य जाति के व्यक्ति को अपनी से ऊँची जाति के व्यक्ति को अपने से ऊँची जाति के व्यक्ति के साथ खानपान का सम्बन्ध रखने का निषेध रहा है। लेकिन यदि एक व्यक्ति अपनी जाति का परम्परागत व्यवसाय व आचरण रखते हुए ही अपनी आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए बाहर चला जाता है या सम्पन्न जीवन व्यतीत करता है तो उसके मार्ग में कोई बाधा नहीं रह जाती है।

ग्रामीण समाज में जाति व्यवस्था का प्रकार्यात्मक महत्व रहा है। यद्यपि एक गाँव में विभिन्न जातियों के लोग रहते है, तथापि जाति व्यवस्था के सोपानात्मक आधार पर एक दूसरे से प्रकार्यात्मक आधार पर सम्बन्धित रहते हैं। विभिन्न जातियों की इस पारस्परिक निर्भरता को ही **जजमानी व्यवस्था** का नाम दिया गया है। जजमानी व्यवस्था उदग्र सम्बन्धों पर आधारित एक व्यवस्था होती है जिसमें एक जाति दूसरी जाति की आवश्यकताओं की पूर्ति करती है और इसके बदले उसे उचित पारितोषिक, वस्तु के रूप में दिया जाता है। इस व्यवस्था में मुद्रा का विनिमय कम होता है, क्योंकि यह खुली बाजार व्यवस्था नहीं है। जजमान अपने कमीन को समय-समय पर कुछ नकद व अनाज के रूप में भुगतान करता है।

ग्रामीण क्षेत्र में कुछ जातियां विशेष प्रभुत्व रखती है, क्योंकि उसके पास क्षेत्र विशेष में बहुत अधिक कृषि योग्य भूमि होती है, उसकी संख्या अधिक होती है तथा राजनीतिक क्षेत्र में उनकी पहुँच होती है। इन विशेषताओं से युक्त जातियों को **प्रभुजाति** कहा जाता है। भारत के अनेक भागों में प्रभुजाति के उदाहरण देखने को मिलते हैं। दक्षिण भारत के लिंगानुपात, ओक्कालिंगा, रेड्डी, नायद, मराठा, पट्टीदार तथा उत्तर भारत के राजपूत, जाट, गूजर, अहीर प्रभुजाति के उदाहरण है। बिहार में खासकर इन दोनों क्षेत्रों में यादव, कोइरी, मुस्लिम आदि प्रभुजाति के रूप में उभर रहे हैं।

यह प्रभुता केवल गाँव विशेष और क्षेत्र विशेष तक सीमित होती है और प्रभुजाति के लोग केवल ग्रामपंचायत के कार्यकलापों को ही प्रभावित कर पाती हैं। लेकिन जब यह प्रभुता ग्रामों व क्षेत्र की सीमा से निकलकर पूरे क्षेत्र में होता है तो यह राज्य की राजनीति को भी प्रभावित करने लगता है। प्रभुजाति के नेता चतुर व समझदार होते हैं। वे राजनीतिक शक्ति व आर्थिक अवसर प्राप्त करने की भावना रखते हैं। ये आर्थिक व राजनीतिक अवसरों के प्रति सजग रहते हैं, लेकिन सामाजिक दृष्टि से अनुदार होते हैं।

वर्तमान में नवीन परिवर्तनों के कारण परम्परागत प्रभुजाति की चुनौती दी गयी है और अन्य जातियां प्रभुजाति का स्थान ग्रहण कर दही है। जमींदारी प्रथा के उन्मूलन और भूमि सुधार के कारण प्रभुजाति की भूस्वामित्व में कमी आयी है। पंचायती राज व्यवस्था,

निम्न जातियों का चुनाव में आरक्षण तथा उनमें पनपती जागरूकता की भावना, वयस्क-मताधिकार आदि ने प्रभुजाति की शक्ति को क्षीण किया है। बिहार के यादव, कुर्मी, कोइरी आदि जातियां प्रभुजाति के रूप में उभर रही है। इसके अतिरिक्त भारत के अन्य गाँवों में भी परिवर्तन की यह प्रक्रिया देखी जा रही है।

इस शीर्षक के अन्तर्गत इस अध्ययन के मुख्य उद्देश्यों, उपकल्पनाएं, शोध अध्ययन पद्धति (मेथोडालॉजी) व तथ्यों का संकलन, तथ्यों का संगठन आदि आदि का भी उल्लेख किया गया है। इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण भारत में स्तरीकृत समाज का स्वरूप व इसमें आ रहे परिवर्तनों की व्याख्या करना है। साथ ही इस बात का अध्ययन करना है कि इन परिवर्तनों के फलस्वरूप विभिन्न जातियों के बीच सम्बन्धों की व्यवस्था किस प्रकार की है और पिछड़ी व निम्न जातियों की स्तरीकृत समाज में क्या स्थिति है। इन उद्देश्यों का प्राप्त करने के लिए शोधकर्ता ने कुछ उपकल्पनाओं का निर्माण किया तथा इसकी जांच अपने क्षेत्रीय कार्य के दौरान किया।

प्रस्तुत शोध अध्ययन **प्रकार्यात्मक पद्धति** पर आधारित है। इस अध्ययन पद्धति से सामाजिक स्तरीकरण के विभिन्न चरों के बीच सम्बन्ध और तत्सम्बन्धित प्रभावों की चर्चा की गयी है। चूँकि दोनों ग्रामों में सामाजिक विषमता के विशेष संदर्भ में सामाजिक स्तरीकरण में हो रहे परिवर्तन के प्रतिमानों का अध्ययन करना है, अतः इस संदर्भ में ऐतिहासिक पद्धति व तुलनात्मक पद्धति का सहारा लिया गया है। तथ्यों के संकलन हेतु साक्षात्कार अनुसूची, अवलोकन प्रविधि का सहारा लिया गया है। यह उल्लेखनीय है कि हमारा शोधकार्य अनुसूची पर ही निर्भर नहीं है, जैसा कि समाजशास्त्रीय अनुसंधान में होता रहा है। साथ ही मानवशास्त्रीय दृष्टिकोण भी अपनाया गया है।

प्रथम अध्याय में अनुसंधानकर्ता ने दोनों गाँवों का संक्षिप्त परिचय की चर्चा की है। दोनों गाँवों की जनांकिकी विशेषता तथा सामाजिक संरचना का जिक्र किया गया है। दोनों गाँवों की जनांकिकी दृष्टि से महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि दोनों गाँवों में पर्याप्त संख्या में मुस्लिम जनसंख्या निवास करती है। नयाभोजपुर गाँव में कुल जनसंख्या का 42 प्रतिशत मुस्लिम जनंसख्या है, जबकि काजहीपुर गाँव में कुल जनसंख्या का 35 प्रतिशत मुस्लिम जनसंख्या है। इन दोनों गाँवों की मुस्लिम जनसंख्या में पर्याप्त समानता दिखती है। जहां तक परम्परागत जाति व्यवस्था में सबसे ऊपरी स्तर पर आने वाले ब्राह्मण जाति की जनसंख्या का प्रश्न है, इन दोनों गाँवों में पर्याप्त असमानता है। नयाभोजपुर गाँव में ब्राह्मण जाति की जनसंख्या 2,280 है, वहीं काजीपुर गाँव में इनकी जनसंख्या मात्र 52 है। अगर कुल जनसंख्या के जनसंख्यात्मक प्रतिशत के रूप में देखा जाय तो यह क्रमशः 15 प्रतिशत और 1 प्रतिशत है। अर्थात नयाभोजपुर गाँव में ब्राह्मण जाति की जनसंख्या काजीपुर गाँव के ब्राह्मण जाति की संख्या से 15 गुना अधिक है। दोनों गाँवों के सामान्य

वर्ग की जातियों की जनसंख्या में भी पर्याप्त भिन्नता है। नयाभोजपुर गाँव की जनसंख्या में सामान्य वर्ग की जातियों की जनसंख्या 16 प्रतिशत है, जबकि काजीपुर गाँव में इनकी जनसंख्या 20 प्रतिशत है। पिछड़े वर्ग व अनुसूचित जाति की जनसंख्या में पर्याप्त अंतर नहीं है। नयाभोजपुर गाँव में पिछड़े वर्ग की जनसंख्या 32 प्रतिशत अर्थात सामान्य वर्ग की जनसंख्या से दो गुना है, जबकि अनुसूचित जाति की जनसंख्या 10 प्रतिशत है। काजीपुर गाँव में पिछड़े वर्ग की जनसंख्या 47 प्रतिशत है जबकि अनुसूचित जात की जनसंख्या 16 प्रतिशत है। दोनों गाँवों में पिछड़े वर्ग की जनसंख्या की तुलना की जाय तो यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि काजीपुर गाँव में पिछड़े वर्ग की अधिक है। दोनों गाँवों में अनुसूचित जाति की संख्या में भी अंतर है।

दोनों गाँवों की कुल जनसंख्या में पुरूष और महिला की जनसंख्या के संदर्भ में एक महत्वपूर्ण बात सामने आयी है कि नयाभोजपुर गाँव में जहां पुरूष जनसंख्या महिला जनसंख्या की तीन गुना है, वहीं काजीपुर गाँव में पुरूष जनसंख्या, महिला जनसंख्या की करीब दो गुना है। नयाभोजपुर गाँव में पुरूष और महिला जनसंख्या क्रमशः 75 प्रतिशत व 25 प्रतिशत है तथा काजीपुर गाँव की पुरूष व महिला जनसंख्या क्रमशः 65 प्रतिशत और 35 प्रतिशत है।

इन दोनों गाँवों की पुरूष और महिला जनसंख्या के आधार पर, दोनों गाँवों की लिंगानुपात निकाला गया है। नयाभोजपुर गाँव का लिंगानुपात 327 तथा काजीपुर गाँव का लिंगानुपात 692 है, जबकि पूरे बिहार का लिंगानुपात (जनगणना 2001 के अनुसार) 921 है। दोनों गाँवों का लिंगानुपात का तुलनात्मक अध्ययन करने पर एक विशिष्ट बात यह देखने में आयी कि काजीपुर गाँव का लिंगानुपात नयाभोजपुर गाँव की लिंगानुपात से दो गुना से भी ज्यादा है।

नयाभोजपुर व काजीपुर गाँव की सामाजिक संरचना आमतौर पर जाति व्यवस्था पर आधारित है, जहाँ भिन्न भिन्न जातियां निवास करती है तथा जिनमें आपस में प्रकार्यात्मक सम्बन्ध है। दोनों गाँवों में जो जातियां निवास करती हैं, उनमें कुछ जातियां तो दोनों गाँवों में है तथा कुछ जातियां एक गाँव में हैं, तो दूसरी गाँव में नहीं है। काजीपुर गाँव में क्षत्रिय जाति का अभाव है। इन दोनों गाँवों में परम्परागत जातीय सोपान में ब्राह्मण सर्वोच्च स्थिति में है तथा अशपृश्य एवं हरिजन जातियों की स्थिति सबसे निम्न है। इन दोनों गाँवों में सामाजिक स्तर एवं प्रतिष्ठा का निर्धारण जातीय आधार पर ही होता है और सभी जातियां कमोवेश अपनी परम्परागत व्यवसाय के साथ-साथ कृषि व्यवसाय को अपनाये हुये हैं। यहां तक कि मुस्लिम समुदाय भी कृषि के साथ साथ अन्य व्यवसाय भी करते हैं। इन दोनों क्षेत्रों में पिछड़ी जातियां मुख्यतया कृषि पेशा को अपनाये हुण हैं। इस प्रकार निष्कर्ष के तौर पर यह कहा जा सकता है कि इन दोनों

क्षेत्रों में अधिकांश जातियों का अपना एक प्रमुख व्यवसाय है, जो परम्परागत है। इसके अतरिक्त वे अपनी जीविका चलाने के लिए अन्य व्यवसाय को भी अपनाये हुए हैं।

इन दोनों गाँवों की जाति व्यवस्था के संदर्भ में एक महत्वपूर्ण बात देखने को मिलती है कि विभिन्न जातियों के बीच खन-पान के सम्बन्ध में प्रतिबन्ध है। यद्यपि खान-पान व छुआ-छूत सम्बन्धी प्रतिबन्ध कुछ कम हुये हैं, फिर भी इस क्षेत्र के निवासी इन विषयों को लेकर काफी सतर्क रहते हैं।

वर्तमान समय में जाति व्यवस्था की पकड़ कुछ ढीली पड़ी है। इसका मुख्य कारण औद्योगीकरण, नगरीकरण, संचार साधनों का विस्तार, राजनीतिक आंदोलन व जागरूकता आदि है। वर्तमान में आये जाति व्यवस्था में परिवर्तन के फलस्वरूप पेशों के चुनाव में स्वतंत्रता, उच्च जातियों की स्थिति में गिरावट व खान-पान सम्बन्धी प्रतिबन्धों में कुछ कमी आयी है। अतः निष्कर्ष यह नकलता है कि वर्तमान समय में इन गाँवों में जातिव्यवस्था में अनेक परिवर्तन हो रहे हैं, परन्तु इस परिवर्तन की गति धीमी है और आज भी जाति का प्रभाव यहां के लोगों एवं उनके जीवन पर स्पष्ट दिखायी पड़ता है।

दोनों क्षेत्रों में परिवार समाज की मुख्य आधारशिला है। इस परिवार का रूप पितृस्थानीय, पितृवंशीय एवं पितृसत्तात्मक है। पूर्व में इन दोनों क्षेत्रों में संयुक्त परिवार का वर्चस्व प्रायः सभी जातियों में था। परन्तु बढ़ती जनसंख्या एवं नगरीकरण के कारण संयुक्त परिवार टूटकर एकल परिवार का रूप धारण कर लिये हैं।

परिवार की आधारशिला विवाह है। इन दोनों क्षेत्रों में हिन्दुओं और मुस्लिमों की बहुलता के कारण हिन्दू और मुस्लिम विवाह प्रथाओं की प्रधानता है। विवाह को प्रत्येक स्त्री-पुरूष के लिए अनिवार्य समझा जाता है। हिन्दुओं में एक विवाही प्रथा की प्रधानता देखी जाती है, लेकिन मुस्लिमों में बहुपत्नी प्रथा भी देखने को मिलती है। हिन्दुओं में कतिपय जातियों (हरिजन, बिन्द, मल्लाह, बनिया) में बहुपत्नी विवाह के एक रूप द्विपत्नी विवाह प्रथा भी देखने को मिलती है।

अध्ययन हेतु चुने गये दोनों क्षेत्रों में विवाह सामान्यतः अपनी ही जाति के अंदर ही होता है। लगभग 95 प्रतिशत विवाह माता-पिता की इच्छा के अनुसार एवं उन्हीं के द्वारा तय किया जाता है। मात्र 5 प्रतिशत विवाह अपनी मर्जी से अथवा अपने पसंद से किया जाता है। पहले तो इन दोनों क्षेत्रों में बाल विवाह का वर्चस्व था, परन्तु वर्तमान में बाल विवाह की प्रथा कुछ निम्न जातियों तक ही सीमित हैं। इन क्षेत्रों में नातेदारी व्यवस्था अनेक सामाजिक व सांस्कृतिक भूमिकाएं निभाता है। नातेदारी प्रथा ही यह तय करती है कि एक व्यक्ति के लिए विवाह साथी चुनने का दायित्व किस पर है। जीवन

साथी का चयन का क्षेत्र क्या होगा अर्थात यह किन लोगों से विवाह कर सकता है, किसको प्राथमिकता देगा आदि।

नयाभोजपुर और काजीपुर गांव में विभिन्न प्रकार के धर्म, मत एवं सम्प्रदाय प्रचलित है। यह धर्म मुख्यरूप से ग्राम समुदाय को दो भिन्न समुदायों-हिन्दू और मुसलमान में विभाजित करता है। इन दोनों गाँवों में दोनों सम्प्रदायों के लोग साथ -साथ रहते हैं, जो धार्मिक सहिष्णुता और सामुदायिक सौहार्द का परिचायक है।

दूसरे अध्याय में अध्ययन क्षेत्र की स्वतंत्रता पूर्व एवं बाद की सामाजिक आर्थिक व राजनैतिक स्थिति की व्याख्या की गई है। अनुसंधानकर्ता ने अपने अध्ययन के उपरांत यह पाया कि इन दोनों क्षेत्रों में आजादी के पूर्व जातियों की सामाजिक स्थिति व स्तरीकरण शुद्धता व अशुद्धता की कसौटी पर आधारित था। इन दोनों क्षेत्रों में शुद्धता की कसौटियों के आधार पर ब्राह्मण का स्थान सर्वोच्च था तथा शूद्र का स्थान निम्न था।

इन दोनों क्षेत्रों में जाति व्यवस्था की जड़े काफी गहरी एवं प्राचीन है। बिहार प्रदेश के साथ साथ पूरे भारत में खासकर ग्रामीण समाज आज भी जाति व्यवस्था पर आधारित है। यद्यपि इस व्यवस्था में अनेकों कारणों के फलस्वरूप अनेक परिवर्तन आए हैं और अध्ययन क्षेत्र की इससे अछूता नहीं है। अध्ययन क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण बात यह देखने में आ रही है कि जाति के अंदर ही वर्ग पैदा होने लगे हैं और विभिन्न जातियों के व्यक्ति एक वर्ग में सम्मिलित हो रहे हैं। विभिन्न जातियों ने अपना जातीय संगठन बनाकर वर्ग की विशेषताए ग्रहण की है। जातीय संगठनों ने विभिन्न जातियों के कमध्य जातिगत चेतना के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभई है।

वर्तमान में इन दोनों क्षेत्रों में खासकर पूरे बिहार में जातियों संगठनों का गठन एक नवीन लक्षण है। ये जातीय संगठन पंचायत स्तर से लेकर लोकसभा व विधानसभा के चुनावों में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। बिहार राज्य में 'त्रिवेणी संगम' का गठन इस बात को इंगित करता है कि किस प्रकार से बिहार राज्य की तीन प्रमुख पिछड़ी जातियां-कुर्मी, कोइरी व यादव ने अपने हितों की रक्षा हेतु एक मंच का गठन किया। वर्तमान में **एमवाई (MY)** का संगठन बिहार की क्षेत्रीय राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। मुसलमान व यादव मिलकर क्षेत्रीय पार्टी को लाभ पहुँचा रहे हैं।

इन दोनों क्षेत्रों में एक नया परिवर्तन देखने में आ रहा है कि एक नया वर्ग **मिडलिंग क्लास** का प्रादुर्भाव हो रहा है, जो राजनैतिक तथा आर्थिक रूप से मजबूत है। ये इन क्षेत्रों में राजनीतिक व आर्थिक रूप से शक्तिशाली है। ये अधिकांशत: पिछड़ी व अल्पसंख्यक जातियों से सम्बद्ध लोग हैं। इन क्षेत्रों में इनका वर्चस्व बढ़ता जा

रहा है। यह स्थिति इन क्षेत्रों के साथ-साथ पूरे बिहार में भी देखी जा रही है। बिहार में यादव, कुर्मी, कोइरी व मुस्लिम एक मिडलिंग क्लास के रूप में उभर रहे हैं।

इन दोनों क्षेत्रों में आजादी के पहले विभिन्न जातियों के बीच जो शक्ति सम्बन्ध थे, वे आजादी के बाद व वर्तमान में वहीं रहे। विभिन्न जातियों के बच शक्ति सम्बन्ध तेजी से परिवर्तित हो रहे हैं। जातिगत चेतना ने शक्ति सम्बन्ध को परिवर्तित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इस जातिगत चेतना के कारण उच्च व पिछड़ी जातियों के मध्य अन्त:सम्बन्ध में परिवर्तन आया है। आज कोई भी जाति अपने को किसी जाति से नीचा नहीं मानती है। वर्तमान समय में व्यक्ति की सामाजिक स्थिति का निर्धारण जन्म अथवा जाति के आधार पर नहीं हो रहा है। पिछड़ी जातियों एवं अनुसूचित जातियों की स्थिति स्तरीकृत समाज में ऊँचा उठा है। निम्न जातियों में उच्च जातियों का अनुसरण करने व उनके जीवन विधि को अपनाने की प्रवृत्ति कम होती जाती रही है। इसका करण सम्मान और शक्ति के बदलते स्रोत हैं। प्रजातंत्रीकरण भूमि सुधारों आदि के कारण जातियों की पूर्ववर्ती शक्ति का स्वरूप तेजी से बदल रहा है।

नयाभोजपुर व काजीपुर गाँव की अर्थव्यवस्था जाति पर आधारित थी। इन क्षेत्रों में अधिकांश लोग कृषि व परम्परागत व्यवसाय के द्वारा अपना जीवन यापन करते थे। नवीन आर्थिक परिवर्तनों के कारण जातिगत पेशों में परिवर्तन हो रहा है। अब व्यक्तियों में पूर्व व्यवसाय के स्थान पर नये व्यवसाय को अपनाने की प्रवृत्ति बढ़ रही है। चूँकि दोनों अध्ययन क्षेत्र औद्योगीकरण की दृष्टि से काफी पिछड़े क्षेत्र हैं, अत: इन क्षेत्र में व्यवसायिक गतिशीलता बहुतायत में देखने को मिलती है। इन क्षेत्रों में यादव जाति व्यवसायिक गतिशीलता में आगे हैं। यादव जाति के लोग ईट भट्ठा, ट्रक सम्बन्धी व्यवसाय, छड़ सीमेन्ट सम्बन्धी व्यवसाय में तेजी से आ रहे हैं। इसी प्रकार मुस्लिम भी व्यवसायिक गतिशीलता में अग्रणी हैं।

तीसरे अध्याय में दोनों क्षेत्रों में आर्थिक परिवर्तन के प्रतिमान के विषय में अध्ययन किया गया है। वर्तमान में इन दोनों क्षेत्रों में विभिन्न जातियों के व्यवसाय और कार्य पूरी तरह जातिगत नहीं रह गये। वे अपनी जीविका चलाने के लिए अन्य व्यवसायों को अपना रहे हैं। फिर भी इन दोनों क्षेत्रों में कई व्यवसाय व उद्योग धंधे ऐसे हैं, जो अभी भी जाति विशेष के एकाधिकार में है। कुम्हार, नाई, धोबी आदि जातियां मुख्य रूप से अभी भी अपने अपने परम्परागत व्यवसाय में लगे हुये हैं। वर्तमान में ये जातियां खासकर नाई व धोबी अपने परम्परागत पेशों को आधुनिक रूप देकर अर्थात सैलून व लौन्ड्री खोलकर लाभ अर्जन कर रही है। इन क्षेत्रों में खासकर नयाभोजपूर गाँव में ब्राह्मण की संख्या ज्यादा है, और कृषि इनका मुख्य पेशा है। कृषि के अलावा कुछ परिवार अभी भी अपने परम्परागत कार्य-पूजा पाठ कराने से जुड़े हुये हैं। इस जाति में

एक महत्वपूर्ण परिवर्तन यह देखने में आ रहा है कि ये लोग व्यवसाय व व्यापार की ओर अग्रणी हो रहे हैं। कृषि को अब लाभदायक नहीं मान रहे हैं।

चूँकि ये दोनों क्षेत्र कृषि प्रधान क्षेत्र है, अतः इन दोनों क्षेत्रों में व्यवसायिक गतिशीलता देखी जा रही है। यह व्यवसायिक गतिशीलता आर्थिक परिवर्तन के प्रतिमान को इंगित कर रही है। इस आर्थिक परिवर्तन के प्रतिमान को बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण अब यह संभव नहीं रहा कि लोग अपनी परम्परागत पेशों से जुड़े रहे। शिक्षा के प्रति जागरूकता ने भी व्यवसायिक गतिशीलता को बढ़ाया है। हाईस्कूल व इंटरमीडिएट तक शिक्षा पा लेने के बाद लोग छोटे-छोटे उद्योग धन्धों के लिए बैंक से ऋण लेकर विभिन्न उद्योग धन्धों से जुड़ रहे हैं। संचार साधनों के विकास, औद्योगीकरण व नगरीकरण के कारण नवीन पेशे व व्यवसायों का जन्म हुआ है, जिसके फलस्वरूप व्यवसायिक गतिशीलता को गति मिली। यद्यपि विभिन्न जातियों में व्यवसायिक गतिशीलता देखी जा रही है, यद्यपि अभी भी इन दोनों क्षेत्रों खासकर नयाभोजपुर में बनिया वर्ग ही व्यवसायों में अग्रणी हैं।

इन दोनों क्षेत्रों में भूस्वामित्व के आधार पर जाति श्रेणी क्रम का अध्ययन किया गया है। नयाभोजपुर गाँव में कृषि याग्य भूमि करीब 700 बीघा है। इन 700 बीघा में सबसे ज्यादा भूमि (350 बीघा) ब्राह्मण जाति के पास है। ब्राह्मण जाति के बाद भूमि मुस्लिम, यादव, कोइरी व बनियां जातियों के पास है। इसी प्रकार काजीपुर गाँव में कृषि योग्य भूमि करीब 250 बीघा है। इन 250 बीघा में सबसे ज्यादा भूमि (85 बीघा) कायस्थ के पास है। कायस्थों के बाद भूमि कोइरी, मुस्लिम, यादव, ब्राह्मण व बनियां जाति के पास है। अतः तुलनात्मक दृष्टि से भूस्वामित्व के आधार पर इन दोनों क्षेत्रों में जाति श्रेणीक्रम के संदर्भ में निष्कर्ष निकलता है कि नयाभोजपुर गाँव में ब्राह्मण, मुस्लिम, यादव, कोइरी व बनिया जाति के पास अधिक भूमि है, जबकि काजीपुर गाँव में कायस्थ, कोइरी, मुस्लिम, यादव व बनिया के पास भूमि अधिक है। इस प्रकार नयाभोजपुर गाँव में जहां ब्राह्मण जाति भूस्वमित्व के आधार पर सबसे आगे है, वहीं काजीपुर गाँव में कायस्थ भूस्वामित्व के आधार पर अग्रणी है। नयाभोजपुर गाँव में जहां भूस्वामित्व प्रारम्भ से ही ब्राह्मण जाति के पास रही है, वहीं काजीपुर गाँव में कायस्थों के पास भूस्वामित्व मुस्लिमों के पास से आया है। अर्थात आजादी के पहले काजीपुर गाँव के मुसलमान भूस्वामित्व में अग्रणी थे। यह बदलते आर्थिक प्रतिमान को इंगित करता है।

इन दोनों क्षेत्रों में कुछ जातियां एक दूसरे से जजमानी व्यवस्था से जुड़ी हुई हैं। इस व्यवसाय में एक जाति दूसरी जाति की सेवा करती है और उसके बदले में उनसे कुछ धन व वस्तुएं प्राप्त करती हैं। इन दोनों क्षेत्रों के कुछ उत्तरदाताओं के सूचना से

यह निष्कर्ष निकलता है कि आज यह व्यवस्था वैसी नहीं रही है, जैसा कि पूर्व में थी। बढ़ती हुई जनसंख्या इस व्यवस्था को कमजोर करने में महत्वपूर्ण कारण हैं।

इस शोध प्रबन्ध के **चौथे अध्याय** में अध्ययनकर्ता ने दोनों क्षेत्रों के राजनीतिक परिवर्तन के प्रतिमान का उल्लेख किया है। इन दोनों क्षेत्रों में यद्यपि भूमि उच्च जातियों के पास अभी भी अधिक है, लेकिन राजनैतिक शक्ति पिछड़े वर्ग व मुस्लिम समुदाय के पास है। नयाभोजपुर गाँव के संदर्भ में एक मुख्य बात यह देखने में आयी है कि यहां हमेशा से ही राजनैतिक शक्ति पिछड़े वर्ग के हाथों में रही है। सिर्फ एक बार 1978 में यह शक्ति ब्राह्मण जाति के पास रही है। वर्तमान में यह राजनैतिक शक्ति मुस्लिमों के पास है। मुस्लिम इस गाँव में एक महत्वपूर्ण राजनैतिक शक्ति के रूप में उभर रहे हैं। ऐसा ही परिवर्तन अध्ययन हेतु चुने गये दूसरे गाँव काजीपुर में देखा जा रहा है। काजीपुर गाँव में मुस्लिम एक राजनैतिक शक्ति के रूप में उभर रहे हैं। इस परिवर्तन का मुख्य कारण पिछड़ी जातियों व मुस्लिमों में जागृत हो रही राजनीतिक चेतना है। राजनीतिक चेतना लाने में इन दोनों क्षेत्रों में ही नहीं बल्कि पूरे बिहार में यादव-मुस्लिम समीकरण कारक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। वर्तमान में पंचायती राजव्यवस्था ने इस जागरूकता को जागृत करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इस संदर्भ में एक महत्वपूर्ण बात यह देखने को मिला कि आजादी के बाद देश में पंचायती राज का पहला कानून बनाने वाला प्रदेश बिहार ही रहा है। देश में सर्वप्रथम 1947 में बिहार पंचायत अधिनियम बना तथा 1948 में पूरे प्रदेश में लागू हुआ। इसी अधिनियम के तहत बिहार में 1952 से 1965 तक हर तीन साल में एक बार पंचायत चुनाव हुये। इन दोनों क्षेत्रों में 1962 में पहला ग्राम पंचायत चुनाव हुआ था। इस चुनाव के फलस्वरूप नयाभोजपुर गाँव में पिछड़ी जाति के स्व0 लक्ष्मी नारायण मैढ़, काजीपुर गाँव में कायस्थ जाति के स्व0 बबन लाल मुखिया निर्वाचित हुये थे। वर्तमान में पिछले वर्ष (2001) जब बिहार में पंचायत चुनाव हुये तो इस चुनाव में व्यापक राजनैतिक परिवर्तन देखने में आए। इस परिवर्तन से नयाभोजपुर व काजीपुर गाँव भी अछूते नहीं रहे। इन दोनों क्षेत्रों में राजनैतिक शक्ति एवं ग्रामीण नेतृत्व में पिछड़ी जातियों व मुस्लिम समुदाय के लोगों का वर्चस्व बढ़ा है। इन जातियों के युवा नेतृत्व के क्षेत्र में आगे आ रहे हैं।

पाँचवे अध्याय में अध्ययनकर्ता ने आर्थिक व राजनैतिक पहलुओं में हुए परिवर्तनों के परिणामस्वरूप व्यवहार के बदलते प्रतिमान का अध्ययन किया है। वर्तमान में व्यवहार के बदलते प्रतिमान के संदर्भ में देखा गया कि नयाभोजपुर व काजीपुर गाँव के विभिन्न जातियों के पारस्परिक सम्बन्धों में परिवर्तन आया है। सम्बन्धों में आए इस परिवर्तन का मुख्य कारण आर्थिक व राजनैतिक परिवर्तन रहा है। इस आर्थिक व राजनैतिक परिवर्तन

ने विभिन्न जातियों के व्यवहार में भी परिवर्तन ला दिया है। विभिन्न जातियों के लोगों के व्यवहारों में समानता की भावना देखी जा रही है। यह बात चयनित उत्तरदाताओं के दृष्टिकोण से और स्पष्ट हो जा रहा है। चयनित उत्तरदाताओं के कुल संख्या 240 के 50.41 प्रतिशत के दृष्टिकोण से यह बात साबित हो रही है।

दोनों गाँवों में जातीय निर्योग्यता सम्बन्धी विचार में भी परिवर्तन आया है और अधिकांश लोगों का विचार है कि जातीय निर्योग्यता जातियों के बीच विभेद स्थापित करने में सहायक रहा है। अतः ऐसे विचारों को दूर करना चाहिए।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में चयनित उत्तरदाताओं की छुआ-छूत के प्रति दृष्टिकोण से यह बात स्पष्ट होती है कि दोनों गाँवों में छुआ-छूत की भावना में कमी आयी है। आर्थिक व राजनैतिक कारक ने इस भावना को कम करने में सहायक रहा है।

दोनों क्षेत्र के लोगों का जातीय भेदभाव के संदर्भ में यह विचार रहा है कि जातीय भेदभाव को दूर किया जाना चाहिये, क्योंकि जातीय भेदभाव समाज के स्वस्थ विकास के मार्ग में रूकावट का कार्य करता है तथा लोगों के बीच कटुता की भावना पैदा करता है। अधिकांश उत्तरदाताओं का विचार है कि ग्रामीण विकास में जातीय भेदभाव बाधक सिद्ध हो रहा है। राजकीय सेवाओं में पिछड़े व अनुसूचित वर्ग के लोगों को आरक्षण दिये जाने के संदर्भ में दोनों क्षेत्र के लोगों में तीव्र प्रतिक्रिया देखी गयी। जिसको आरक्षण की सुविधा मिल रही है, वह इसे इन जातियों के विकास के आवश्यक माना, लेकिन जिनको यह सुविधा नहीं मिल रही है, उनका कहना है कि सरकार इनको मदद करे, कोई एतराज नहीं है, लेकिन हमारा भी ख्याल रखे। एक तरफ पिछड़ी व अनुसूचित जाति को धन, आरक्षण, छूट सभी दे रही है, हमको क्या दे रही है। हमें भी आरक्षण की सुविधा मिलनी चाहिए।

इन विवरणों के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि इन दोनों क्षेत्रों में आर्थिक व राजनीतिक परिवर्तनों के कारण व्यक्तियों के व्यवहार व दृष्टिकोण में परिवर्तन आया है। यह परिवर्तन समाज की दिशा को सकारात्मक रूप प्रदान करेगा।

उपकल्पनाओं का परीक्षण

प्रस्तुत अध्ययन के आरंभ में अध्ययन से सम्बन्धित कुछ सामान्य उपकल्पनाओं का निर्माण किया गया था, जिनका कि अध्ययन के उपरांत साक्षात्कार अनुसूची, सहभागी व असहभागी अवलोकन के माध्यम से एकत्रित किए गए, तथ्यों के आधार पर पुर्नपरीक्षण किया गया।

उपकल्पना–1

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जातीय गतिशीलता में अत्यधिक तेजी आयी है।

प्रत्येक सामाजिक संस्था में समय के साथ-साथ परिवर्तन होता रहता है, क्योंकि परिवर्तन एक स्वाभाविक नियम है। जाति व्यवस्था के सम्बन्ध में भी यही बात सत्य है।समय के

साथ-साथ इसके स्वरूप में भी परिवर्तन आया है। जाति व्यवस्था ने नवीन परिवर्तित परिस्थितियों के साथ सामंजस्य स्थापित किया है। जाति व्यवस्था का नवीन परिवर्तित परिस्थितियों से सामंजस्य स्थापित करना इसकी गतिशीलता को इंगित करता है।

जातीय गतिशीलता में तेजी लाने में नवीन आर्थिक व राजनीतिक परिस्थितियों सहायक रही है। नयाभोजपुर और काजीपुर गांव में अध्ययन के दौरान यह पाया गया कि आर्थिक व राजनैतिक परिवर्तन के प्रतिमानों ने जातीय गतिशीलता को बढ़ाया है। साथ ही जातियों की स्थिति और कार्यो को प्रभावित किया है। इन आर्थिक व राजनैतिक परिवर्तन के प्रतिमानों ने वर्तमान में जाति व्यवस्था के संरचनात्मक एवं संस्थात्मक (सांस्कृतिक) दोनों ही पक्षों में परिवर्तन आया है। आज सामाजिक स्थिति के निर्धारण में जन्म अथवा जाति का महत्व कम और सम्पति, राजनीतिक सत्ता एवं शैक्षणिक योग्यता का महत्व बढ़ा है। जैसा कि इन दोनों क्षेत्रों में अध्ययन के दौरान पाया गया। अतः निःसन्देह स्वतंत्रता प्रति के बाद जातीय गतिशीलता में तेजी आयी है।

<u>उपकल्पना-2 व 5</u>

विभिन्न जातियों में जातिगत चेतना का उदय हुआ है। जाति संगठन ने विभिन्न जातियों के मध्य जातिगत चेतना के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद मौलिक प्रजातंत्रीकरण, सामाजिक संरचना के राजनीतिकरण जागरूकता शिक्षा के कारण विभिन्न जातियों में जातिगत चेतना का उदय हुआ है। जातिगत चेतना जातिय संगठनों के माध्यम से प्रदर्शित हो रही है। विभिन्न जातियों के अपने-अपने जातीय संगठन बन रहे हैं।

वर्तमान में जातीय संगठनों का गठन एक नवीन लक्षण है। जातीय संगठन समान स्तर की जातियों के मध्य एकता स्थापित कर रही है। जातीय संगठन भारत की राजनैतिक प्रक्रियाओं खासकर पंचायत स्तर के चुनावों से लेकर लोकसभा व विधानसभाओं के चुनावों में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। इन जातीय संगठनो के कारण विभिन्न जातियों के बीच राजनैतिक चेतना बढ़ी है। वर्तमान परिस्थितियों के अन्तर्गत महत्व बढ़ गया है, और इस कारण प्रत्येक जाति संगठित होने के लिए प्रोत्साहित हुई है।

पूरे ग्रामीण भारत में एक महत्वपूर्ण बात यह देखने में आ रही है कि विभिन्न जातियों ने अपना जातीय संगठन बनाकर वर्ग की विशेषताएं ग्रहण की है। बिहार प्रदेश में यादव और मुस्लिम जाति का अपना अलग-अलग संगठन हैं, और इन दोनों जातियों के संगठन मिलकर एक नया संगठन **एमवाई** संगठन का निर्माण किया है, जो एक वर्ग वादी रूप है। नयाभोजपुर और काजीपुर गांव में एक नया **मिडलिंग क्लास** का प्रादुर्भाव हुआ है, जो राजनैतिक तथा आर्थिक रूप से मजबूत है। अतः इन क्षेत्रों में यादव,

मुस्लिम, कोइरी एवं मिडलिंग क्लास के रूप मे उभर रहे हैं। जो एक नवीन प्रघटना है। यही मिडलिंग क्लास अपना-अपना जातीय संगठन बनाकर जातिगत चेतना को बढ़ा रहे है। अत: नि:सन्देह विभिन्न जातियों में जातिगत चेतना का उदय हुआ है।

उपकल्पना-3

ग्रामीण स्तरीकरण के आधार जातिव्यवस्था, वर्तमान समय में परिवर्तन की ओर अग्रसर है।

भारत में जातिव्यवस्था सामाजिक स्तरीकरण की एक अद्वितीय व्यवस्था रही है। और बिहार प्रदेश के साथ-साथ पूरे भारत में खासकर ग्रामीण समाज आज भी जाति व्यवस्था पर आधारित है। यद्यपि इस व्यवस्था में अनेक कारणों यथा औधोगीकरण, नगरीकरण, नवीन पेशों का विकास, संचार साधनों का विकास आदि के फलस्वरूप परिवर्तन आये हैं, और अध्ययन क्षेत्र भी इससे अछूता नहीं है।

नयाभोजपुर व काजीपुर गाँव के जातिव्यवस्था में सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तन यह हुआ है कि पिछड़ी, निम्न व अलपसंख्यक जातियों में अपनी दशा सुधारने की लालसा जागृत हुई है।

ये जातियां औधोगीकरण व नगरीकरण से प्रभावित होकर अपनी इच्छा व योग्यतानुसार नवीन पेशों व व्यवसायों को अपना रही है। एक तरह से इनमें व्यवसायिक गतिशीलता बढ़ रही है। तालिका-3.8 से स्पष्ट है कि नयाभोजपुर गांव में, जहां बनिया, यादव, सुनार, कोइरी, मुस्लिम व्यवसायिक गतिशीलता में अग्रणी है, वहीं काजीपुर गांव में यादव, मुस्लिम, कोइरी, बनिया, हरिजन व्यवसायिक गतिशीलता में अग्रणी है। इन दोनों क्षेत्रों में व्यवसायिक गतिशीलता के बढ़ने से विभिन्न वर्णित जातियों के लोगों को समान आर्थिक अवसर प्राप्त हुआ है एवं जाति का व्यवसायिक आधार कमजोर हुआ है। भूमि के स्थान पर मुद्रा का आर्थिक जीवन का आधार बन जाने के कारण इन क्षेत्रों की निम्न जातियों की स्थिति में परिवर्तन आया है। उन पेशों को छोड़ने लगे है, जिनके करने से उन्हें निम्न स्तर समाज में प्राप्त था।

इन दोनों गांवों के जातिव्यवस्था में एक अन्य परिवर्तन यह देखने में आया है कि छुआछूत के भावना में कमी आयी है। आर्थिक व राजनीतिक परिवर्तन इस भावना को कम करने में सहायक रही है। इस प्रकार जातिव्यवस्था में परिवर्तन के आर्थिक व सामाजिक दोनों पक्ष हैं। आर्थिक पक्ष जाति की व्यवसायिक गतिशीलता व अपवित्रता वाले अस्वच्छ कार्यो को छोड़ने से सम्बद्ध है। इन दोनों पहलुओं में परिवर्तन जाति व्यवस्था में परिवर्तनों की पृष्ठभूमि प्रदान करते हैं। उपरोक्त बातों से उपकल्पना की जांच हो रही है।

उपकल्पना–4

जाति में पाये जाने वाले संरचनात्मक परिवर्तन ने सामाजिक गतिशीलता को बढ़ावा दिया है।

व्यवसायिक गतशीलता एवं सामाजिक गतिशीलता एक दूसरे से घनिष्ट रूप से सम्बन्धित है। व्यवसायिक गतिशीलता के अन्तर्गत एक व्यवसाय को छोड़कर दूसरे व्यवसाय को अपना लेता है, जबकि सामाजिक गतिशीलता के अन्तर्गत लोग एक सामाजिक प्रस्थिति से दूसरे सामाजिक प्रस्थिति प्राप्त करता है। वर्तमान में सर्वत्र सामाजिक एवं व्यवसायिक गतिशीलता देखी जा रही है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में होने वाले विभिन्न परिवर्तनों ने एक ओर विभिन्न जातियों की स्थिति और कार्यों को प्रभावित किया तो दूसरी ओर जाति व्यवस्था से सम्बन्धित अनेक प्रतिबन्धों को शिथिल किया है। एक ओर जाति क संरचना में तो दूसरी ओर जातिगत निषेधों एवं मनोवृत्त में परिवर्तन हुए हैं। इससे सामाजिक गतिशीलता को बढ़ावा मिला है।

नयाभोजपुर व काजीपुर गांव में अध्ययन के दौरान ऐसा देखा गया कि जाति व्यवस्था में हुए संरचनात्मक परिवर्तनों के फलस्वरूप सामाजिक गतिशीलता बढ़ी है। निम्न जाति के लोग अपनी परम्परागत व्यवसाय को छोड़कर नवीन पेशों को अपना रहे हैं इससे उनकी प्रस्थिति में सुधार हुआ है। अर्थात ये लोग निम्न प्रस्थिति से उच्च प्रस्थिति की ओर अग्रसर हो रहे हैं, जो सामाजिक गतिशीलता की ही इंगित कर रही है। इस प्रकार प्रस्तुत इस उपकल्पना को अपने अध्ययन क्षेत्र में सही पाया।

उपकल्पना–6

भारत में आज भी जाति व्यवस्था सामाजिक स्तरीकरण का एक प्रमुख प्रकार है जो अन्य प्रकारों के ऊपर हावी है।

निःसन्देह भारत में आज भी जाति व्यवस्था सामाजिक स्तरीकरण का एक प्रमुख प्रकार है। भारतीय सामाजिक व्यवस्था खासकर ग्रामीण सामाजिक व्यवस्था में जाति व्यवस्था एक सार्वभौमिक घटना है। जाति व्यवस्था संरचनात्मक संगठन की एक विशेष किस्म (स्पेसीज) का संकेत करती है जो सर्व भारतीय सभ्यता के चिर स्थायित्व रूप से जुड़ी हुई है।

यद्यपि जाति व्यवस्था परिवर्तन की ओर अग्रसरित हैं और जाति का वह स्वरूप नहीं रह गया है जो सौ वर्ष पचास वर्ष पूर्व था। अनेक कारणों से जाति व्यवस्था परिवर्तित हुई है। इन परिवर्तनों के उपरान्त भी जाति व्यवस्था अब भी पहले के समान महत्वपूर्ण है। व्यवस्था के अन्दर तो परिवर्तनों हो रहे हैं, परन्तु व्यवस्था के बाहर परिवर्तन नहीं हो रहे हैं।

भारतीय ग्रामीण समाज आज भी जाति व्यवस्था पर आधारित है। आज भी जाति व्यवस्था नयाभोजपुर व काजीपुर गांव में सामाजिक प्रस्थिति प्रदान करती है तथा प्रत्येक जाति के अन्य जातियों के साथ सम्बन्धों में वरीयता क्रम में आचार संहिता निर्धारित करती है। साथ ही यह भी देखने को एक समूह रूप में संगठित रहने योग्य बनाती है। इस एकता का लाभ उठाते हुए प्रत्येक जाति अपनी प्रस्थिति को समाज में ऊँचा उठाने का प्रयत्न कर रही है।

भारत में जाति व्यवस्था का सामाजिक स्तरीकरण के एक मुख्य प्रकार के रूप में महत्व इस कारण है कि आज भी जीवन साथी के चुनाव के सम्बन्ध में जाति व्यवस्था एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। ऐसी बात दोनों अध्ययन क्षेत्रों में भी पायी गयी। व्यक्ति को अब भी विवाह और मृत्यु जैसे जीवन के संकटमय समय में सहायता के लिए अपनी जाति पर ही निर्भर रहना पड़ता है। एक ओर अन्तर्जातीय विवाहों में संख्या में वृद्धि देखी जा रही है तो दूसरी ओर जाति में अन्तिर्विवाही नियम के स्थायित्व को भी प्रमाण मिलता है। उपरोक्त तथ्य उपकल्पना की पुर्नपरीक्षण कर रहे हैं।

उपकल्पना–7

पिछड़ी जातियों/अनुसूचित जातियों के आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है तथा संस्कृतीकरण की प्रक्रिया तेज हुई है।

नवीन आर्थिक परिवर्तनों के कारण जातिगत पेशों में परिवर्तन हो रहा है। अब व्यक्ति पूर्व व्यवसाय के स्थान पर नये व्यवसाय को अपना रहा है। औद्योगिक विकास के कारण प्राचीन समय से चले आ रहे परम्परागत व्यवसाय में परिवर्तन की गति तीव्र हो रही है। आज व्यक्ति अपनी इच्छा एवं योग्यता के आधार पर किसी भी पेशों को अपना सकता है। व्यवसायिक क्षेत्र में गतिशीलता बढ़ने से विभिन्न जातियों के लोगों को समान आर्थिक अवसर मिलने लगे हैं एवं जाति का व्यवसायिक आधार कमजोर होता जा रहा है भूमि के स्थान पर मुद्रा का आर्थिक जीवन का आधार बन जाने से पिछड़ी जातियों व अनुसूचित जातियों की स्थिति में परिर्वतन आया है।

नयाभोजपुर व काजीपुर गाँव में व्यवसायिक गतिशीलता अधिक मात्रा में देखने को मिली है। इन दोनों क्षेत्रों में यादव, कोइरी, बनिया, हरिजन, मुस्लिम आदि जातियां व्यवसायिक गतिशीलाता में अग्रणी हैं। यादव जाति के लोग ईट भट्ठा, ट्रक व्यवसाय आदि में अग्रणी हैं। हरिजन व मुस्लिम जातियां इन दोनों क्षेत्रों में चमड़े व्यवसाय में आगे हैं।

जहाँ तक संस्कृतीकरण की बात है, इस संदर्भ में अध्ययन क्षेत्र में यह पाया गया कि व्यवसायिक गतिशीलता के कारण पिछड़े व निम्न जातियों में स्थितिकीय परिवर्तन आया है। इन वर्गो से सम्बन्धित जो लोग व्यवसायिक गतिशीलता में अग्रणी हैं, उनकी

स्थिाति अपने ही वर्ग के अन्य लोगों से ऊपर हैं। इस प्रकार प्रस्तुत उपकल्पना को अध्ययन क्षेत्र में सही पाया गया।

उभरते प्रतिमान

इस शोध प्रबन्ध के अंत में अध्ययनकर्ता ने इन दोनों गाँवों-नयाभोजपुर व काजीपुर- में आर्थिक, राजनैतिक व व्यवहारिक क्षेत्र में उभरते हुए प्रतिमान की चर्चा किया है।

आर्थिक प्रतिमान के संदर्भ में सर्वप्रथम हम पाते हैं कि अब इन गाँवों में आर्थिक प्रतिमान बदल गये है। प्रारंम्भ में यह आर्थिक प्रतिमान कृषि पर आधारित था और यह कृषि ही उस क्षेत्र की आर्थिक प्रतिमान और लोगों के आर्थिक प्रस्थिति को निर्धारित करती थी। अब यह आर्थिक प्रतिमान कृषि पर आधारित नहीं रह गयी है। यद्यपि कृषि अभी भी यहां के लोगों का मुख्य पेशा है क्योंकि यहां का परिवेश मुख्य रूप से ग्रामीण व कृषि पर आधारित है। लेकिन जिस प्रकार पूरे भारत वर्ष में औधोगीकरण का प्रभाव, नगरीकरण का प्रभाव, जनसंख्या विस्फोट व यातायात के साधनों की वृद्धि हुई है, इससे यह क्षेत्र भी अछूता नहीं रहा है। इन सब कारणों के प्रभावस्वरूप इन क्षेत्रों में एक नयी मुद्रा पर आधारित अर्थव्यवस्था का जन्म हुआ है, और इस अर्थव्यवस्था में मुद्रा अर्थात करेंसी का महत्व बढ़ा है। अब यह महत्वपूर्ण नहीं रह गया है कि हमारे पास कितनी भूमि है, और कितना भूमि से पैदा करते रहे हैं। व्यवसायिक गतिशीलता बढ़ने से व्यवसाय व अन्य साधनों के माध्यम से धन का अर्जन अब लोग तेजी से करने लगे हैं। ऐसा इन दोनों क्षेत्रों में देखने में आ रहा है।

इस संदर्भ में एक महत्वपूर्ण बात यह देखने में आ रही है कि इन दोनों क्षेत्रों में ऐसा परिवर्तन महज औधोगीकरण व नगरीकरण के कारण नहीं हुआ है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हो रहे ग्लोबलाइजेशन का भी प्रभाव पड़ा है। ग्लोबलाइजेशन के कारण अब ये ग्रामीण बाजार विश्वव्यापी मुद्रा बाजार का अंग बन चुके हैं। पहले अचल सम्पत्ति एक मापदण्ड होती थी और यह अचल सम्पत्ति ही किसी की भी आर्थिक प्रस्थिति को निर्धारित करती थी। लेकिन अब ग्लोबलाइजेशन के कारण इस अचल सम्पत्ति का महत्व कम हुआ है और चल सम्पत्ति अर्थात करेंसी का महत्व बढ़ा है। यह चल सम्पत्ति जिस परिवार, जिस जाति के पास अधिक है उसका एक नया वर्ग अर्थात एक 'मिडलिंग क्लास' का प्रभुजाति के रूप में उदय हुआ है। यह नया वर्ग आर्थिक व राजनैतिक रूप से सशक्त है। यह सब ग्लोबलाइजेशन का प्रभाव है जो अप्रत्यक्ष रूप से यहां पर देखने में आ रहा है, क्योंकि अब भी यहां ग्रामीण परिवेश है। इस प्रकार सौ-पचास वर्ष पहले इन क्षेत्रों में जो आर्थिक प्रतिमान था अब वह नहीं रहा। इन दोनों क्षेत्रों में मुद्रा पर आधारित आर्थिक प्रतिमान उभर कर सामने आ रहा है।
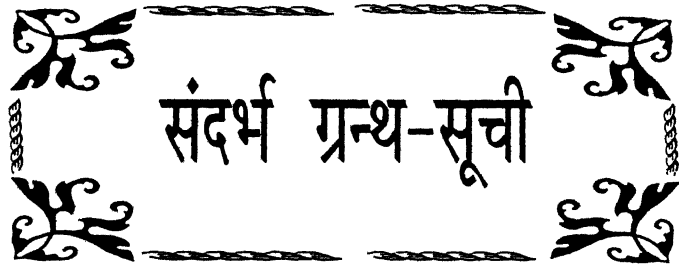
बदलते आर्थिक प्रतिमान का प्रभाव इन क्षेत्रों के राजनैतिक प्रतिमान पर भी पड़ा है।प्रारंभ में इन क्षेत्रों में अशिक्षा, राजनैतिक जागरूकता न होने के कारण लोग वोट के

महत्व के प्रति अनभिज्ञ थे तथा प्रभुत्व वर्ग अपनी मर्जी से वोट डलवा लेता था। अब प्रजातंत्र के विकेन्द्रीकरण व राजनैतिक जागरूकता के कारण लोग वोट के महत्व को समझने लगे हैं। इन दोनों क्षेत्रों में यादव, मुस्लिम, कोइरी, हरिजन राजनैतिक शक्ति के रूप में उभर रहे हैं। इसका प्रमुख कारण पूरे बिहार के साथ-साथ इस क्षेत्र में भी एमवाई समीकरण का एक नये प्रतिमान के रूप में उभरना रहा है। इन दोनों गाँवों में इसका स्पष्ट झलक 23 वर्षो बाद हुए पंचायत के चुनावों में देखने को मिला है। इन दोनों गाँवों में यादव-मुस्लिम गठजोड़ के फलस्वरूप मुस्लिम जाति गाँवों की राजनीति में हावी है। दोनों गाँवों के मुखिया का पद मुस्लिम समुदाय के पास है। ऐसा यह पहली बार इन गाँवों में देखने को मिल रहा है। यह उभरते राजनीतिक प्रतिमान को इंगित कर रहा है।

परिवर्तित हो रहे आर्थिक और राजनैतिक प्रतिमान का स्पष्ट झलक व्यवहार में देखने को मिल रहा है। वे लोग जो निम्न जातियों से विशेष दूरी बनाये रखते थे आज वे ही इन निम्न जातियों से विनम्रता पूर्वक पेश आ रहे हैं। ऐसा इसलिए कि निम्न जाति अपनी रांजनैतिक शक्ति को समझने लगे हैं तथा उच्चजाति भी अपनी क्षीण हो रही राजनैतिक शक्ति को समझने लगा है। उच्च जातियों का निम्न जातियों के प्रति नजरिये में यह आया बदलाव समाज को एक सकारात्मक दिशा प्रदान करेगा।

एक ओर इसकी आलोचना बहुत की जाती रही है कि राजनैतिक ध्रुवीकरण, मंडल कमीशन के लागू होने व अन्य राजनैतिक कारणों से जातिवाद बढ़ा है, जाति संघर्ष बढ़ा है। निःसन्देह बढ़ा है, हलॉकि यह वाद-विवाद का विषय है। लेकिन इसके दूसरे पहलू को देखें तो इस अध्ययन में हम पाते हैं कि इस क्षेत्र में विभिन्न जातियों के बीच अन्तःक्रिया बढ़ा है। आज से 50 वर्ष पहले प्रत्येक जाति जो अपनी सीमित दायरे में रह रही थी, उस सीमित दायरे से बाहर आयी है। अन्तर्जातीय अन्तःक्रिया बढ़ा है। यह ठीक है कि जाति संघर्ष बढ़ा है लेकिन यह भी ठीक है कि जिस अनुपात में जाति संघर्ष बढ़ा है, उससे कई गुना अनुपात में इन गाँवों में विभिन्न जातियों के बीच अन्तःक्रिया देखने को मिल रही है, जो एक सकारात्मक पहलू है।

अन्त में, यह अध्ययन हमें यह बतलाता है कि पहले लोगों के बीच जो अन्तःक्रिया थी वह शुद्ध रूप में जजमानी व्यवस्था के संदर्भ में थी। लेकिन वर्तमान में विभिन्न सामाजिक स्तर पर, राजनैतिक स्तर पर, आर्थिक स्तर पर क्रमशः सामाजिक अन्तःक्रिया, राजनैतिक अन्तःक्रिया, आर्थिक अन्तःक्रिया विभिन्न जातियों के सदस्यों के बीच पहले की अपेक्षा निःसन्देह बढ़ा है और आनेवाले समय के लिए यह एक सकारात्मक रूख है।

संदर्भ ग्रन्थ-सूची

संदर्भ ग्रन्थ सूची (BIBLIOGRAPHY)

Anant, S. Singh 1972: The Changing Concept of Caste in India.

Atal ,Yogesh 1968: The changing Frontier of caste.

Abraham, M.F. 1974: Dynamics of leadership in village India, International Publications, Allahabad.

Beteille , Andre (ed) 1959: Social Inequality, selected readings, Harmondsworth.

1965: Caste, class and power, changing patterns of stratification in a Tanjore village, Berkeley.

1966 closed and open social Stratification in Indian, European Journal of Sociology, vol. vii

1972 Inequality and social change, Delhi Oxford university press.

1974 Six Essays in Comparative sociology, Delhi Oxford university press.

1977 Studies in Agrarian social structure, Oxford university press.

1983 Equality and Inequality, Delhi Oxford university press

Bailey, F. G. 1957 caste and Economic Frontier, manchsester.

1963 Closed Social Stratification in India, European Journal of Sociology.

Benedix R& Lipset 1966 Class, Status and power London :Routledge and Kegan paul.

Bhomic, P.K. 1963 Occupational Mobility and caste Structure of Bengal, Indian Publication, Calcutta.

Bose, N.K. 1967 Caste system in India, Asia Publishing House.

Bottomore, T.B. 1965 Classes in Modern Society,George Allen & Unwin, London.

Cohen, B. S. 1962 The changing status of Depressed caste.

Dumont ,Louis 1966 Homo hierarchicus, essai sur le syseme de Castes, paris.

Das, A.N. 1983 Agrarion unrest and socio economic change in Bihar 1900-1990, manohar publications.

Dube, S.C. 1950 India's Changing villages, Human Factors Community Development, Routledge and kegan Paul ltd. Londan.

1956 Indian Village , Routledge and Kegan Paul , Londan

	1992	Understanding Change: Anthropological and Sociological Perspective, Vikas Publishing House, Pvt. Ltd. ,New Delhi.
Desai, A.R.	1961	Rural India in transition, Popular Book Depot , Bombay.
	1969	Rural Sociology in india, Popular Prakashan, Bombay.
Davis, K. & Moore	1975	Some Principles of stratification, Harpen & Row, Newyork
Dumont, Louis	1960	Coritributions to the Indian sociology.
Dutt, B.N.		Studies in India social Policy.
Durkheim, E	1895	The Rules of sociological Method, Glencoe, Free press.
Grigrson, G.A	1961	Bihar Peasant life ,Bihar Government Press,Patna.
Ghurye, G.S.	1926	Caste, Class and Occupatipon.
Goldthorpe,J.H	1967	Social stratification in Industrial society.
Gupta, Dipankar	1992	Social Stratification, Oxford University Press, Delhi.
Hutton, J.H.	1961	Caste in India, London, Oxford University Press.
Haralambos, M. & Heald, R.M.	1980	Sociology Themes and Perspectives
Joshi, P.C.	1975	Land Reform in India, Bombay, Allied Publishers
Kothari, Rajni	1970	Caste in Indian Politics, New Delhi Orient Longmans.
Karve, Iravati		. The Indian village.
Kupuswami, B.	1992	Social Change in India Konark Publisher private limited, New Delhi,.
Lewis, Oscar	1954	Group Dynamics in north Indian village Planning Commission, Govt of India , New Delhi.
	1958	. Village Life in Northern India, New York
Lopreato& Lewis L.S.	1974	Social Stratification A Reader, Harber and row, New York,.
Lal, A.K.	2001	Social change in post Indepedence India, Rawat publications, New Delhi.
Miller, D.B.	1975	From Hierarchy to stratification, Oxford university Press.
Madan, G.R.	1978	Bharat ke Gramin samaj(Hindi), S. Chand and co, New Delhi.
Marriot, Mc.Kim	1955	Village India; A study in the Little community, the Chicago University Press,.

Mishra, J. N. 1974 Land Reforms in Bihar, Bihar institute of economic Development Patna.

Mishra, N. 1975 Economic Problems of Scheduled Caste of Bihar.

Mazumdar, D.N. 1968 Caste and Communication in an Indian village

Mills, C. W. 1961-68 Rural Leader and the Indian General Elections, Asian Survey.

Mayor, A.C. 1959 The power elite, London,

Oommen, T. K. 1969 Political leadership in Rural India

Ossowski, S. 1963 Class Structure in the Social Conciousness, London.

Prasad, Kamata 1962 Bihar ki Aarthik Pragati (Hindi)

Prabhu, P.H. 1963 Hindu social organisation.

Prasad, N 1956 They Myth of the caste system. Change strategy in a Developing Society ..

Pannikar, K. M. 1955 Hindu society at cross roads

Rosenfeld ,E. 1974 Social Stratification in a Classless Society ,.

Runciman, W.G. 1963 Social science and Political theory, Cambridge..

Srinivas, M .N. 1959 The Dominant Caste in Rampura , American Anthropologists

1962 Caste in modern India and other Essays Asia, Bombay .

1966 Social change in modern India, university of california press.

1969 Social structure Delhi Publication.

Sharma, K.L.(ed) 1999 Social stratification in India, manohar, Delhi.

Sharma, K.L. 1974 The Changing Rural Stratification System, New Delhi, Orient Longman.

Sharma, M. The Politics of Inequality.

Singh ,Yogendra 1977 Social stratification and social change in India Manohar Publication, New Delhi.

1977 The changing patterns of social Stratification in India, Allied Publishers.

1983 Modernization of Indian Tradition,Rawat publications,Jaipur.

1993 Social Change India: Crisis and Resilience, Anand Publication, New Delhi.

Shukla,N.L. 1970 The social structure of an Indian village.

Tumin, M.M.	**1952**	Caste in a Peasant Society, Princeton
	1967	Social Stratification: the Forms and Functions of Inequality, Prentice Hall, New Jersey.
Thorner, D.	**1976**	The Agrarian Prospect in India,Allied Publishers,.
Wiser W. H .	**1936**	The Hindu Jajmani systems Lucknow. Publishing Honer.
Weber, M.	**1968**	Economy and society, New york, Bedminster press.
Young P.V.		Scientific social Survey and Researh.
कार्ल, मार्क्स	**1848**	कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणा पत्र
गुप्ता,मोती लाल	**1984**	भारतीय समाजिक संस्थाएं, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
दीक्षित,पी0 सी0	1963	भारतीय समाज तथा सामाजिक संस्थाएं, रतन प्रकाशन मंदिर, आगरा,
दूबे,एस0 सी0	**1975**	एक भारतीय ग्राम, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली
बोटोमोर, टी0 बी0	1968	समाजशास्त्र (अनुवाद) सामाजिक विज्ञान हिन्दी रचना केन्द्र, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर,
प्रसाद, नर्भदेश्वर	1965	जाति व्यवस्था, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
	1973	मानव व्यवहार तथा सामाजिक व्यवस्था बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना
सक्सेना,आर0 एन0	**1960**	भरतीय समाज तथा सामाजिक संस्थायें, मैकमिलन एण्ड कम्पनी प्रकाशक, बम्बई
हिन्दुस्तान, 25 जनवरी 2001		बिहार में पंचायत चुनाव।
हिन्दुस्तान, 21 जून 2001		क्या बिहार की जनता यही चाहती है?

परिशिष्ट

परिशिष्ट-क

जीवनवृत्त(बायोग्राफी)

चुने हुये सूचनादाताओं का जीवनवृत्त

सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र में जीवनवृत्त का अत्यन्त महत्व है। प्रमुख सूचनादाताओं के जीवनवृत्त के जरिये प्रमाणिक तथ्यों का संकलन संभव होता है। जीवन के विभिन्न पहलूओं का विवरण एक दस्तावेज की तरह होता है, और उसके माध्यम से निष्कर्षों की स्थापना में सुविधा होती है। आधुनिक मानवशास्त्रीय व समाजशास्त्रीय अध्ययनों में जीवनवृत्त का प्रयोग व्यापक रूप में हो रहा है। विशेषकर सामाजिक आर्थिक, शैक्षणिक एवं पारिवारिक पहलुओं के अध्ययन के क्रम में जीवनवृत्त का महत्व बहुत ही ज्यादा है। प्रारंभिक समय में इस प्रविधि का प्रयोग केवल आदिम समाज के अध्ययन के लिए किया जाता था, परन्तु वर्तमान में जटिल एवं आधुनिक समाज के अध्ययन के लिए इस प्रविधि के प्रयोग द्वारा तथ्यों का संकलन किया जा रहा है। अध्ययनकर्ता ने भी वर्तमान अध्ययन हेतु इस प्रविधि का प्रयोग किया है, जिसका उल्लेख इस प्रकार है-

जीवनवृत्त संख्या –1

नाम - महाबीर सिंह
उम्र - 75 वर्ष
जाति - कोइरी
ग्राम - नयाभोजपुर
शिक्षा - बी0 ए0
पेशा - कृषि

मैं नयाभोजपुर गांव का रहने वाला हूँ। मेरा जन्म 1927 में हुआ था। मैं जाति का कोइरी हूँ। मै जबसे होश संभाला तब से यह देख रहा हूँ कि इस गांव में विभिन्न जातियों के बीच कभी भी ऊँच नीच का भाव नही रहा है। सभी जातियों के लोग एक दूसरे को उचित सम्बोधन के माध्यम से पुकारते हैं। परम्परागत जातीय व्यवस्था में ब्राह्मण का उपरी सोपान पर होने के कारण लोग ब्राह्मण का श्रेष्ठ मानते है, लेकिन विगत बीस वर्षो में ब्राह्मणवादी व्यवस्था के प्रति लोगों के विचार में परिवर्तन आया है। ब्राह्मण पहले इस गांव में प्रभुत्व जाति की भुमिका निभाती थी, लेकिन अब वैसा नही रहा है। यादव प्रभुत्व वर्ग के रूप में उभर रहा है। वर्तमान में यादव लोग कृषि कार्य के अलावा ट्रक, भट्ठे सम्बन्धी व्यवसाय करने लगे है, जिसमे इनका दबदबा इस गांव में कायम है। ये लोग राजनीति में भी आगे है। इसके टूटने का मुख्य कारण भूमि पर बढ़ता हुआ दबाव, औधोगीकरण, नगरीकरण व लोगों में बढ़ती हुई व्यक्तिवादिता की भावना है। जजमानी

सम्बन्ध भी धीरे-धीरे कम होती जा रही है। इसका मुख्य कारण बढ़ती जनसंख्या है। मुस्लिम हिन्दू जाति के सम्बन्ध के संदर्भ में मेरा विचार है कि हिन्दू मुस्लिम दोनों मुख्य रूप से आर्थिक सम्बन्धों के कारण एक दूसरे से जुड़े हुए हैं, क्योंकि मुस्लिम जातियों का व्यवसाय चाहे वह कपड़ा व्यवसाय रहा हो या चमड़े का व्यवसाय रहा हो, हिन्दू जाति पर आधारित है। व्यवसाय इन दोनों समुदायों को एक दूसरे के निकट लाने में महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में कार्य करती है। भावना के दृष्टिकोण से मुस्लिम कट्टर सुन्नी है। दोनों समय नमाज पढ़ते हैं। अन्य मुस्लिम देशों के मुसलमानों के प्रति सहानुभूति की भावना रखते हैं। पाकिस्तान क्रिकेट मैच जीतता है तो यहां भी पटाखे छोड़े जाते हैं।

जीवनवृत्त संख्या– 2

नाम	-	सभापति मिश्र
उम्र	-	65 वर्ष
जाति	-	ब्राह्मण
ग्राम	-	नयाभोजपुर
शिक्षा	-	हाईस्कूल
पेशा	-	कृषि

मैं नयाभोजपुर गांव का रहने वाला हूँ। मेरी उम्र करीब 65 वर्ष है। मैं कृषि पेशा से जुड़ा हूँ। 1978 के ग्राम पंचायत चुनाव में मैं गांव का मुखिया चुना गया। इस चुनाव में मुझे सभी जातियों खासकर मुस्लिम समुदाय का जबर्दस्त समर्थन प्राप्त हुआ था। 20-25 वर्ष पूर्व जैसा विभिन्न जातियों के बीच सम्बन्ध था, वह अब नहीं रहा। मुझे याद है कि होली, दशहरा, दीपावली के त्योहारों में एक दूसरे से आत्मीय सम्बन्ध होता था। लोग एक दूसरे के यहां आते-जाते थे। मेरे घर पर मेरे पिता जी, जो अब नहीं रहे, होली के अवसर पर भांग निर्मित शर्बत बनवाते थे तथा सभी लोग आकर पीते थे तथा उनसे आशीर्वाद प्राप्त करते थे। धीरे-धीरे सम्बन्धों में दुराव आता गया। लोग त्योहारों के अवसर पर आना जाना भी बंद कर दिया। इसी तरह मुस्लिम त्योहारों में भी हिन्दू लोग भाग लेते थे। ताजिया जब निकलती थी, तो उसमें हिन्दू भी भाग लेते थे। ताजिया को पूरे गांव में मुख्य चौराहा पर घुमाया जाता था। इस तरह के प्रदर्शन हिन्दू मुस्लिम समुदायों के बीच सौहार्द की भावना पैदा करता था। धीरे-धीरे यह सीमित होता गया तथा अब यह सीमित होकर मुस्लिम मुहल्ले तक ही रह गया है। इसके बावजूद भी इस गांव में दोनों समुदायों के बीच सौहार्द सम्बन्ध है। मेरे दृष्टिकोण में इसका मुख्य कारण दोनों समुदायों का एक दूसरे पर आश्रित हैं। मजदूरी के रूप में मुस्लिम समुदाय के लोग हिन्दू के खेतों में काम करते हैं। हमारे खेतों पर लगातार मुस्लिम समुदाय के लोग ही कार्य करते हैं। मुस्लिम समुदाय के लोग राजनीति के रूप में कार्य भी करते है। जो गरीब मुस्लिम परिवार है वे पूरी तरह हिन्दू जाति पर आश्रित हैं। जजमानी

सम्बन्धों में भी परिवर्तन आया है। जजमानी सम्बन्ध कुछ ही घरों तक सीमित रह गया है। जजमान के कार्य करने के बदले काम करने वाले अब अनाज के स्थान पर नकद पैसा चाहते हैं। ये अपने परम्परागत कार्य जैसे, नाई सैलून खोल कर धोबी लौन्ड्री खोलकर करने में अब ज्यादा रूचि ले रहे है। इन कारणों से जजमानी सम्बन्धों में परिवर्तन देखने को मिल रहा है। जातियों के बीच छुआ-छूत की भावना कम हुई है। इसका कारण शिक्षा है। लेकिन निम्न जातियों के बुजुर्ग लोग इस अब भी अपने व्यवहार में अपनाते है। पंडित जी लोगों को वे यथोचित सम्मान देते है। लेकिन इनके युवा सदस्यों के मनोवृति में परिवर्तन आया है। जातीय परम्परागत व्यवसथा को मैं भी मानता है। जातियों के बीच ऊँच-नीच की भावना हमारी सामाजिक व्यवस्था की मूल में है। इसे तो समाज से खत्म नही किया जा सकता, लेकिन इस परिवर्तन की दौर में ऊँच नीच की भावना कम हुई है। यह गांव व्यवसायिक रूप से विकसित गांव है। व्यवसाय के क्षेत्र में यह गांव शुरू से ही अग्रणी रहा है। पहले यह कार्य केवल वैश्य लोगो तक ही सीमित था। लेकिन अब यह हर जाति करने लगी है हमारे घर में ही मेरा बड़ा लड़का ट्रक व्यवसाय से जुड़ा हुआ है। वर्तमान में ऐसा होना जरूरी भी है। अब कृषि पेशा उतना फायदेमन्द नहीं रह गया है। व्यवसाय के परम्परागत आधार में परिवर्तन आया है। लोग अपने परम्परागत व्यवसाय को करने में हीनता महसूस कर रहे है। साथ ही यह व्यवसाय कुछ जातियों में लाभदायक नही रह गया है।

जीवनवृत्त संख्या–3

नाम	–	सरफराज खाँ
उम्र	–	55 वर्ष
जाति	–	मुस्लिम
ग्राम	–	नयाभोजपुर
शिक्षा	–	बी0 ए0
पेशा	–	राजनीति (डी0 डी0 सी0 डुमरांव क्षेत्र) व बीस सूत्री कार्यक्रम का उपाध्यक्ष

हमारा गांव इस इलाके में एक मिशाल है। कभी भी हिन्दु और मुस्लिम के बीच तनाव देखने में नहीं आया है। दोनों समुदायों के लोगों में झगड़े होते रहते हैं, लेकिन यह झगड़ा कभी साम्प्रदायिक रूप नहीं लिया है। मेरे समझ से इसके मूल में मुख्य कारण दोनो समुदायो के बीच आपसी लगाव की भावना है। इस गांव की एक विशेषता है कि कोई भी जाति का सदस्य क्यों न हो अपने से बड़ो को यथोचित अभिवादन के माध्यम से सम्बन्धों को व्यक्त करता है। चूकि मैं राजनीति से जुड़ा व्यक्ति हूँ और बिहार राज्य सरकार में बीस सूत्री का पद धारण किया हूँ, इसके

बावजूद भी मुझे इस गांव में तथा इस क्षेत्र में पूरी इज्जत मिलता है। लड़कियों के लिए इस गांव में शिक्षा की अलग व्यवस्था नहीं थी, अतः मैने इस क्षेत्र के भूतपूर्व सांसद स्व0 ए0 पी0 शर्मा से अनुरोध कर उनके नाम से ए0 पी0 शर्मा उच्च माध्यमिक विद्यालय खुलवाया। इस स्कूल में दोनों समुदायों की लडकियाँ तामिल हासिल करनें के लिए जाती है। एक बात मैं यह देखता हूँ कि अभी मुस्लिमों में खासकर लड़कियों की शिक्षा के मामले में पिछड़ी हुई है। इसका मुख्य कारण उनमें शिक्षा के प्रति जागरूकता का अभाव है। इनके गार्जियन भी इनको प्रेरित नहीं करते हैं। मुस्लिम समाज में भी हिन्दू समाज की तरह ऊँच-नीच का सोपानक्रम होने के बावजुद धर्म के नाम पर ज्यादा संगठित महसूस करते है। वर्तमान राजनीतिक के संदर्भ में मेरा विचार है कि बिहार में राज्य सरकार अच्छा कार्य कर रही है। इस सरकार के प्रति हमारे समुदाय की सहानुभूति है। इस सरकार ने हममें एक आत्मविश्वास पैदा किया है। हमारे समुदाय के लोग बिहार में अब असुरक्षित महसूस नहीं कर रहे हैं। इस सरकार ने हिन्दू और मुस्लिम समुदायों के बीच की दूरी कम की है। एम वाई गठबन्धन के कारण मुस्लिम समुदाय अब ज्यादा सुरक्षित महसूस कर रहे हैं। इसका प्रभाव नयाभोजपुर गांव के राजनीति में भी देखने को मिल रहा है।

जीवनवृत्त संख्या–4

नाम	–	एमामुद्दीन अन्सारी
उम्र	–	35 वर्ष
जाति	–	मुस्लिम
ग्राम	–	काजीपुर
शिक्षा	–	बी0 ए0 (उर्दू)
पेशा	–	पीर (औलिया)

मैं पीर फकीर हूँ। मेरा काम समूचे क्षेत्र व गांव के लोगों को भलाई करना है। मेरे दृष्टिकोण में सभी समान है। मैं मुसलमान समुदाय के साथ-साथ हिन्दू समुदाय के परिवारों के सदस्यों को झाड़-फूक से इलाज करता है। मैं इस कार्य में झिझक महसूस नही करता। हम भले ही धर्म, सम्प्रदाय और कौम भी लड़ाई लड़ रहे है, लेकिन यह लड़ाई-फशाद हम लोगों के अस्मिता के खिलाफ है। यह तो पृथ्यकतावादी विचार अग्रेजों की देन है। हमारे बीच नफरत पैदा करने में इन्होने महत्वपूर्ण भूमिका निभाया। मेरा विचार हैं कि समस्त हिन्दू परिवार हमारे भाई-बंधु है। मैं जजमानी प्रथा को उचित मान रहा हूँ, क्योंकि इस प्रथा में कुछ जातियां आर्थिकी के आधार पर एक दूसरे से सम्बन्धित होती है।

सामाजिक परिवर्तन के संदर्भ में मेरा विचार है कि परम्परागत मूल्यों में बदलाव से ही परिवर्तन लाया जा सकता है। परम्परागत मूल्य चूंकि समाज में अपनी गहरी जड़ जमा चुके है अतः इन मूल्यों को असानी से परिवर्तित नहीं किया जा सकता, लेकिन यह परिवर्तन परम्परागत मूल्यों और आधुनिक मूल्यों में सामंजस्य स्थापित कर ही परिवर्तन लाया जा सकता है। मै छोटा परिवार में विश्वास रखता हूँ। अल्लाह से मैं यही दुआ मांगता हूँ कि अल्लाह हमें उतना ही दो जितना से मेरा काम चल सके। साथ ही यह भी दुआ मांगता हूँ कि अल्लाह सबका बरकत करें।

जीवनवृत्त संख्या–5

नाम	–	हरिशंकर
उम्र	–	35 वर्ष
जाति	–	हरिजन
ग्राम	–	नयाभोजपुर
शिक्षा	–	बी0 ए0
पेशा	–	अध्यापक

मैं नयाभोजपुर गॉव का रहने वाला हूँ। जहां तक अनुसूचित जातियों के सामाजिक और सांस्कृतिक निर्योग्यताओं की बात है, अब ये जातियां उतनी अधिक ग्रसित नहीं हैं, जितनी पहले हुआ करती थी। इसका कारण इनमें बढ़ती हुई शिक्षा और जागरूकता की भावना है। सामाजिक विधानों ने भी इस भावना को कम करने में योगदान दिया है। जहां तक छुआ–छूत का प्रश्न है इस सम्बन्ध में छूत और अछूत दोनों जातियों का विचार बदला है। अब सवर्ण जातियां छुआ–छूत के मामले में उतनी गंभीर नहीं है। जजमानी प्रथा में गिरावट देखी जा रही है। इसके स्वरूप में परिवर्तन आया है। जजमान और कार्य करने वाले, दोनों के सम्बन्ध अब उतने मधुर नहीं रह गये हैं। बढ़ती मंहगाई इनके बीच सम्बन्धों में कटुता पैदा कर रही है।

ग्रामीण राजनीति में परम्परागत उच्च जाति का महत्व कम हुआ है। बदलती आर्थिक व राजनैतिक परिस्थितियों में निम्न जाति भी नेतृत्व के क्षेत्र में आगे आयी है। आरक्षण के प्रावधान के कारण राजनैतिक व्यवस्था में स्थान सुरक्षित होने से ये जातियां राजनीति में आ रही हैं।

परम्परागत व्यवसाय से अब लोग जुड़ा रहना पसन्द नहीं कर रहे हैं। वे कुछ नया कर दिखाने की सोच रहे हैं। कुछ नया कर दिखाने की सोच उसे आगे बढ़ाने में सहायक हो रही है। इस गॉव के कुछ हरिजन शहरों में जाकर रोजगार करने लगे हैं,

इसके बच्चे शहरों में शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। निश्चित रूप से इस गतिशीलता ने जीवनशैली को बदला है।

जीवनवृत्त संख्या–6

नाम	-	राम बचन पान्डेय
उम्र	-	64 वर्ष
जाति	-	ब्राह्मण
ग्राम	-	नयाभोजपुर
शिक्षा	-	हाईस्कूल
पेशा	-	कृषि

मैं नयाभोजपुर गांव का हूँ। कृषि करके अपने परिवार का पालन पोषण कर रहा हूँ। मेरे पास दस बीघा जमीन है। हम खेती में रात दिन मेहनत करते है, लेकिन अब खेती लाभदायक नही रह गई है।

मेरे विचार से जातिवाद का जहर सरकार, राजनीतिक पार्टियां फैला रही हैं। जाति के आधार पर राजनीति हो रही है। जिस क्षेत्र में जिस जाति के लोग अधिक है, उसी जाति के व्यक्ति टिकट पाते है। आरक्षण की व्यवस्था ने जातियों के बीच दूरी बढ़ाई है। सरकार गरीबों की मदद करे, कोई ऐतराज नही, लेकिन हमारी भी सुने। एक तरफ धन, आरक्षण व अन्य छूट दे रही है। हमको क्या दे रही है। पहले ये लोग गरीब थे, अब हम गरीब हुये जा रहे है।

नयाभोजपुर गाँव में मैं बचपन से ही देख रहा हूँ, विभिन्न जातियों के बीच कटुता की भावना न के बराबर रही है। वर्तमान में कुछ बढ़ी है। इसके बावजूद यह गांव अन्य गांवो की अपेक्षा अभी इस मामले में ठीक है। इस गांव में हिन्दू और मुस्लिमों के बीच भी कटुता नहीं देखी गयी है। इसका कारण रहा है कि मुस्लिम लोग छोटे-मोटे व्यवसाय करते रहे है, और यह व्यवसाय दोनों समुदायों में कटुता की भावना कम करने में सहायक रहा है। इस गांव में कभी भी ब्राह्मण जाति में यह भावना नही रही कि गांव में मुखिया का पद ब्राह्मण ही धारण करे। यही कारण है कि गांव का पहला मुखिया स्वर्णकार जाति के रहे। यहां यह लडाई हिन्दूओं और मुस्लिमों के बीच रही है। अब इस क्षेत्र में मुस्लिम लोग आगे आ रहे हैं। मेरे विचार से संयुक्त परिवार टूट रहे हैं। इसका कारण बढ़ती जनसंख्या और मंहगाई है। व्यक्ति अपनी ही परिवार व बच्चों पर ज्यादा ध्यान दे रहे हैं। परिवार के सदस्यों में कटुता की भावना बढ़ती जा रही है। यही सब कारण संयुक्त परिवार को तोड़ रहे है।

इस्लाम की तालीम देने वाले मुसलमान, शब्द का ठीक से मतलब नहीं समझते हैं। वे सिर्फ यही जानते है कि जो ''इस्लाम को मानता हो'' उसे मुसलमान कहते है, मगर यह गलत है कि जो इस्लाम को मानता हो, वह मुसलमान का अर्थ समझ गया। ''मुसलमान'' (मुसल्लम + इमान) अर्थात जिसका इमान चट्टान की तरह मजबूत और शबनम की तरह पाक हो, उसे मुसलमान कहते हैं। मुहम्मद साहब के पावन ग्रन्थ ''कुरान'' में यह वर्णित नहीं है कि वे किसी दूसरे कौमों से बैर की भावना रखे, बल्कि शबनम की तरह पारदर्शी दिखे। इनका कहना है कि आज हिन्दू धर्म में ''गायत्री महामन्त्र'' का जो भावार्थ है वही इस्लाम के ''अल्ला हो अकबर'' का है।

इन्होंने हिन्दू और मुस्लिम कौमों को इस प्रकार बताया है जैसे एक 'बकरा' जो मय, मैं करता घूमता रहता है और जब उसके स्वाभिमान को एकदम छिन्न-भिन्न कर दिया जाता है तब जाकर उसकी हसरतें, जुनून शान्त होता है। आज वही हिन्दू और मुसलमान कौमें दर्शा रही हैं। इन्होंने अपनी शायरी के जरिये इस प्रकार बताने की कोशिश की है-

'फक्र बकरे ने किया, मेरे सिवा कोई नहीं।
मैं ही मय हूँ इस जहाँ में, दूसरा कोई नहीं।।
जब न मे, मय तर्क की।
बे पाया बे असबाब में।।
फेर दी तब जल्के गरदन।
पै छूरी जल्लाद ने।।
रह गयी ताँते फकत।
मै मय, सुनाने के लिए।।
ले गया नद्दाफ (धुनिया) उसे।
धुनकी बनाने के लिए।।
जर्ब से सोटे के जिस दम
तांत घबराने लगी।।
मय के बदले बस,
तू ही तू की आवाज आने लगी।।

जीवनवृत्त संख्या–9

नाम	–	अन्सू श्रीवास्तव
उम्र	–	27 वर्ष
ग्राम	–	काजीपुर
शिक्षा	–	बी0 ए0 (एल0 टी0)
पेशा		अनौपचारिक शिक्षक

मेरा विचार है कि स्त्रियों में पुरूषोचित गुणों का होना आवश्यक है। इस समय स्त्रियाँ पुरूषों की एक कठपुतली बनकर रह गई हैं। अपराध रोकने के लिए केवल कानून भर बना देने से औरतों का भला नही होने वाला है। बारबार खौफनाक घटनायें इसका उदाहरण है। आम औरतों को जो झेलना पड़ रहा है, वह अवर्णनीय है। क्योंकि यहाँ इस मर्द वादी समाज में प्रतिष्ठित औरतों को भी दोयम दर्जे का नागरिक बताया जाता है। बलात्कार की घटना इस समय पूरे जोर पर है। बात गांव की हो या शहर की, गली की हो या बहुमंजिला इमारत में बने किसी दफ्तर की, औरत को दरअसल अपनी देह बचाने के लिए आस पास के भेड़ियों से हर वक्त, हर दिन जूझना पड़ता है। छेड़–छाड़ जुबान से हो या, अश्लील इशारों से हो या, भद्दे मजाक से औरत यदि इनके विरोध में खड़ी हो जाती है तो उसे बहुत ही तरह की परेशानियों का सामना करना पड़ता है। मेरे विचार से कुछ धटनायें तो ऐसी है, जो पूर्ण रूप से स्त्री जाति को चोट पहुचाने वाली है। क्योकि अब समाज में न्याय दिलाने वाले और न्याय देने वाले भी इस घटिया हरकत को करने से बाज नही आ रहे है।

मेरे विचार से पुरूष अपने को सामाजिक या पारिवारिक भय से खुद को मुक्त समझता हैं। उसे यह अच्छी तरह पता होता है कि बहुत ज्यादा खुड़पेच के बावजूद उसे ऐसी परेशानी तो नहीं झेलनी पड़ती है, जो औरतों को जरा सी भी छेड़–छाड़ के लिए झेलनी पड़ती है।

पुरूषों की यह दलीलें अब तक बिल्कुल सड़ गल चुकी है कि औरतों को इन छोटी–मोटी बातो पर बवेला नही खडा करना चाहिये। ये छोटी–मोटी बातें चूंकि मर्द जाति को सूट करती है। इसलिए औरतों की भलाई इसी में है कि जैसा चल रहा है वैसा चलने दें।

चाहे वह जजमानी व्यवस्था हो, या जातिव्यवस्था हो, इन सब में, दलित जाति, कमीन वर्ग की स्त्रियों को पुराने ढर्रे पर चलने के लिये बाध्य किया जाता है। मैं हमेशा एकल परिवार को वरीयता देती हूँ क्योंकि आज के परिप्रेक्ष्य में एकल परिवार में ही बच्चों और स्त्रियों का समुचित विकास सम्भव है।

जीवनवृत्त संख्या–10

नाम	-	रघुवीर यादव
उम्र	-	45 वर्ष
ग्राम	-	नयाभोजपुर
जाति	-	यादव
शिक्षा	-	5वीं पास
पेशा	-	दुधहा (दूध बेचने वाला)

मैं ग्राम नयाभोजपुर का रहने वाला हूँ। मैने जब से होस संभाला है तभी से मैं अपना पुस्तैनी काम कर रहा हूँ। चूँकि हमारे यहाँ सभी जातियाँ बाभन, बनियाँ, चमार रहती है और सब के यहाँ मेरा आना जाना लगा रहता है। चूँकि पहले तो भेद-भाव बहुत अधिक था। पण्डित लोग हमेशा से चमारों, कहारों, लोहारों आदि का शोषण करते थे। वे अपने लिए हमेशा कुछ अलग की माँग करते थे। लेकिन आज सभी निम्न जातियाँ जागरूक हो गयी है। छोटी जातियाँ अगर खेतों पर काम करने भी जा रही है तो पहले जैसा नही कि जब तक मन करे तब तक काम करना है। बल्कि अब पैसे के अनुसार समय देकर छोटी रकम पर घन्टों के अनुसार काम कर रही है। वह परिवार के लोगों का छोटे परिवारों से सम्पर्क भी बढ़ा है। यादवों की स्थिति इस समय हमाारे यहाँ (गांव में) उच्च होने का कारण उनकी नामजदगी पिछड़े वर्ग में होने के कारण है। अगर कही भी कोई भी शादी, विवाह का शुभ अवसर हो सभी जातियाँ एक दुसरे कामों में हाथ बटाती नजर आ रही हैं। यहाँ सब की संख्या बराबर, सबकी स्थिति ठीक, राजनीतिक पहुच बाकि होने का कारण भेद-भाव न के बराबर रह गया है। मुसलमानों के अल्पसंख्यक वर्ग में हमारे यहाँ होने के कारण उनको भी दबाने वाला काम न करके, उनको सभी सुविधायें उपलब्ध करायी जा रही है।

जीवनवृत्त संख्या–11

नाम	-	राम किशुन
ग्राम	-	काजीपुर
उम्र	-	31 वर्ष
जाति	-	गोड़
शिक्षा	-	हाईस्कूल
पेशा	-	मजदूरी

सरकार द्वारा निम्न वर्ग के लोगों के लिए चलाई जाने वाली प्रत्येक योजनाओं का लाभ हम तक नहीं पहुँच पाता, बल्कि इसका लाभ अन्य लोग ही प्राप्त करते हैं। उच्च वर्ग के लोग चाहे वह हिन्दू हों व मुस्लिम, निम्न वर्गो द्वारा किये जाने वाले प्रत्येक कार्यो में हस्तक्षेप करते हैं। प्रत्येक जातियों में छुआ-छूत आज भी विद्यमान हैं।

हिन्दू जाति में ही उच्च जाति के लोग निम्न जातियों को अछूत मानते हैं। मुस्लिम जाति के लोगों में राष्ट्र भक्त की भावना दिखलाई नहीं देती, बल्कि वे मुस्लिम राष्ट्रों का ही गुड़गान करते रहते हैं। यहाँ पर विभिन्न जातियों वोट के नाम पर बटी हुई है। प्रत्येक जातियों में संयुक्त परिवार देखने को मिलता है। हम दूसरे का खेत लेकर तथा मजदूरी करके गुजर-बसर करते हैं। जजमानी व्यवस्था अभी भी यहां हम देख रहे हैं। लेकिन जजमान लोग पहले की अपेक्षा ज्यादा अनाज व अन्य वस्तुएं नहीं दे पाते हैं।

जीवनवृत्त संख्या–12

नाम	–	वन्दना पाठक
उम्र	–	26 वर्ष
जाति	–	ब्राह्मण
ग्राम	–	नयाभोजपुर
शिक्षा	–	एम0 ए0

भारत एवं इसकी संस्कृति को सहिष्णु एवं सर्वग्राही की संज्ञा प्रदत्त की जाती है। इसके आंचल में सभी धर्मो, जातियों, वर्गो, रंगों इत्यादि के व्यक्तियों को वात्सल्य एवं सम्मानपूर्वक आश्रय प्राप्त हुआ है। इसी का प्रतिफल है कि हमारा देश एवं संस्कृति विविधताओं से परिपूर्ण है। हिन्दू, जैन, बौद्ध तथा सिख आदि धर्मो की जड़े भारत भूमि में ही निहित हैं। शिक्षा के अभाव में पूर्वकाल में जातिवाद की भावना लोगों पर अधिकतर हावी थी। कोई व्यक्ति कितना भी सक्षम हो, किन्तु अगर वह दलित है तो उसे हेय दृष्टि से देखा जाता था। गाँवों में उच्च जातियों की बस्ती अर्थात कुलीनों की बस्ती अलग थी तथा दलितों की बस्ती अलग होती थी, दलित उच्च जातियों की बस्ती में प्रवेश कर जॉय तो उन्हें हेय दृष्टि से देखा जाता था। वह कुलीनों के कुओं, तालाबों आदि का उपयोग नहीं कर सकते थे। पण्डित जी लोगों को समाज में अत्यधिक मान्यता प्राप्त थी।

किन्तु वर्तमान में ऐसा नहीं है। आज हर वर्ग समान रूप से शिक्षित है, तथा उसके विचारों में परिवर्तन आया है। वर्तमान युग में सवर्ण महिला के साथ-साथ दलित महिला भी कंधा से कंधा मिलाकर कार्यालयों में कार्य कर रही है तथा केन्द्र सरकार के आरक्षण की वजह से दलित महिलाओं तथा पुरूषों को ज्यादा आसानी से नौकरी मिल रही है तथा सवर्णो तथा दलितों में आपस में विचारों का आदान-प्रदान होने से जातिवाद की भावना कम हो चुकी है तथा एकता का प्रादुर्भाव हुआ है। आज तो समाज में स्वेच्क्षा से दो परिवारों में अन्तर्जातीय विवाह भी होते हैं। किन्तु आज भी समाज में कुछ ऐसे घृणित विचार वाले व्यक्ति हैं जो अपने लाभ के लिये लोगों में जाति के

नाम पर फूट डालते है। हमें ऐसे लोगों के बहकावे में न आना चाहिए तथा इन अराजक तत्वों से समाज को बचाने का प्रयास किया जाना चाहिए।

जीवनवृत्त संख्या–13

नाम	–	शिवकवल
ग्राम	–	नयाभोजपुर
उम्र	–	85 वर्ष
जाति	–	कोइरी
शिक्षा	–	हाई स्कूल
पेशा	–	कृषि

मै ब्राह्मणवादी व्यवस्था का सख्त विरोधी हूँ और मै उन पंड़ितों से घृणा करता हूँ जो आज भी लोगों को मूर्ख बनाकर अपना उल्लू सीधा करते है। लोगों को गलत सही पढ़ाकर दान दक्षिणां के चक्कर में पडे रहते है। एक तो ये पंडित कुछ मेहनत करते नही, और दूसरों को भी भाग्वादी बना कर आलसी बना देते हैं।

मैं पूजा-पाठ को भी नही मानता और देवी-देवताओं के प्रति एकदम विश्वास नही करता हूँ। मैं अपने लड़के व लड़कियों की शादी–ब्याह पंडितों द्वारा न करा कर स्वयं आर्य समाजी विधि द्वारा कराता हूँ। इससे एक तो समय की बचत होती है साथ ही व्यय भी कम होता है। लेकिन आज मै यह देख रहा हूँ कि ये आर्य समाजी पंडित भी दक्षिणां के रूप में एक निश्चित फीस ले रहे हैं। मैं एक कवि व लेखक की हैसियत से इस संदर्भ में दो लाइन कहना चाहूँगा –

''धर्म के नाम पर धन्धा हो रहा है, सेवा के नाम पर चन्दा हो रहा है।

न जाने क्या हो गया इन्सान को, धन के पीछे अन्धा हो रहा है।''

अन्त में मै यह कहना चाहूँगा कि अगर समाज को बिगड़ने से बचाना है तो इसे ब्राह्मणवादी व्यवस्था से मुक्त करना होगा।

रिशिष्ट- 'ख'

साक्षात्कार–अनुसूची

'ग्रामीण भारत में विषमता के विशेष संदर्भ में सामाजिक स्तरीकरण में हो रहे परिवर्तन के प्रतिमान'

(बिहार राज्य के दो ग्रामों के विशेष सदर्भ में)

प्रस्तुत साक्षात्कार अनुसूची का निर्माण अनुसंधानकर्ता द्वारा आवश्यक तथ्यों को कत्रित करने के लिए किया गया है। यह उल्लेखनीय है कि हमारा शोध कार्य केवल ाक्षात्कार अनुसूची पर ही निर्भर नहीं है, जैसा कि अधिकांश समाजशास्त्रीय अनुसंधानों में ता रहा है।

1.1 उत्तरदाता का नाम -----------------------------------

1.2 उत्तरदाता का ग्राम -----------------------------------

1.3 उत्तरदाता का लिंग व आयु ----------------------------

1.4 उत्तरदाता का जन्म स्थान -----------------------------

1.5 उत्तरदाता का धर्म या जाति ----------------------------

1.6 उत्तरदाता की वैवाहिक स्थिति ---------------------------

1.7 उत्तरदाता का शिक्षा स्तर ------------------------------

1.8 उत्तरदाता का व्यवसाय --------------------------------

1.9 उत्तरदाता का आय (मासिक) ----------------------------

.10 उत्तरदाता का परिवार का स्वरूप -------------------------

.1 परिवार में कुल कितने सदस्य हैं:

दो से अधिक/ तीन से अधिक/ चार से अधिक/ पांच से अधिक

.2 परिवार का मासिक आय कितना है:

i) 1000 - 2000 रूपया

ii) 2000 - 3000 रूपया

(iii) 3000 - 4000 रूपया

(iv) 4000 - 5000 रूपया

(v) 5000 से अधिक रूपया

2.3 परिवार का आय का साधन क्या है:

कृषि/ व्यवसाय/ नौकरी/ मजदूरी/ अन्य कोई

2.4 परिवार का परम्परागत व्यवसाय क्या है:

व्यवसाय/ कृषि/ पूजा-पाठ कराना/ अन्य कोई

2.5 परिवार में महत्वपूर्ण मामलों के सम्बन्ध में किसका निर्णय अंतिम होता है:

(i) गृह स्वामी का

(ii) गृहस्वामिनी का

(iii) बुजुर्गों का

(iv) सभी मिलजुलकर निर्णय लेते हैं

2.6 परिवार में कर्ता की सामाजकि स्थिति क्या है?

पिता/ माता/ बड़ा भाई/ स्वयं/ अन्य रिश्तेदार

2.7 पारिवारिक सम्बन्धों के संदर्भ में सबसे नजदीकी कौन माने जाते हैं:

पिता/ दादा/ भाई/ अन्य

2.8 क्या आपके परिवार में उपलब्ध सुविधाएं पर्याप्त हैं? हाँ/नहीं

यदि नहीं तो किन सुविधाओं की आवश्यकता है

2.9 आपके परिजन आपसे किस प्रकार का व्यवहार पसंद करते हैं:

मित्र/ सहयोगी/ प्रबन्ध/ गृहणी

2.10 क्या आपके परिवार जन नौकरी से संतुष्ट हैं? हाँ/नहीं

2.11 क्या आपके अपने पारिवारिक जीवन के दायित्व को पूर्ण रूपेण निर्वाह कर हाँ/नहीं

पाते हैं?

2.12 क्या आपके परिवार के लोग व रिश्तेदार धार्मिक/वैवाहिक कार्यक्रमों में सम्मिलित होकर गर्व महसूस करते हैं? हाँ/नहीं

अगर नहीं तो क्यों------------------------------------

2.13 संयुक्त परिवार में रहने का क्या आधार है:

चूल्हा/ कुल देवता/ अन्य

2.14 क्या औद्योगीकरण व नगरीकरण के कारण संयुक्त परिवार टूट रहा है? हाँ/नहीं

2.15 क्या औद्योगीकरण व नगरीकरण के चलते आर्थिक ढांचा परिवर्तित हुये हैं?

2.16 क्या औद्योगीकरण, नगरीकरण के चलते सामाजिक परम्परा प्रभावित हुयी है? हाँ/नहीं

3.1 आप विवाह को क्या मानते हैं:

धार्मिक संस्कार/सामाजिक समझौता/अन्य

3.2 क्या परिवार में जीवन साथी के चयन में युवकों/युवतियों की राय ली जाती है? हाँ/नहीं

3.3 क्या आपके परिवार में विवाह के समय पुराने रीति रिवाजों और संस्कारों का पालन किया जाता है? हाँ/नहीं

3.4 क्या आपका परिवार अन्तर्जातीय विवाह को मान्यता देता है? हाँ/नहीं

3.5 क्या आपके परिवार में विधवा को पुनर्विवाह की आज्ञा दी जाती है? हाँ/नहीं

3.6 आप प्रेम विवाह को मान्यता देते हैं? हाँ/नहीं

3.7 क्या आप बाल विवाह से सहमत हैं और उसको उचित मानते हैं? हाँ/नहीं

3.8 क्या आपके परिवार में बाल विवाह हुए हैं? हाँ/नहीं

3.9 आप बाल विवाह को स्त्री/पुरूष के व्याक्तित्व के विकास में कैसा मानते हैं? हाँ/नहीं

3.10 क्या आप बाल विवाह को तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या का एक हां/नहीं

कारण मानते हैं?

3.11 क्या आपके विचार में बाल विवाह निरोधक अधिनियम के प्रभावस्वरूप ग्रामीण क्षेत्र में सामाजिक परिवर्तन आया है? हां/नहीं

4.1 आपके गाँव में आपकी जाति की स्थिति निम्नलिखित दृष्टिकोण से कैसी है:

सामाजिक दृष्टिकोण से/ राजनीतिक दृष्टिकोण से/आर्थिक दृष्टिकोण से/ शैक्षणिक दृष्टिकोण से

4.2 क्या आप दूसरी जातियों के सदस्यों के प्रति समतावादी दृष्टिकोण रखते हैं? हाँ/नहीं

4.3 क्या आप जाति निर्योग्यता के विचार को मान्यता देते हैं? हाँ/नहीं

4.4 क्या आप छुआ-छूत मानते हैं? हाँ/नहीं

4.5 क्या आप जाति द्वारा सम्प्रेरित भेदभाव और ऊँच-नीच को ग्रामीण विकास में बाधा मानते हैं?

4.6 क्या आप जातिवाद को जनतंत्र व समाजवाद के अनुकूल मानते हैं?

4.7 क्या आपके विचार में ग्रामीण क्षेत्र में जाति व्यवस्था टूट रही है? हाँ/नहीं

4.8 आज जातीयता व छुआ-छूत में कुछ हद तक कमी आयी है: हाँ/नहीं

4.9 क्या आप अस्पृश्यता में विश्वास रखते हैं? हाँ/नहीं

4.10 अस्पृश्यता को समाज के लिए आप कैसा मानते हैं:

लाभदायक/हानिकारक

4.11 क्या आप अस्पृश्यता को धर्मशास्त्रों और स्मृतियों की उत्पत्ति मानते हैं? हाँ/नहीं

4.12 क्या आप अस्पृश्यता अधिनियम 1955 से परिचित है? हाँ/नहीं

5.1 आपके पास भूमि कितनी है?

(i) 2-10बीघा

(ii) 10-20बीघा

(iii) 20-30बीघा

(iv) 30 बीघा से अधिक

5.2 क्या आप सभी भूमि पर स्वयं कृषि करते हैं? हाँ/नहीं

अगर नहीं तो किसको देते हैं ------------

5.3 क्या भूमि पर कृषि से आपके परिवार का भरण-पोषण हो जाता है? हाँ/नहीं

5.4 क्या कृषि हेतु कृषक मजदूर आसानी से मिल जाते हैं? हाँ/नहीं

5.5 आप कृषक मजदूर को मजदूरी के रूप में क्या देते हैं?

अनाज/नगद मजदूरी/अन्य वस्तु

5.6 क्या मजदूर आपसे संतुष्ट रहता है? हां/नहीं

5.7 क्या आप गांव के बाहर जाकर मजदूरी करते हैं? हां/नहीं

अगर नही हो, मजदूरी करने के लिए कहां जाते हैं:

दूसरे गांव में/ शहर में/ अन्य जगहों पर

5.8 क्या आप अपने परम्परागत पेशा से संतुष्ट है? हां/नहीं

नही तो क्यों------------------------------

5.9 क्या परम्परागत पेशा से आपके परिवार का भरण पोषण हो जाता है? हां/नहीं

5.10 क्या आप परम्परागत पेशा से हीनता महसूस करते है? हां/नहीं

5.11 क्या आप परम्परागत पेशा के बदले अन्य पेशा अपनाना चाहते है? हां/नहीं

5.12 आप अपने व्यवसाय से संतुष्ट है? हां/नहीं

5.13 क्या व्यवसाय में लगातार ह्रास होता जा रहा है? हां/नहीं

अगर हाँ तो क्या कारण है--------------------------

5.14 क्या आप नौकरी के अतिरिक्त अन्य कोई कार्य करते है? हां/नहीं

5.15 नौकरी करने से क्या आपके परिवार की शिक्षा में प्रगति हुई है? हां/नहीं

5.16 शासन द्वारा दी जाने वाली सुविधाओं का लाभ मिलता है? हां/नहीं

5.17 आपको अनुसूचित जाति के सदस्यों हेतु सरकार द्वारा चलाये जा रहे विभिन्न आर्थिक सहायता कार्यक्रमों का ज्ञान है, यदि हाँ तो क्या आप इसमे सहमति हैं:

5.18 क्या आपको पिछड़ी जाति के लोगों के लिए सरकार द्वारा चलाये जा रहे विभिन्न आर्थिक सहायता कार्यक्रमों का ज्ञान है? हां/नहीं

यदि हाँ तो क्या आप इस प्रकार की व्यवस्था से सहमत है।

5.19 क्या आरक्षण से सामान्य वर्ग के लोगों में बेरोजगारी बढ़ी है? हां/नहीं

5.20 क्या आरक्षण व्यवस्था आपके जीवन स्तर को उन्नत बनाने में सहायक सिद्ध हो सकी है? हां/नहीं

5.21 जजमानी व्यवस्था के विषय में आपको जानकारी है? हां/नहीं

5.22 क्या आप जजमानी व्यवस्था को ग्रामीण अर्थव्यवस्था के लिए उचित मानते हैं? हां/नहीं

5.23 क्या जजमानी वयवस्था कमजोर हो रही है? हां/नहीं

यादि हाँ तो इस व्यवस्था के कमजोर होने के क्या कारण है?

शिक्षा/जनसंख्या/शहरी सम्पर्क

6.1 क्या आपके विचार से राजनैतिक संरचना में परिवर्तन आया है? हां/नहीं

6.2 राजनीतिक संरचना में आये परिवर्तन का क्या कारण है:

(i) लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण

(ii) राजनीतिक जागरूकता

(iii) शिक्षा का प्रसार

6.3 आपके गाँव में पूर्व में राजनीतिक शक्ति किसके हाथों में थी:

उच्च वर्ग/पिछड़े वर्ग/अल्पसंख्यक वर्ग

6.4 वर्तमान में राजनीतिक शक्ति किस वर्ग के हाथ में आयी है

उच्च वर्ग/पिछड़े वर्ग/अल्पसंख्यक वर्ग

6.5 क्या राजनैतिक शक्ति आर्थिक शक्ति पर निर्भर है? हां/नहीं

6.6 क्या आपके गॉंव में आज भी उच्च जातियों के हाथों में शक्ति केन्द्रित है? हां/नहीं

6.7 आपको अपने गॉंव में पहला चुनाव कब हुआ था, इसकी जानकारी है हां/नहीं

6.8 आपको अपने गॉंव के प्रथम मुखिया का नाम याद है? हां/नहीं

6.9 क्या आपके विचार से पिछड़ी जातियों में राजनीतिक चेतना जागृत हुई है? हां/नहीं

6.10 क्या आप पंचायती राज व्यवस्था को सही मानते हैं? हां/नहीं

6.11 पंचायत की कार्य प्रणाली के सम्बन्ध में आपको पूर्ण जानकारी है? हां/नहीं

6.12 क्या पंचायती राज में महिलाओं को आरक्षण देने से उनकी स्थिति में बदलाव आया है? हां/नहीं

6.13 पंचायती राज में दिये गये महिला आरक्षण का उपयोग स्वयं महिला द्वारा न करके उनके पतियों द्वारा किया जा रहा है? क्या यह उचित है?

सामान्य/पूर्णत: उचित/अनुचित/पूर्णत: अनुचित

6.14 क्या आप राजनीति में रूचि रखते हैं? हां/नहीं

6.15 क्या आपने कभी वोट दिया है? हां/नहीं

6.16 क्या राजनीति में जातिगत प्रभाव बढ़ रहा है? हां/नहीं

6.17 यदि हां तो क्या उसे दूर किया जा सकता है? हां/नहीं

6.18 क्या आप राजनीति में बढ़ते अपराधीकरण के विषय में सोचते हैं? हां/नहीं

6.19 यदि हॉं तो क्या इन्हें दूर किया जा सकता है? हां/नहीं

6.20 क्या आप चूनाव को महत्वपूर्ण मानते हैं? हां/नहीं

6.21 राजनीति क्षेत्र से जुड़ी स्त्री को समाज किस रूप में देखता है?
सम्मानजनक/हीनता/अपमानजनक/सामान्य

7.1 क्या आपके गॉव में विभिन्न जातियों के पारस्परिक सम्बन्धों में परिवर्तन हां/नहीं आया है?

7.2 अगर हां तो किस तरह का परिवर्तन आया है?

7.3 क्या जातीय आधार पर भेदभाव समाज के स्वस्थ विकास के मार्ग में हां/नहीं अवरोध का कार्य करता है?

7.4 क्या आप वर्तमान में जातीय आधार पर दी जा रही आरक्षण सुविधा हां/नहीं सहमति है?

7.5 क्या आपके विचार से आरक्षण सुविधा उन व्यक्तियों/वर्गो अथवा समूहों हां/नहीं का मिलनी चाहिये, जिनकी सामाजिक प्रस्थिति निम्न है?

7.6 क्या आपके विचार से आरक्षण का आधार शैक्षणिक होना चाहिए? हां/नहीं

7.7 क्या आरक्षण व्यवस्था ने समाज में समानता को जन्म दिया है? हां/नहीं

7.8 क्या अल्पसंख्यक समुदायों को भी आरक्षण का लाभ दिया जाना हां/नहीं चाहिए?

7.9 क्या आरक्षण व्यवस्था समाप्त कर देना चाहिए? हां/नहीं

8.1 सरकार द्वारा चलाई जा रही ग्रामीण विकास योजनाओं से आप सहमत हैं:

पूर्णतः सहमत/अधिक सहमत/पूर्णतः सहमत

8.2 क्या आपको लगता है कि महिलाओं का शोषण होता है? हां/नहीं

8.3 आपके गॉव की मुख्य समस्या क्या है:

पानी/बिजली/सड़क/अन्य